# आज़ादी की मंज़िलें

[ Stride Toward Freedom का हिन्दी अनुवाद ]


लेखक

मार्टिन लूथर किंग

अनुवादक

सतीशकुमार

मेरी स्नेहमयी पत्नी और सहकर्मिणी
कोरेटा को

# यह कहानी

संयुक्त राज्य अमेरिका के दक्षिणी प्रदेश में रहनेवाले समुदाय के जीवन को बदलनेवाले कुछ वर्षों की कहानी इस किताब में प्रस्तुत की गयी है। उन वर्षों में मॉण्टगोमरी नाम के नगर ने काले और गोरे का भेद-भाव बरतनेवाली वर्ग-व्यवस्था में परिवर्तन लाने के लिए आन्दोलन किया। उस आन्दोलन में भाग लेनेवाले एक व्यक्ति ने अपनी दृष्टि से उस सारे परिवर्तन को प्रस्तुत किया है। इसलिए मॉण्टगोमरी की ऐतिहासिक तथा सामाजिक परिस्थितियों का विवेचन इसमें नहीं है। इसलिए यह पुस्तक एक सीमा तक ही अपने पाँव पसारती है और इसमें व्यक्त विचार अनिवार्य रूप से व्यक्तिगत हैं।

पुस्तक में अक्सर 'मैं' को माध्यम बनाकर कहानी कही गयी है, जब कि कहानी का सही चित्रण 'हम' के द्वारा ही हो सकता है; क्योंकि

पचास हजार नीग्रो लोगों ने अपने हृदय में अहिंसा के सिद्धान्त को अपनाकर मॉण्टगोमरी की कहानी रची।

यह उनकी कहानी है, जिन्होंने प्रेम के शस्त्र से अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ने का अभ्यास किया।

यह उनकी कहानी है, जिन्होंने मानवीय दृष्टि से स्वयं अपना ही मूल्यांकन करना सीखा।

यह उन नीग्रो नेताओं की कहानी है, जिनके सिद्धान्त और विश्वास अलग-अलग थे, पर जो न्याय एवं वास्तविक अधिकारों के लिए एकसूत्र में बँध गये थे।

यह उन संघर्षशील नीग्रो कार्यकर्ताओं की कहानी है, जिनमें बहुत-से प्रौढ़ अवस्था को भी पार कर चुके थे, फिर भी जो इस आन्दोलन को सफल करने के लिए दस-दस, बारह-बारह मील पैदल चलते थे और जिन्होंने रंगभेद के सामने समर्पण करने की अपेक्षा सालभर तक पैदल चलने के कष्ट को बेहतर माना।

यह उन नीग्रो लोगों की कहानी है, जो बहुत गरीब थे, अशिक्षित थे; फिर भी जिन्होंने रंगभेद-विरोधी आन्दोलन के महत्त्व को हृदयंगम कर लिया था।

यह उन वृद्ध स्त्रियों की कहानी है, जिनमें से एक ने कहा : "भले ही मेरे पैर थककर चूर हो गये हैं, पर मेरी आत्मा को सुख मिल रहा है।"

यह उन रंगभेदवादी श्वेतांग नागरिकों की कहानी है, जिन्होंने हर कीमत पर मानवमात्र की समानता का विरोध किया, साथ ही यह उन उदार श्वेतांग नागरिकों की भी कहानी है, जिन्होंने नीग्रो लोगों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर अन्यायपूर्ण रंगभेद का साहस के साथ विरोध किया।

मॉण्टगोमरी, अलबामा
मई, १९५८

—मार्टिन लूथर किंग

# अ नु क्र म

# वापस दक्षिण की ओर

सन् १९५४ की जनवरी के एक शनिवार की ठण्डी दोपहर को मोटरकार द्वारा जॉर्जिया राज्य के अटलांटा नगर से अलबामा राज्य के मॉण्टगोमरी नगर की ओर मैंने प्रस्थान किया। वह जाड़े की ऋतु का एक साफ़ दिन था। मेट्रोपोलिटन ऑपेरा-संगीत की धुनों में से मेरी एक बहुत प्यारी धुन कार के रेडियो पर आ रही थी। सुन्दरता से परिपूर्ण धरती, शोभामय आकाश और उस अपूर्व संगीत में मिलकर मार्ग की लंबाई को, जो एकाकी यात्री के लिए और भी ऊबभरी हो उठती है, आनद-यात्रा के रूप में बदल दिया।

कुछ घंटों के बाद मैं सम्पन्न और उपजाऊ खेतों के अन्दर से अलबामा नदी के उस तीखे घुमाव की ओर गया, जिसके किनारे पर मॉण्ट-

गोमरी बसा है। हालाँकि मैं इस नगर में से पहले भी गुज़रा था, पर वास्तव में मैं इसे पूरी तरह देख नहीं पाया था। अब मुझे अमेरिका के प्राचीनतम नगरों में से एक, इस खूबसूरत नगर में कुछ दिन बिताने का सौभाग्य मिलेगा।

वहाँ पहुँचने पर मेरे एक साथी मुझे डेक्सटर एवेन्यू बैप्टिस्ट चर्च की ओर ले गये, जहाँ मुझे अगली सुबह बोलना था। यह चर्च शहर की मध्यस्थित-बस्ती ( केंद्र-स्थान ) के निकट ही एक सुंदर चौराहे के कोने पर खड़ा था और मज़बूत ईंटों से अमेरिका के 'पुनरुत्थान-युग' में बनाया गया था। ज्यों ही हम चर्च के पास गये, चौराहे के ठीक पार एक प्रभावशाली मोहक और शानदार सफ़ेद इमारत भी मैंने देखी, जो राज्य का सचिवालय था। यह इमारत सन् १८५१ में बनी थी। इसके ऊँचे गुंबदों का मध्यभाग जॉर्जिया की शास्त्रीय स्थापत्य-कला का एक बेहतरीन नमूना है। यहीं पर ७ जनवरी १८६१ में अलबामा राज्य ने संघ से अलग होने का निर्णय किया था और १८ फरवरी को इसी भवन की सीढ़ियों पर जेफर्सन डेविस ने राज्यों के इस समूह के राष्ट्रपति की शपथ ली थी। इसीलिए मॉन्टगोमरी शहर वर्षों से राज्यों के संयुक्तीकरण का पालना कहलाता आ रहा है। यहाँ पर राज्यों का पहला संयुक्त ध्वज बनाया और लहराया गया था। आज भी यहाँ आधुनिक आर्थिक विकास के साथ-साथ बहुत-सी प्राचीन स्मृतियों को कोई भी दर्शक ताज़ा कर सकता है।

डेक्सटर एवेन्यू बैप्टिस्ट चर्च की सीढ़ियों से राज्यों को संयुक्त करनेवाली इस प्रभावपूर्ण यादगार को मुझे आनेवाले वर्षों में बार-बार देखना था। जनवरी महीने की मेरी यात्रा मेरे लिए मॉन्टगोमरी में आकर रहने की भूमिका सिद्ध हुई।

स्कूल में २१ वर्ष तक लगातार रहने के बाद अगस्त १९५३ में मैं पीएच० डी० की उपाधि प्राप्त करने के लिए वहाँ रहने की शर्तों को संतोषजनक रूप से पूरा कर चुका था। अब मुख्य काम अपने प्रबंध

को लिख लेने का ही बचा था। इसी बीच मैंने अनुभव किया कि मेरे लिए यह बुद्धिमानी होगी कि कोई काम ढूँढ़ लूँ, ताकि सितंबर १९५४ तक उस काम पर लग जाऊँ! मासाच्युसेट्स और न्यूयार्क के चर्चों ने मुझे अपने यहाँ आमंत्रित करने की इच्छा जाहिर की थी। तीन कॉलेजों ने भी मुझे बहुत आकर्षक और चुनौतीभरे कामों के लिए आमंत्रित किया था, जिनमें एक था पढ़ाने का काम, दूसरा था एक संस्था के 'डीन' का काम और तीसरा था प्रशासन का काम। मैं इन कामों के संबंध में सोच-विचार के बीच में ही था कि मुझे डेक्सटर एवेन्यू बैप्टिस्ट चर्च के अधिकारियों का एक पत्र मिला, जिसमें यह लिखा था कि उनका चर्च बिना किसी पादरी के सूना पड़ा है और अगर मैं कभी उस ओर जाऊँ तो मेरा प्रवचन अपने चर्च में करवाकर वे बहुत प्रसन्न होंगे। निमंत्रण भेजनेवाले इन अधिकारियों ने मेरे पिताजी और अन्य पादरी मित्रों से मेरे बारे में सुन रखा था। मैंने तुरंत ही उन्हें लिखा कि मैं क्रिसमस की छुट्टियों में अपने घर अटलांटा जा रहा हूँ, इसलिए जनवरी महीने में किसी एक रविवार को मॉण्टगोमरी आकर उनके चर्च में प्रवचन करके मुझे प्रसन्नता ही होगी।

हालाँकि यह चर्च अपेक्षाकृत छोटा था; इसमें आनेवाले सदस्यों की संख्या ३०० के लगभग ही थी। लेकिन समाज में इसका एक महत्त्वपूर्ण स्थान था। अच्छी आमदनीवाले अनेक प्रभावशाली और सम्भ्रान्त नागरिक भी इसके सदस्यों में से थे। इससे भी अधिक महत्त्व की बात यह थी कि इस चर्च में पढ़े-लिखे पादरियों की लंबी परम्परा रही है और देश के कुछ श्रेष्ठ प्रशिक्षित नीग्रो पादरी इस चर्च में रह चुके हैं।

उस शनिवार की शाम को जब मैं प्रवचन करने की तैयारी कर रहा था, तब मैं कुछ चिन्तित और उत्साहित-सा था। हालाँकि मैं इससे पहले अनेक बार प्रवचन कर चुका था और अटलांटा में अपने पिता के चर्च में ४ वर्ष तक सहायक पादरी के रूप में काम करने के कारण तथा लगातार तीन गरमियों में प्रवचन करने का उत्तरदायित्व सफलतापूर्वक

निभा ले जाने के कारण मैं इस काम का अभ्यस्त भी था। लेकिन इस बार मैं अधिक सावधान इसलिए था, क्योंकि मुझे लग रहा था कि यह मेरी परीक्षा हो रही है। मैं श्रोताओं को किस तरह अधिक-से-अधिक प्रभावित कर सकूँ, उसी हिसाब से मेरी तैयारी चल रही थी। परिषद् के श्रोता शिक्षित और बुद्धिजीवी हैं, क्या मैं अपनी विद्वत्ता के प्रदर्शन से उनमें दिलचस्पी पैदा करने का प्रयत्न करूँ? या जैसे मैं आम तौर से ईश्वर-प्रदत्त प्रेरणा पर निर्भर रहते हुए प्रवचन करता हूँ, वैसे ही करूँ? आखिर मैंने दूसरे विचार को ही तरजीह दी। मैंने अपने-आपसे कहा : "मार्टिन लूथर किंग को पीछे रखो तथा ईश्वर को आगे। सब कुछ ठीक होगा। याद रखो कि तुम प्रभु ईसा के उपदेश की बहती हुई धारा का माध्यम हो, न कि मूल स्रोत।"

रविवार को ११ बजे मैं चर्च के मंच पर श्रोताओं की एक बड़ी सभा के सामने प्रवचन कर रहा था। मेरा विषय था : 'परिपूर्ण जीवन के तीन आयाम'। सभा के श्रोता बड़े ग्रहणशील थे। मैंने यह महसूस किया कि प्रवचन के दौरान ईश्वर ने मेरा ठीक तरह से उपयोग किया है। मुझे यह भी लगा कि यह एक बहुत ही अच्छा चर्च है तथा यहाँ पर अनेक चुनौती-पूर्ण सम्भावनाएँ छिपी हैं। उसके बाद दोपहर को चर्च की कमेटी के लोगों ने चर्च की गतिविधियों के बारे में विस्तार से चर्चा की। जब उन्होंने मुझसे पूछा कि अगर वे मुझे यहाँ बुलाना आवश्यक समझें और आमन्त्रित करें तो क्या मैं आ सकूँगा? तब मैंने उनसे कहा कि ऐसे आमन्त्रण पर मैं गम्भीरता तथा हार्दिकता के साथ ध्यान दूँगा। उसके बाद मैं मॉण्टगोमरी से अटलांटा के लिए रवाना हो गया और अटलांटा से विमान द्वारा वापस बोस्टन आ गया।

लगभग एक महीने के बाद मुझे हवाई डाक से एक 'एक्सप्रेस डिलीवरी' पत्र मॉण्टगोमरी से मिला। उसमें लिखा था कि वहाँ की कमेटी सर्वसम्मति से मुझे डेक्सटर एवेन्यू बैप्टिस्ट चर्च का पादरी बनने के लिए आमन्त्रित करती है। हालाँकि मैं यह प्रस्ताव पाकर बहुत प्रसन्न

हुआ, लेकिन मैंने तुरन्त ही इसका कोई उत्तर नहीं दिया; क्योंकि मुझे अगली सुबह प्रवचन करने के लिए डिट्रॉइट जाना था।

यह एक ऐसा विशृंखलित-सा दिन था, जब कि बादल बहुत घने थे और नीचे झुक आये थे। लेकिन ज्यों ही हमारे विमान ने ऊँची उड़ान भरी, मौसम का यह कष्ट दूर हो गया। ज्यों ही मैंने नीचे बादलों की चाँदी जैसी सफेद सतह को झाँका और ऊपर गहरे नीले आसमान की असीमता की ओर निहारा, मेरा दिमाग इस प्रश्न में उलझ गया कि काम के लिए आये हुए इन अनेक प्रस्तावों में से किसे स्वीकार किया जाय। मेरे सामने दिलचस्पी के दो मुख्य क्षेत्र थे। एक तो किसी चर्च का पादरी होना और दूसरा, शिक्षण के काम में जाना। मैं किस रास्ते पर जाऊँ? अगर मैं चर्च का पादरी ही बनना पसन्द करूँ तो क्या वह चर्च दक्षिण का हो, जहाँ काले-गोरे का भेदभाव अत्यन्त दुःखद स्थिति में पहुँचा हुआ है या वह उत्तर के उन दो में से हो, जहाँ से मुझे निमन्त्रण प्राप्त हुए हैं।

जहाँ तक मुझे याद है, मैंने सदैव रंगों के आधार पर चलनेवाले भेदभावों को नापसन्द किया है और अपने बुजुर्गों से इस सम्बन्ध में बहुत ही तीखे सवाल पूछे हैं। जब मैं बहुत छोटी उम्र का था, तभी इस भेदभाव के बारे में मुझे मालूम हुआ। उन दिनों बचपन के मेरे दो अभिन्न गोरे साथी तीन-चार साल तक मेरे साथ निरन्तर खेलनेवालों में से थे। उनके पिता अटलांटा में हमारे घर के ठीक सामने एक दूकान चलाते थे। एक दिन अचानक मैंने एक परिवर्तन देखा। जब मैं उन साथियों को लेने के लिए सड़क के पार उनके घर गया तो उनके अभिभावकों ने मुझसे कहा : "ये बच्चे तुम्हारे साथ नहीं खेलेंगे।" यद्यपि अभिभावकों ने मेरे साथ कोई दुर्व्यवहार नहीं किया, पर मैं इसका कारण नहीं समझ सका और तब आखिर मैंने इस संबंध में अपनी माँ से सारी बात पूछी।

प्रत्येक अभिभावक को कभी न कभी अपने बच्चों को जीवन के तथ्य समझाने की समस्या का सामना करना ही पड़ता है। इसी तरह से

हर नीग्रो अभिभावक को अपने बच्चों को रंग-भेद सम्बन्धी तथ्य बताने पड़ते हैं। मेरी माँ ने मुझे गोद में लेकर यह समझाना शुरू किया कि किस तरह हमारे देश में गुलाम पहले दास-परम्परा चलती थी और फिर गृह-युद्ध ( सिविल वार ) के साथ किस तरह उसका अन्त हुआ। मेरी माँ ने मुझे यह भी बताया कि दक्षिण में रंगभेद के आधार पर सारा काम चलता है। स्कूल, होटल, थियेटर, मोहल्ले आदि सभी रंगों के आधार पर अलग-अलग बने हुए हैं। पानी के नलों पर इस बात की सूचना देनेवाले साइनबोर्ड लगे रहते हैं कि कौनसे स्थान गोरे लोगों के लिए हैं और कौनसे काले लोगों के लिए। यह भेदभाव कोई स्वाभाविक विधान नहीं है, बल्कि मनुष्यकृत सामाजिक नियम है। इसके बाद उसने ये शब्द कहे, जो लगभग प्रत्येक नीग्रो को, इसके पहले कि वह अपने प्रति होनेवाले अन्याय को समझ भी सके, आवश्यक रूप से सुनने पड़ते हैं : "तुम भी उतने ही अच्छे हो, जितना कि कोई दूसरा।"

मेरी माँ एक सफल पादरी की पुत्री होने के कारण अपेक्षाकृत अधिक आरामदेह वातावरण में पली थी। वह अच्छे-से-अच्छे स्कूल और कॉलेज में पढ़ने के लिए भेजी गयी थी और रंगभेद के निकृष्ट रूप से भी बचायी गयी थी। लेकिन बँटाई पर खेती करनेवाले किसान के पुत्र होने के कारण मेरे पिताजी को रंगभेद की नृशंसता का शिकार होना पड़ा था और उस अन्याय का बदला भी वे जल्दी ही चुकाने लगे थे; क्योंकि उनकी निर्भीक ईमानदारी, बलिष्ठ शरीर तथा तेजस्वी पुरुषत्व के कारण उनकी बातें लोगों का ध्यान सदैव आकृष्ट कर लेती थीं।

बचपन की एक घटना मुझे याद है : जब मैं पिताजी के साथ शहर की एक जूतों की दुकान पर गया था। दुकान में लगी हुई कुर्सियों की अगली पंक्ति में खाली स्थान पर हम बैठ गये। कुछ देर बाद एक गोरा युवक आया और उसने धीरे से हमें कहा : "मुझे आपकी सेवा करके बड़ी खुशी होगी, अगर आप यहाँ से उठकर पीछे की बेंचों पर चले जायँ।"

मेरे पिताजी ने कहा : "इन कुर्सियों में भी तो कोई बुराई नहीं है। हम यहीं पर बड़े आराम से हैं।"

"मुझे अफसोस है!" उस युवक ने कहा : "लेकिन आपको यहाँ से हटना ही होगा!"

"या तो हम यहीं बैठकर जूते खरीदेंगे" मेरे पिताजी ने प्रत्युत्तर दिया : "या फिर जूते खरीदेंगे ही नहीं!" उसके बाद पिताजी ने मेरा हाथ पकड़ा और हम दूकान से बाहर आ गये। यह पहला अवसर था, जब मैंने पिताजी को इतना क्रुद्ध देखा। मुझे अब भी ज्यों का त्यों याद है, जब कि सड़क पर चलते हुए पिताजी ने कहा था : "मुझे इसकी परवाह नहीं कि कब तक मुझे इस भद्दी परम्परा के साथ जीना पड़ेगा! पर मैं इस परम्परा को कभी स्वीकार नहीं करूँगा।"

और सचमुच उन्होंने कभी सिर नहीं झुकाया। मुझे याद है वह घटना, जब हम कार से कहीं जा रहे थे और अचानक ही गलती से कार रोकने के निशान को हम पार कर गये। तब एक सिपाही ने आकर हमें रोका और कहा : "ए लड़के, पीछे लाओ गाड़ी को और मुझे अपना 'लाइसेंस' दिखाओ।" मेरे पिताजी ने गुस्से से भरकर उपेक्षाभरे शब्दों में कहा : "मैं 'लड़का' नहीं हूँ!" मेरी ओर इशारा करते हुए उन्होंने कहा : "यह एक 'लड़का' है और मैं एक 'आदमी' हूँ! जब तक तुम अच्छी तरह बात नहीं करोगे, मैं तुम्हारी एक नहीं सुनूँगा।"

सिपाही घबरा गया और उसने जल्दी-जल्दी अभियोग का टिकट लिखा तथा झटपट हमें छोड़कर चला गया।

मेरे जन्म के पहले से ही नीग्रो यात्रियों पर हुए एक निर्दय प्रहार को देखने के कारण क्रुद्ध होकर पिताजी ने सिटी बस में यात्रा करना ही छोड़ दिया था। उन्होंने अटलांटा के स्कूल-अध्यापकों की तनख्वाहों में समानता लाने के लिए किये गये संघर्ष का नेतृत्व किया था और अदालतों की 'लिफ्ट' में चलनेवाले भेदभाव के विरुद्ध बगावत की थी। एबेंजर

बैप्टिस्ट चर्च के पादरी होने के नाते उस चर्च के लगभग चार हजार श्रोताओं पर उन्होंने एक जबरदस्त प्रभाव बना रखा है और शायद गोरे लोगों का आदर भी प्राप्त किया है। जो भी हो, ऐसे तनावपूर्ण वातावरण के बावजूद किसी हालत में उन पर शारीरिक हमला अब तक नहीं हुआ, जो कि हम बहन-भाइयों के लिए एक आश्चर्यभरा तथ्य है।

ऐसी जाग्रत परम्परा में यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि मैंने भी रंगभेद से नफरत करना सीखा। यह रंगभेद तार्किक और नैतिक, दोनों दृष्टियों से गलत है। अपने किशोर वय में भी मेरा मन यह स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होता था कि मुझे बस और रेल में उस स्थान पर बैठना चाहिए, जो केवल नीग्रो लोगों के लिए सुरक्षित हैं। जब पहली बार मुझे रेलवे की 'डाइनिंग कार' में भोजन करने के लिए परदे की ओट में बैठना पड़ा था, तब मुझे बड़ी शर्म के साथ यह अनुभव हुआ, मानो यह परदा मेरे स्वाभिमान पर ही पड़ा है। बचपन में सिनेमा देखने में बालसुलभ दिलचस्पी के बावजूद मैं अटलाण्टा के सिनेमाघर में केवल एक बार सिनेमा देख सका। पीछे के उपेक्षित दरवाजे से सिनेमागृह में घुसने और मूँगफली के छिलकों से भरी हुई गैलरी में अलग-थलग बैठने का अनुभव ऐसा कड़वा था कि मैं सिनेमा देखने का मजा नहीं उठा सका। मैं कभी भी अलग प्रतीक्षालय, अलग भोजनालय, अलग शौचालय आदि से समझौता नहीं कर सका। कुछ तो इसलिए कि ये अलग स्थान सदा ही रद्दी हालत में होते थे और कुछ इसलिए कि यह भेदभाव का विचार मेरी प्रतिष्ठा और स्वाभिमान पर चोट पहुँचानेवाला था।

ज्यों-ज्यों मेरा विमान मुझे डिट्रॉयट की ओर ले जा रहा था, मैंने सोचा कि अब मेरे सामने ऐसा अवसर है, जब कि मैं रंगभेद की इस काली, लंबी रात से दूर भाग सकता हूँ। क्या मैं दक्षिण के उस समाज की ओर वापस जाऊँ, जिसने ऐसी परम्परा को पोषण दिया है, जिससे कि मुझे बचपन से ही नफरत है?

मैं वापस बोस्टन लौट आया, तब भी ये सारे प्रश्न अनुत्तरित ही थे। मैंने इसकी चर्चा अपनी पत्नी कोरेटा से की। (हमारा विवाह सालभर से भी कम समय पहले हुआ था।) मैं यह पता लगाना चाहता था कि क्या मेरी तरह वह भी दक्षिण में जाने से हिचकिचा रही है। रंगभेद के घिनौने वातावरण में बच्चों का निर्माण कैसे होगा, इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर हमने विचार किया। हमने यह भी याद किया कि दक्षिण में पले होने के कारण रंगभेद के परिणामस्वरूप किस तरह बहुत से लाभों से हम वंचित रह गये थे। तब मेरी पत्नी के संगीत-अभ्यास का सवाल भी सामने आया। उसको यह निश्चित विश्वास था कि उत्तर के शहरों में संगीत-शिक्षा के लिए दक्षिण के किसी भी शहर की अपेक्षा कहीं अधिक और बेहतर अवसर उपलब्ध हैं। कई दिनों तक लगातार हमने इन प्रश्नों पर सोचा-विचारा और चर्चा की। आखिर हम इस बात पर सहमत हुए कि अनेक कठिनाइयों, कमियों और अनिवार्य रूप से कुछ सुविधाओं का मोह छोड़ने के बावजूद अधिक-से-अधिक सेवा-कार्य अपनी जन्मभूमि, दक्षिण में ही कर सकते थे। फिर हम पर एक प्रकार का नैतिक उत्तरदायित्व भी है कि कम-से-कम कुछ वर्षों के लिए ही सही, हम दक्षिण में अवश्य जायँ।

आखिरकार दक्षिण हमारा घर है। अनेक कमियों के बावजूद हमने घर की तरह उसे प्यार किया है। हमारे हृदय में यह भी अभिलाषा रही है कि एक युवक होने के नाते जिन समस्याओं को हमने महसूस किया था, उनका समाधान करने के लिए भी हम कुछ-न-कुछ प्रयत्न करें। हमने यह नहीं चाहा कि दूर रहकर तमाशा देखनेवालों में हमारी गिनती हो। दक्षिण में रंगभेद सर्वोच्च उग्रता पर है। हमने महसूस किया कि जिन नीग्रो युवकों ने अपनी शिक्षा-दीक्षा दक्षिण से बाहर रहकर प्राप्त की है, उन्हें वापस दक्षिण जाकर अपने व्यापक दृष्टिकोण और शैक्षणिक अनुभव के माध्यम से उस समस्या को हल करने का प्रयत्न करना चाहिए। यद्यपि उत्तर के शहरों के सांस्कृतिक जीवन

को हमने बहुत पसन्द किया था और दक्षिण के शहरों में चलनेवाला भेदभाव हमें हमेशा हमारी चमड़ी के रंग की याद दिलानेवाला था; फिर भी दक्षिण में चलनेवाले एक युगान्तरकारी परिवर्तन के साक्षी बनने की इच्छा हम पर हावी होती जा रही थी। वहाँ गज़ब की सम्भावनाएँ छिपी थीं। अगर रंगभेद का कलंक वहाँ से मिट जाय तो वहाँ ऐसी राजनैतिक, आर्थिक और आध्यात्मिक क्रान्ति मचेगी कि जिसके बराबरी की क्रान्ति देश में शायद ही कहीं दिखाई दी हो।

पादरी बनने की मेरी इच्छा ने, इस तरह, शिक्षा के क्षेत्र में जाने की इच्छा पर विजय पायी और मैंने डेक्सटर चर्च के निमन्त्रण को कुछ वर्षों के लिए स्वीकार करने का निश्चय किया। मैंने सोचा कि पढ़ाने के अपने शौक को मैं बाद में पूरा कर लूँगा। मैंने मॉण्टगोमरी को एक तार किया कि मैं शीघ्र ही वहाँ आकर विस्तार से बातचीत करूँगा।

यों मैं वापस मॉण्टगोमरी गया। वहाँ के अधिकारियों के साथ व्यवस्था और सुविधाओं की चर्चा करके मैंने वहाँ पादरी बनना स्वीकार कर लिया; क्योंकि मैं अपने डॉक्टरेट के शोध-प्रबन्ध (थीसिस) के लिए कुछ और अधिक तैयारी करना चाहता था, मैंने यह इच्छा ज़ाहिर की, जिसे कि स्वीकार भी कर लिया गया, कि पहली सितम्बर १९५४ तक मुझे पूरे समय के लिए पादरी के काम की ज़िम्मेदारी न दी जाय। हाँ, मैं इस बात से सहमत हो गया कि इस अन्तरिम काल में भी महीने में कम-से-कम एक बार मैं मॉण्टगोमरी आता रहूँगा, ताकि सारी व्यवस्था आसानी से चल सके। मई १९५४ के एक रविवार को मैंने डेक्सटर चर्च के पादरी के रूप में अपना प्रथम प्रवचन किया तथा अगले चार महीनों तक बोस्टन और मॉण्टगोमरी के बीच बराबर विमान द्वारा आता-जाता रहा।

जुलाई महीने में मेरे साथ मेरी पत्नी कोरेटा भी आयी। उसके लिए मॉण्टगोमरी अपरिचित नहीं था, क्योंकि उसका घर मॉण्टगोमरी से केवल अस्सी मील दूर, मारिओं नगर में है। उसके पिता श्री ओबी स्कॉट ने

एक किसान के घर पैदा होकर भी लेन-देन, किराने और मुर्गी पालने के काम में काफी सफलता प्राप्त की है। अपने गोरे प्रतिद्वन्द्वियों की ओर से शारीरिक हमले तथा बदला लेने के खतरे के बावजूद उन्होंने अपने परिवार के लिए ऊँचे जीवन-स्तर का निर्माण किया तथा अपने भविष्य के प्रति विश्वास भी कायम रखा। ओहायो राज्य के यलोस्प्रिंग नगर के एँटियोच कॉलेज में पढ़ने के लिए जाने के पहले तक कोरेटा मारिओं में ही रहती थी। उसने अपनी माँ से संगीत-विद्या का वरदान विरासत के रूप में पाया था। माँ से ही उसने उत्तराधिकार में पायी थी दृढ़प्रतिज्ञता की शक्ति, जिसके बल पर वह छात्र-वृत्ति की मदद से काम चलाती हुई बोस्टन के पौधों के एक रक्षागृह में काम करती रही। बोस्टन में ही मेरी मुलाकात इस आकर्षक तरुण गायिका के साथ हुई और मैं उसके प्यार में बँध गया। उसका भद्र व्यवहार और धैर्यपूर्ण स्वभाव भी उसकी तेजस्विता को छिपा नहीं पाता था। यद्यपि मेरे पिताजी के हाथों से विवाहित होने के लिए हम १८ जून १९५३ को मारिओं में श्री स्कॉट के चौड़े मैदानवाले घर पर गये, परन्तु असलियत में अपना विवाहित जीवन हमने बोस्टन में ही आरम्भ कर दिया था।

जुलाई में हम जब मॉण्टगोमरी पहुँचे तो कोरेटा ने प्रसन्न आँखों से मॉण्टगोमरी को देखा। उसने किशोर वैसे ही एक भेदभाव-विहीन कॉलेज की हवा में विचरण किया था तथा एक मेहमान की तरह गोरे लोगों के घरों में वह रही थी। अब हमें रंगभेद से ग्रस्त दक्षिण में आने की तैयारी करनी थी, इसलिए वह नीग्रो लोगों के मोहल्लों में गयी। हमें भी मजबूर होकर उन्हीं मोहल्लों में रहना था। उसने नीग्रो लोगों से ठसाठस भरे हुए बसों के पिछले हिस्सों को देखा। उसे पता था कि उसे भी इन्हीं बसों में यात्रा करनी होगी। वह चर्च के अधिकारियों से बड़े सौहार्द के साथ परिचित करायी गयी और धर्म-परिषद् के सदस्यों ने बड़ी हार्दिकता के साथ उसका सम्मान किया। उसके हृदय में जो आशावाद और विचारों में जो सन्तुलन था, उसके कारण उसने

आनेवाले उन अवसरों के प्रति विश्वास व्यक्त किया, जिनके माध्यम से क्रिश्चियन जीवन-दर्शन की सेवा हो सकेगी। उसका यह आशावाद और संतुलन ही आनेवाले दिनों में मेरा सबसे बड़ा सहारा था।

१ सितंबर १९५४ को मैंने पूरे समय के लिए पादरी का काम शुरू किया। पहले महीने में तो मैं नये घर, नये काम, नये शहर और नये वातावरण को पहचानने में ही व्यस्त रहा। पुरानी मित्रता को ताजा करने, नयी मित्रता का निर्माण करने और अपने घरेलू कामों में रचे-पचे रहने के कारण आसपास के लोगों के जीवन की ओर ध्यान देने के लिए बहुत ही कम समय मिल पाता था। यद्यपि हम वापस दक्षिण इस आशा के साथ आये थे कि हमें समाज-परिवर्तन के काम में एक बहुत बड़ा पार्ट अदा करना है, फिर भी हमें इस बात की कल्पना भी नहीं हो रही थी कि ये परिवर्तन किस तरह आयेंगे। न हमें इस बात की ही कोई संभावना दीखती थी कि एक साल के समय में ही हम एक ऐसे आंदोलन में लिप्त हो जायेंगे, जो कि मॉण्टगोमरी को सदा-सदा के लिए बदल देगा और सारे संसार पर प्रभाव डालेगा।

# आन्दोलन के पहले

# २

प्रारंभ से ही चर्च का काम बहुत प्रेरक था। सन् १९५४ के शरद्-काल के कुछ सप्ताह एक ऐसा कार्यक्रम तैयार करने में बीते, जो यहाँ की धर्म-परिषद् के लिए विशेष लाभदायक हो। मैं लोगों के दिलों से इस तरह की भावना मिटाना चाहता था कि डेक्सटर चर्च केवल ऊँचे तबके के सफेदपोश लोगों का ही चर्च है, क्योंकि प्रायः इसे 'बड़े लोगों का चर्च' कहकर पुकारा जाता था। मेरे मन में इस तरह के विचारों के विरुद्ध एक बगावत थी। मैं मानता था कि धर्माचरण एक सामाजिक अनुभूति है और वह समाज के सभी तबके के लोगों को मिलकर करना चाहिए, ताकि वे यह महसूस करें कि ईश्वर की छत्रछाया के नीचे वे सब एक और संगठित हैं। जब चर्च जाने या अनजाने किसी विशेष वर्ग के लोगों

के हाथ की कठपुतली बन जाता है, तब वह 'जो भी चाहे, उसे आने दो' के आध्यात्मिक सिद्धांत को समाप्त कर देता है। फिर यह भी एक खतरा उपस्थित हो जाता है कि चर्च धर्म के पतले-से आवरण में मात्र एक सामाजिक क्लब बन जाय।

मैं चर्च के बँधे-बँधाये कार्यक्रमों को भी कुछ व्यापक रूप देना चाहता था। मैं जब यहाँ आया, तब चर्च की मुख्य प्रवृत्ति थी—रविवार को एक स्कूल चलाना। इस स्कूल में बड़े और बच्चे मिलकर बाइबिल तथा क्रिश्चियन धर्म की पुस्तकों तथा सिद्धांतों का अध्ययन करते थे। एक बैप्टिस्ट प्रशिक्षण-संघ भी था, जो क्रिश्चियन-नेतृत्व तैयार करने की दिशा में कुछ काम कर रहा था। साथ ही एक मिशनरी समाज भी था, जो क्रिश्चियन धर्म के सन्देश का प्रचार करता था। मैंने कुछ नयी प्रवृत्तियों को चलाने के लिए ये सुझाव दिये : एक, ऐसी समिति गठित करना, जो धार्मिक शिक्षा को प्राणवान् बनाने के उपायों पर विचार करे। दूसरी, ऐसी समाज-सेवा-समिति का गठन करना, जो बीमारों तथा जरूरतमंदों की सेवा का काम करे। तीसरा, ऐसी समिति बनाना, जो सामाजिक और राजनैतिक कार्यक्रमों को उठाये। चौथा, ऐसी समिति बनाना, जो हाइस्कूल के बाद विद्यार्थियों के लिए छात्र-वृत्तियों का प्रबंध करे तथा पाँचवाँ, ऐसी सांस्कृतिक समिति बनाना, जो उदीयमान कला-कारों को बढ़ावा दे।

मेरे सुझावों में जो कार्यक्रम उपस्थित किया गया था, वह परंपरागत कार्यक्रमों से पूरी तरह भिन्न था। इसलिए मुझे शक था कि मेरे सुझाव चर्च के अधिकारियों को स्वीकार होंगे या नहीं। इसलिए मैंने ये सुझाव कुछ संकोच और झिझक के साथ पेश किये, लेकिन मुझे आश्चर्य हुआ कि ये सारे सुझाव बड़ी हार्दिकता के साथ स्वीकार कर लिये गये। अधि-कारियों के इस सहयोग और समर्थन का मुझ पर बहुत प्रभाव पड़ा। इन सुझावों के तुरंत बाद ही सदस्यों की संख्या भी तेजी से बढ़ने लगी और पहले छह महीने के हिसाब के विवरण से पता चला कि पिछले वर्षों की

तुलना में चर्च की आय तीन गुना बढ़ गयी थी। ये सभी नयी समितियाँ बहुत अच्छी तरह काम करने लगीं और धार्मिक शिक्षा प्राप्त करनेवालों की संख्या भी बहुत बढ़ गयी।

कई महीनों तक मुझे अपना समय और शक्ति चर्च के उत्तरदायित्वों और शोध-प्रबन्ध लिखने के काम में बाँटनी पड़ी। मैं सवेरे साढ़े पाँच बजे उठकर अपना शोध-प्रबन्ध लिखने में तीन घंटे का समय देता था तथा फिर रात को सोने के पहले तीन घंटे का समय इस काम में लगाता। दिन का बाकी समय चर्च के काम में जाता था। साप्ताहिक प्रवचनों के अलावा शादियाँ करवाना, अन्तिम संस्कार करवाना, सम्मेलनों में भाग लेना आदि तो था ही। सप्ताह में एक दिन चर्च के उन सदस्यों के घर जाकर प्रार्थना करना भी आवश्यक था, जो बीमारी या और किसी वजह से चर्च तक आ नहीं सकते थे।

प्रारंभ में बहुत-सा समय धर्म-परिषद् के श्रोताओं से परिचय करने में भी गया। यह काम विभिन्न घरों में जाने से और चर्च की सभाओं में भाग लेने से सध सका। प्रति सप्ताह पाँच-दस गोष्ठियों में मुझे भाग लेना होता था। शाम का मेरा समय इसी तरह की प्रवृत्तियों में चला जाता था। सप्ताह मे पंद्रह घंटे का समय तो मैं रविवार का प्रवचन तैयार करने में लगाता था। मंगलवार को मैं अपने प्रवचन की रूपरेखा तैयार करता, बुधवार को आवश्यक छानबीन और विषय से सम्बद्ध जीवन की समस्याओं का अध्ययन करता, ताकि प्रवचन में अधिक-से-अधिक व्यावहारिक सवालों को मैं छू सकूँ और शुक्रवार को मैं अपना प्रवचन लिखना प्रारभ कर देता, जो कि शनिवार की शाम तक पूरा होता था।

फिर भी मॉण्टगोमरी नगर के जन-जीवन में दिलचस्पी लेने के लिए मैं समय निकाल लेता था। नगर के आर्थिक जीवन पर मैक्सवेल और गुंटर हवाई सेना के अड्डों की उपस्थिति का बहुत अधिक असर था। मॉण्टगोमरी की व्यापार-परिषद् ( चेंबर ऑफ कॉमर्स ) के वार्षिक विवरण के अनुसार इन दो सैनिक अड्डों के कारण ५ करोड़ ८० लाख

डॉलर जितना धन शहर के व्यापारिक कामों में केवल सन् १९५५ में आया। शहर के हर १४ नागरिकों में से १ नागरिक इन सैनिक अड्डों पर काम करके अपनी आजीविका चलाता था। प्रत्येक ७ परिवारों में से १ हवाई सेना से सम्बद्ध, सैनिक या असैनिक परिवार था। हवाई सेना के अड्डे से बाहर रहनेवाले ४ हजार परिवारों के घर शहर में थे। शहर के आर्थिक जीवन में इतना बड़ा स्थान रखनेवाले ये सैनिक अड्डे रंगभेद से मुक्त थे, पर यह कैसा मजाक था कि उन सैनिक अड्डों के इर्द-गिर्द बसा हुआ यह शहर रंगभेद से ग्रस्त था। स्वाभाविक ही किसीके भी मन में यह इच्छा होगी कि केंद्रीय सरकार की इस आर्थिक प्रभुत्ता की शक्ति का लाभ अलग-अलग रंगों के लोगों के बीच अच्छे संबंध स्थापित करने के लिए उठाया जाना चाहिए था।

आधुनिक मॉण्टगोमरी रुई, पशु-धन, फलों और लकड़ी का काफी अच्छा बाजार है। देश के रासायनिक खाद पैदा करनेवाले प्रमुख केन्द्रों में से एक है। टेक्सास राज्य के फोर्टवर्थ नगर के पूर्व में तथा ओहायो नदी के दक्षिण में मॉण्टगोमरी का पशु-मेला सबसे बड़ा माना जाता है, जहाँ कि प्रतिवर्ष ३ करोड़ डॉलर के मूल्य के पशुओं की खरीद-फरोख्त होती है। लेकिन यहाँ बड़े कल कारखानों का अभाव है। उद्योगों की कमी के कारण ही अधिकांश नीग्रो घरेलू नौकरियों की तरफ आकृष्ट होते हैं। ६३ प्रतिशत नीग्रो महिलाएँ और ४८ प्रतिशत नीग्रो पुरुष घरेलू कामकाज में नौकरी करते हैं। शायद इसीलिए गोरे तथा नीग्रो लोगों के जीवन-स्तर में इतना अधिक वैषम्य है। सन् १९५० में लगभग ७० हजार गोरे लोगों की औसत आमदनी १७२० डॉलर थी, जब कि ५० हजार नीग्रो लोगों की आमदनी ९७० डॉलर ही थी। शहर के ९४ प्रतिशत गोरे परिवारों के घरों में स्वचालित (Flush) शौचालय हैं, जब कि केवल ३१ प्रतिशत नीग्रो परिवारों को ही ऐसी सुविधा प्राप्त है। इसके अलावा रंगभेद के कारण उन्हें जीवन के हर क्षेत्र में जो यातनाएँ सहनी पड़ती हैं, वे तो ज्यों की त्यों हैं ही। इन बातों से मेरे

आगे यह स्पष्ट हो गया कि मॉण्टगोमरी के नीग्रो एक गम्भीर आर्थिक दबाव के शिकार थे।

गोरे और नीग्रो—ये दो समुदाय सचमुच मनुष्य-समाज के दो अलग-अलग टुकड़े होकर चल रहे थे। यह भेदभाव स्कूलों में भी चलता था, जब कि अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सन् १९५४ का स्कूलों में भेदभाव मिटाने का निर्णय हो चुका था, मॉण्टगोमरी के लोगों ने जान-बूझकर उस निर्णय को अमान्य कर दिया था। अगर एक गोरा आदमी और एक नीग्रो एक साथ एक टैक्सी में यात्रा करना चाहें, तो वे ऐसा नहीं कर सकते थे। कानूनन एक गोरा ड्राइवर केवल गोरे यात्रियों को ही अपनी टैक्सी में ले जा सकता था। नीग्रो लोगों की अलग व्यवस्था थी। नीग्रो और गोरे मजदूर और मालिक की हैसियत से आपस में मिलते थे और एक ही बस में दो अलग-अलग निश्चित सिरों पर बैठकर यात्रा करते थे। इन दोनों समुदायों को अलग करनेवाली एक निश्चित लक्ष्मण-रेखा रहती थी। काले और गोरे लोग एक ही दूकान से सामान भी खरीदते थे, हालाँकि काली चमड़ीवालों को मजबूर होकर तब तक प्रतीक्षा में खड़े रहना पड़ता था, जब तक कि गोरी चमड़ीवाले सभी ग्राहक निपट न जाते। उन्हें शायद ही कभी सौजन्य या आदरपूर्ण सम्बोधन मिलता था। शहर के अनेक हिस्सों में काले और गोरे लोगों की बस्तियाँ आपस में जुड़ी हुई थीं और कहीं-कहीं तो वे आपस में काफी घुली-मिली भी थीं। परन्तु दोनों ही समाज अपने पड़ोसियों की तरफ पीठ फेर लेते थे तथा सामाजिक और सांस्कृतिक आचार-व्यवहार के लिए वे अपने ही रंगवाले समुदाय के साथ मिलते थे।

डॉक्टरों, वकीलों, अध्यापकों आदि के संगठनों में भी यह भेद-भाव चलता था। शहर में मिले-जुले संगठन थे ही नहीं। अगर राष्ट्रीय पैमाने के ऐसे संगठनों में कहीं दोनों रंगों के सदस्य मिल भी जाते तो भी वे आपस में मिलकर नहीं चलते थे। चर्च तक में भिन्न रंगोंवाले पादरियों में आपस का सहयोग नहीं था। वहाँ कोई ऐसी संस्था भी नहीं थी, जो

काले और गोरे लोगों को एक मंच पर लाने का काम करती। अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था ( N.A.A.C.P. ) की मॉण्टगोमरी शाखा के सभी सदस्य नीग्रो ही थे। नीग्रो लोगों के लिए मॉण्टगोमरी में ऊँची शिक्षा का एकमात्र स्थान अलबामा स्टेट कॉलेज था, जिसमें २०० नीग्रो अध्यापक और २००० नीग्रो विद्यार्थी थे। यद्यपि इस कॉलेज के अध्यापकों में श्री होरेसमेन बॉड तथा चार्ल्स थॉमसन जैसे प्रसिद्ध विद्वान् भी थे और यद्यपि इस कॉलेज का शहर और राज्य के सांस्कृतिक जीवन में काफी प्रभाव था। फिर भी यह कॉलेज अपने खूबसूरत अहाते में बहुत ही कम गोरे दर्शकों को खींच पाता था। तथ्य यह है कि मॉण्टगोमरी में मानवीय सम्बन्ध परिषद् की शाखा ही केवल ऐसी संस्था है, जो दोनों रंगों के लोगों को अपनी समस्याएँ सुलझाने के लिए नजदीक ला पायी। अलबामा राज्य के कानून और प्रशासन ने बहुत कम नीग्रो लोगों को वोट देने का अधिकार दिया है। सन् १९४० तक नीग्रो मतदाताओं की संख्या पूरे अलबामा राज्य में २ हजार से अधिक नहीं थी। उसके बाद कुछ तरक्की हुई और अब तक नीग्रो मतदाताओं की संख्या ५० हजार तक पहुँची है। परन्तु यह तादाद कुल वयस्क नीग्रो जन-संख्या का १० प्रतिशत भी नहीं है। सन् १९५४ में मॉण्टगोमरी जिले में वोट देने लायक उम्र के ३० हजार नीग्रो थे। लेकिन उनमें से केवल २ हजार ही मतदाता-सूची में दर्ज थे। इसका कारण कुछ तो यह था कि स्वयं नीग्रो लोगों की मतदान करने में दिलचस्पी ही कम थी और उनके चारों ओर जो बन्धन थे, उनको तोड़ने का प्रयत्न इन लोगों की तरफ से कम हुआ था। परन्तु इसका सबसे बड़ा कारण तो वे कठिन बेड़ियाँ थीं, जिनका निर्माण वहाँ के गोरे प्रशासन ने किया था। अलबामा राज्य का कानून मतदाता-सूची तैयार करनेवाले रजिस्ट्रार को अपनी इच्छा के अनुसार निर्णय करने का बहुत बड़ा अधिकार प्रदान करता है। रजिस्ट्रेशन आफिस में गोरे और काले लोगों के लिए अलग-अलग टेबल होते हैं तथा उन्हें अलग-अलग

कतारों में खड़े होना पड़ता है। मतदाता-सूची को तैयार करनेवाला नीग्रो लोगों की कतार का काम इतने धीरे-धीरे निपटाता है कि अगर कतार में ५० व्यक्ति खड़े हैं तो पूरे दिन में केवल १५ व्यक्तियों के नाम सूची में दर्ज हो पायेंगे। मतदाताओं को एक आवेदन-पत्र में अपने बारे में स्पष्ट विवरण देने के लिए अनेक सवालों का उत्तर देना पड़ता है। नीग्रो मतदाताओं को यह आवेदन-पत्र कई-कई बार भरना पड़ता है, इसके पहले कि वह स्वीकृति-योग्य माना जा सके। इतनी सारी परेशानियों और कठिनाइयों की वजह से मॉण्टगोमरी जिले या शहर में एक भी नीग्रो सरकारी अफसर नहीं था।

इन सब कठिन समस्याओं के साथ मेरा जो लगाव था, उसके कारण मैंने अपने चर्च में जो सबसे पहली कमेटी बनायी, उसका काम यही था कि सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक सवालों पर बुद्धिमानी के साथ हमारे चर्च की धर्म-परिषद् को वाकिफ रखा जाय। इस कमेटी का काम यह भी था कि वह अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था (N.A.A.C.P.) के महत्त्व को और अधिक-से-अधिक नीग्रो लोगों के नाम मतदाता-सूची में दर्ज कराने की आवश्यकता को चर्च के सामने उपस्थित करे तथा प्रान्तीय और राष्ट्रीय चुनावों के समय महत्त्वपूर्ण समस्याओं पर विचार प्रकट करने के लिए सभाओं और गोष्ठियों का आयोजन करे। इस कमेटी के लिए मैंने ऐसे लोगों की माँग की, जिनको इस तरह की सामाजिक समस्याओं में रुचि हो और सामाजिक क्षेत्र में काम करने का थोड़ा अनुभव भी हो। सौभाग्य से मेरी इस माँग को पूरा करना कठिन नहीं था, क्योंकि डेक्सटर चर्च के अनेक सदस्य बड़ी गहराई के साथ सामाजिक समस्याओं में रुचि लेते थे। ऐसे लोगों ने इस कमेटी में काम करना प्रसन्नता के साथ स्वीकार किया। इस कमेटी के दो उत्साही सदस्य श्रीमती जो एन रॉबिन्सन तथा श्री रूफुस लुइस मॉण्टगोमरी के उस ऐतिहासिक बस-बहिष्कार में शामिल होनेवाले सबसे पहले व्यक्तियों में से थे, जिस बस-बहिष्कार के लिए मॉण्ट-

गोमरी के नीग्रो-समुदाय की शक्ति को संगठित करने का काम भी शीघ्र ही करना था।

एक वर्ष में ही मैंने देखा कि इस कमेटी के कामों का बहुत प्रभावकारी परिणाम आया था। पहली नवम्बर तक इसने सप्ताह में दो बार बुलेटिन भी प्रकाशित करना शुरू किया, जो कि चर्च के प्रत्येक सदस्य को दिया जाता था। इस बुलेटिन में प्रमुख राजनैतिक और सामाजिक समस्याओं पर मूल्यवान सामग्री रहती थी। इस कमेटी के तत्त्वावधान में एक ऐसा केन्द्र भी खोला गया, जहाँ पर नीग्रो लोगों को मतदाता-सूची में अपना नाम लिखवाने का प्रशिक्षण दिया जाता था। चर्च की धर्म-परिषद् के प्रत्येक ऐसे सदस्य ने इस केन्द्र में प्रशिक्षण पाया, जो अब तक रजिस्ट्रेशन आफिस के भेदभावपूर्ण तरीकों के कारण मतदाता-सूची में दर्ज होने से वंचित थे। नवम्बर १९५५ में प्रस्तुत की गयी रिपोर्ट में मैं यह कह सका था: "इस कमेटी का काम अत्युत्तम रहा है और डेक्सटर के प्रत्येक सदस्य ने उसके प्रभाव को महसूस किया है। इस कमेटी के कारण न केवल बहुत-से लोग अब मतदाता बन गये हैं, बल्कि अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था को भी डेक्सटर चर्च की ओर से मॉण्टगोमरी के अन्य किसी भी चर्च से अधिक सहायता दी गयी है।"

डेक्सटर चर्च के कार्यक्रमों को अपने ढंग से चालू कर देने के साथ ही अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था में भी मैं शामिल हो गया और इस संस्था के कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने में भी मैंने सक्रिय रूप से भाग लेना शुरू किया। अपने चर्च के माध्यम से इस संस्था को अधिक-से-अधिक आर्थिक सहायता पहुँचाने के अलावा मैंने इस संस्था की ओर से मॉण्टगोमरी तथा अन्य स्थानों पर अनेक व्याख्यान दिये। इस संस्था में शामिल होने के बाद साल भर से भी कम समय में मैं कार्यकारिणी समिति का सदस्य चुन लिया गया। हर महीने इसकी बैठकों में भाग लेने के कारण मुझे रंगभेद की समस्याओं से प्रत्यक्ष परिचय हुआ, खास तौर से ऐसी समस्याओं से, जिनका सम्बन्ध अदालतों से था।

मेरे मॉण्टगोमरी आने के पहले और कई वर्ष बाद तक कई अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था का अधिकांश धन और शक्ति श्री जेरेमिया रीवूस को बचाने के केस में खर्च हो रही थी। रीवूस एक नीग्रो बैंड में ढोल बजानेवाला व्यक्ति था, जो सोलह वर्ष की उम्र में ही गिरफ्तार कर लिया गया था। उस पर एक गोरी युवती के साथ बलात्कार करने का आरोप था। एक अधिकारी उसे उस घर में ले गया, जहाँ मृत्यु-दण्ड दिया जाता है और उसे डराते हुए कहा कि अगर वह आरोप कबूल नहीं करेगा तो यहाँ पर जला दिया जायगा। इस दबाव में पहले तो उसने आरोप को स्वीकार कर लिया, पर बाद में यह स्वीकृति वापस ले ली। फिर तो उसने सात साल तक चलनेवाले इस केस में आखिर तक अपने पर लगाये हुए आरोप को अस्वीकार किया तथा कहा कि बलात्कार तो दूर की बात है, उसका उस स्त्री के साथ कभी किसी तरह का शारीरिक सम्पर्क तक नहीं रहा।

अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था ने कुछ धन इकट्ठा करके एक वकील किया और रीवूस की तरफ से मुकदमा लड़ा। स्थानीय कचहरी में उसे दोषी पाया गया और उसे मृत्यु-दण्ड मिला। उसके बाद कई दूसरी अदालतों से गुजरते हुए इस मुकदमे की अपील अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के सामने दो मरतबा की गयी। पहली बार तो सर्वोच्च न्यायालय ने बिना कोई फैसला सुनाये ही मुकदमे को अलबामा राज्य के उच्च न्यायालय के पास दुबारा सुनवाई के लिए भेज दिया। दूसरी बार सर्वोच्च न्यायालय ने इस केस की अपील पर विचार करना स्वीकार करके भी बाद में उसे खारिज कर दिया। इस तरह सर्वोच्च न्यायालय ने अलबामा के उच्च न्यायालय को बिजली के द्वारा प्राण-दण्ड देने के लिए मुक्त छोड़ दिया। राज्यपाल के सामने जीवनदान के लिए आखिरी अपील के अस्वीकृत हो जाने के कारण पुलिस-अधिकारियों ने अपना काम निभाया और २८ मार्च १९५८ को बिजली द्वारा रीवूस को प्राण-दण्ड दिया गया।

टीवूस के साथ जो विषमतापूर्ण व्यवहार किया गया था, यह दक्षिण की अदालतों में कोई असाधारण बात नहीं थी। जिन वर्षों में टीवूस जेल भुगत रहा था, अलबामा राज्य में अनेक गोरे बलात्कार के आरोप में पकड़े गये। इन गोरों ने नीग्रो युवतियों के साथ बलात्कार किया था। पहले तो वे गिरफ्तार ही नहीं हो पाते थे। अगर गिरफ्तार हो भी गये तो उन तथाकथित न्यायाधीशों द्वारा शीघ्र ही मुक्त कर दिये जाते थे। कभी भी एक भी गोरे व्यक्ति को मुकदमे की पेशी पर खड़ा होना ही नहीं पड़ा। ऐसे ही बहुत-से मजबूत उदाहरणों के कारण दक्षिण के नीग्रो गोरे न्यायाधीशों के न्याय के प्रति भय और अविश्वास करना सीख गये थे।

जब मैंने अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था में काम करना शुरू किया, तभी अलबामा राज्य की मानव-सम्बन्ध-परिषद् ने भी मेरा ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। मिले-जुले रंग के लोगों की यह संस्था अलबामा राज्य में मानवीय सम्बन्ध को सुधारने की दिशा में काम कर रही थी और उसने अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए शैक्षणिक तरीकों को अपनाया था। यह संस्था सभी लोगों के लिए समान अवसर दिलाने का काम करने में काफी सचेष्ट थी। इस संस्था का आधारभूत सिद्धान्त यह था कि "ईश्वर ने सभी मनुष्यों को एक जैसा बनाया है और उस ईश्वर ने हम सबको इस राष्ट्र के जीवन को चलाने के लिए भेजा है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता के अनुसार राष्ट्रीय जीवन में अपना हिस्सा अदा करने के लिए समान अवसर प्राप्त करने का अधिकारी है। कोई भी व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह इन अधिकारों को किसी भी तरह सीमित करने का हकदार नहीं है।"

मैं इस संस्था में शामिल हो गया और इसकी मासिक गोष्ठियों में बराबर भाग लेता रहा। ये सभाएँ हमारे ही चर्च के एक कमरे में हुआ करती थीं। इस संस्था के साथ कुछ महीने काम करने के बाद मैं उसका उपाध्यक्ष चुन लिया गया और काफी अरसे तक उस रूप में काम करता रहा। इस संस्था के अध्यक्ष-पद पर सेंट मार्क मेथोडिस्ट चर्च के गोरे

पादरी श्री रे बेडली थे। ये युवक पादरी दक्षिण के ही रहनेवाले थे और जब उन्होंने रंगभेद मिटाने के क्षेत्र में काम किया तो उनके चर्च की धर्म-परिषद् ने उसका विरोध किया। आखिर उन्हें वहाँ से हटकर चेकवुड्स चले जाना पड़ा। इस संस्था के दो और भी प्रमुख गोरे सदस्य थे : एक, श्री थॉमस पी० थ्राशर तथा दूसरे, श्री रॉबर्ट ग्रेट्ज़। इन दोनों ने बाद में बस-बहिष्कार-आंदोलन में भी बहुत सक्रिय रूप से योग दिया।

हालाँकि मानव-संबंध-परिषद् की मॉण्टगोमरी की शाखा में बहुत अधिक सदस्य नहीं थे, फिर भी इस शाखा ने बहुत महत्त्वपूर्ण काम किये। मिले-जुले रंगवालों की एकमात्र संस्था होने के कारण दोनों रंगों के समुदायों के बीच इस संस्था ने समाचारों और सूचनाओं के आदान-प्रदान का प्रवाह जारी रखने में बड़ी मदद की, जिसकी कि बेहद जरूरत थी।

मनुष्य अक्सर आपस में इसलिए घृणा करने लगते हैं, क्योंकि वे एक-दूसरे से डरते हैं।

वे एक-दूसरे से डरते इसलिए हैं कि वे एक-दूसरे को अच्छी तरह जानते नहीं हैं।

वे एक-दूसरे को अच्छी तरह जानते नहीं हैं, क्योंकि उनके बीच विचारों का आदान-प्रदान नहीं होता।

वे विचारों का आदान-प्रदान भी नहीं कर सकते, क्योंकि वे एक-दूसरे से अलग कर दिये गये हैं।

मानव-संबंध-परिषद् ने काले और गोरों के बीच विचारों के आदान-प्रदान का मार्ग प्रशस्त किया। इसलिए यह परिषद् दक्षिण में उत्तम रंग-संबंधों का निर्माण करने के लिए बहुत आवश्यक वातावरण बना रही थी।

मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि लोग अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था और मानव-संबंध-परिषद् के उद्देश्यों में मेरी दुहरी

दिलचस्पी देखकर आश्चर्य करते थे। लोगों को यह लगता था कि इन दोनों संस्थाओं के उद्देश्यों में बहुत असंबद्धता है।

बहुत-से नीग्रो लोग ऐसा मानते थे कि भिन्न रंगों के लोगों में एक-रूपता कानून के माध्यम से ही आ सकती है—अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था इसी बात पर ज्यादा जोर देती थी।

बहुत-से गोरे लोग ऐसा मानते थे कि भिन्न रंगों के लोगों में शिक्षण के माध्यम से ही एकरूपता आ सकती है, जिस पर मानव-संबंध-परिषद् ज्यादा जोर देती थी।

इस तरह दो भिन्न तरीकों से काम करनेवाली संस्थाओं में एक ही व्यक्ति किस प्रकार अपनी सेवाएँ दे सकता है?

इस सवाल का कारण यह था कि वे मान बैठे थे कि रंगभेद किसी एक ही तरीके से समाप्त हो सकता है, परन्तु मैंने ऐसा महसूस किया कि रंगभेद को मिटाने के लिए दोनों तरीके आवश्यक हैं।

हम शिक्षण के माध्यम से लोगों की मनोवृत्ति बदल सकते हैं।

कानून और अदालती फैसलों के माध्यम से लोगों के व्यवहार को नियमित कर सकते हैं।

शिक्षण के माध्यम से लोगों का पूर्वाग्रह, घृणा आदि आंतरिक भावनाओं को बदलना चाहते हैं।

कानून और अदालती फैसलों के माध्यम से हम उन आंतरिक भावनाओं के कारण बाहर के समाज पर पड़ते हुए प्रभाव को रोकना चाहते हैं।

शिक्षा के माध्यम से हम रंगभेद को मिटाने के पथ की आंतरिक बाधाओं को तोड़ना चाहते हैं।

कानून और अदालती फैसलों के माध्यम से हम बाह्य बंधनों को तोड़ना चाहते हैं।

एक तरीका दूसरे तरीके का स्थान नहीं ले सकता, बल्कि पूरक ही हो सकता है। यदि हम इस विश्वास के साथ आगे बढ़ें कि कानून • दस

सुधारने का मार्ग इनमें से किसी एक गली जितना ही चौड़ा है, तो निश्चित रूप से आवागमन अवरुद्ध होने की स्थिति पैदा हो जायगी और इस वजह से मंजिल तक का रास्ता और भी अधिक कठिन और लम्बा हो जायगा। मैंने दो भिन्न उद्देश्यों को लेकर चलनेवाली संस्थाओं से सम्बद्ध होकर इस भावना के साथ काम प्रारंभ किया कि दोनों ने हमारे समाज की वास्तविक जरूरत को पूरा किया है तथा दोनों ने ही अपने काम को बहुत ऊँचे स्तर से तथा बुद्धिमानी के साथ निभाया है।

ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, मैंने पाया कि किसी भी सामाजिक प्रगति को प्रभावपूर्ण बनाने के पहले नीग्रो-समाज में व्याप्त अनेक रोगों का समुचित उपचार आवश्यक है। सबसे पहली बात तो यह थी कि नीग्रो-समाज के नेताओं में एकता का जबरदस्त अभाव था। बहुत-सी सामाजिक संस्थाएँ काम कर रही थीं, पर हरएक संस्था दूसरी संस्था के प्रति ईर्ष्यालु थी। श्री ई० डी० निक्सन के नेतृत्व में 'प्रगतिशील जनतंत्रवादी' नाम की संस्था चल रही थी। श्री रूफुस लुइस के नेतृत्व में 'नागरिक सभा' नाम की संस्था चल रही थी। श्रीमती मेरी फेयर बर्क्स तथा श्रीमती जो एन रॉबिन्सन 'महिला राजनैतिक परिषद्' नाम की संस्था चला रही थीं और श्री आर० एल० मैथ्यूस 'अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था' का नेतृत्व कर रहे थे। इसके अलावा और भी अनेक छोटे-मोटे संगठनों ने नीग्रो-समाज को विभाजित कर रखा था। इन सभी संस्थाओं के संचालक और नेतागण बहुत योग्य और जी-जान से काम करनेवाले थे, पर उनके अलग-अलग घरौंदों ने आपस में मिलकर किसी बड़ी संगठित शक्ति को पैदा करना असंभव बना दिया था।

बहुत-से लोगों ने इस फूट के कुपरिणामों को महसूस भी किया। सन् १९५५ के प्रारम्भ में इस फूट की समस्या को हल करने के लिए कुछ नेताओं ने प्रयत्न किया तथा 'नागरिक मिलन समाज' के नाम से सभी नीग्रो लोगों का एक प्रतिनिधि संगठन बनाने की कोशिश की। इस नये संगठन की पहली बैठक में भाग लेने के लिए मैं इस आशा से गया

था कि नीग्रो-समुदाय की सामाजिक प्रगति में रोड़ा बनकर बाधा पहुँचानेवाली समस्या का समाधान यहीं से निकल सकता है। लेकिन बहुत शीघ्र ही मेरी आशाओं पर पानी फिर गया। नेताओं की ढिलाई के कारण और नागरिकों की सक्रिय दिलचस्पी के अभाव में 'नागरिक मिलन समाज' बन्द हो गया। इस आशाभरे प्रयत्न के टूट जाने से मुझे लगा कि नीग्रो-समुदाय की यह दुःखद फूट किसी दैवी चमत्कार से ही मिट सकती है।

नीग्रो-समुदाय के सामने केवल नेताओं की फूट का ही प्रश्न नहीं था, बल्कि पढ़े-लिखे लोगों की उदासीनता भी एक बड़ी समस्या थी। रंग-सम्बन्धों के सुधार की दिशा में किये गये किन्हीं भी प्रयत्नों में इस पढ़े-लिखे समुदाय द्वारा भाग न लिये जाने से यह उदासीनता साफ प्रकट होती थी। यह समुदाय परिस्थितियों को ज्यों-का-त्यों स्वीकार कर लेने का आदी हो गया था। यद्यपि रंगभेद मिटाने के लिए किये गये किसी भी संघर्ष में कुछ पढ़े-लिखे लोग सबसे आगे खड़े होते थे, फिर भी उनकी संख्या अपवादस्वरूप ही थी। अधिकांश शिक्षित समाज उदासीन और जैसी भी स्थिति हो, उसीमें सन्तोष माननेवाला था।

इस उदासीनता की जड़ कुछ हद तक भय में निहित थी। अनेक पढ़े-लिखे लोग ऐसे स्थानों में नौकरियाँ करते थे, जहाँ से उनकी नौकरियाँ समाप्त की जा सकती थीं, अगर वे रंगभेद मिटाने के आन्दोलन में सामने आते। इसलिए अपनी आर्थिक सुरक्षा को खतरे में डालने की अपेक्षा 'स्टेटसको' (यथास्थिति) को कायम रखने में ही उन्होंने अपना भला समझ रखा था। लेकिन इस उदासीनता का कारण केवल यही नहीं था। बहुत-से लोगों में जो निष्क्रियता व्याप्त थी, वह निरुत्साह-जन्य ही थी। मतदाता-सूची में अपना नाम दर्ज कराने जैसे निरापद कामों में भी, जिनमें कि चाल, व्यवस्था और कानून को भंग करने की कोई बात नहीं थी, ये पढ़े-लिखे लोग उत्साहहीन थे। कुछ समय के लिए मुझे लगा कि इस उदासीनता का कोई इलाज नहीं हो सकता।

इसी तरह नीग्रो पादरियों की स्पष्ट उदासीनता भी एक खास समस्या थी। कुछ थोड़े-से पादरियों ने सामाजिक प्रश्नों में बड़ी गहरी दिलचस्पी दिखायी थी, पर अधिकांश इस सामाजिक उत्तरदायित्व से मुँह मोड़े हुए थे। पादरियों की यह उदासीनता काफी हद तक इस दृढ़ धारणा में से पैदा हुई थी कि उन्हें इस तरह के आन्दोलनात्मक और विवादास्पद सामाजिक और आर्थिक मामलों में नहीं पड़ना चाहिए। उनका काम तो केवल इतना ही है कि वे धर्मोपदेश करें और मनुष्यों के दिमाग को दिव्यता की ओर केन्द्रित रखें। मुझे लगा कि भले ही यह धार्मिक विचार कितना ही अनुभूतिपूर्ण क्यों न हो, परन्तु यह बहुत ही संकुचित है।

निश्चित ही परलोक के सम्बन्ध में चिंतन धार्मिक जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। कोई भी धर्म, जो अपने को केवल इहलोक से बाँध ले, वह ऐसी ही मूर्खता करता है, जैसे कि थोड़े-से भोजन के लिए अपने जीवन-अधिकारों को बेच देने में होती है। धर्म मनुष्य की केवल प्राथमिक आवश्यकताओं पर ही विचार नहीं करता, बल्कि वह जीवन के अन्तिम छोर तक पहुँचता है। जब धर्म का यह बुनियादी पहलू भुला दिया जाता है, तब वह मात्र नैतिक आचरण का एक प्रकार बन जाता है। फिर आत्मिकता बाहरी क्रियाकांडों में उलझ जाती है और ईश्वर मनुष्य की अर्थहीन कल्पना का विषय बन जाता है।

परन्तु एक सच्चा धर्म मनुष्य की सामाजिक परिस्थितियों को भी नजरअन्दाज नहीं कर सकता। धर्म का सम्बन्ध इहलोक से भी है और परलोक से भी। वह सामयिक प्रश्नों को भी हल करता है और आध्यात्मिक प्रश्नों को भी। वह शीर्ष प्रश्नों को भी छूता है और नीचे के प्रश्नों को भी। वह केवल मनुष्य और ईश्वर के बीच ही एकता पैदा करना नहीं चाहता, बल्कि मनुष्य और मनुष्य के बीच भी एकता पैदा करने की कोशिश करता है तथा मनुष्य और उसकी आन्तरिकता को भी एकरूप करना चाहता है। इसका अर्थ यह है कि क्रिश्चियन दर्शन दोनों

और चलता है। एक तरफ तो यह मनुष्य की आत्मा को बदलकर उसे ईश्वर से मिलाना चाहता है और दूसरी तरफ यह मानवीय आवश्यकताओं की परिस्थिति को भी बदलना चाहता है, ताकि उसकी आत्मा को अपने विकास के लिए अच्छा अवसर मिले। ऐसा कोई भी धर्म, जो केवल मनुष्य की आत्मा से सम्बन्ध रखता है, परन्तु मनुष्यता को मिटानेवाली गन्दी बस्तियों से अथवा जीवन को नष्ट-भ्रष्ट करनेवाली विषम अर्थ-व्यवस्था से अथवा मानव-चेतना को तोड़नेवाली सामाजिक परिस्थितियों से सम्बन्ध नहीं रखता; वह मिट्टी की तरह सूखा हुआ धर्म है। ऐसा धर्म ही वह धर्म है, जिसे मार्क्सवादी अफीम कहकर पुकारते हैं।

मॉण्टगोमरी के अशिक्षित नीग्रो-समुदाय में फैली हुई सुस्ती, आलस्य और शिथिलता भी एक दुःखद तथ्य के रूप में हमारे सामने थी। जहाँ थोड़े-से नीग्रो रंगभेद के खिलाफ आवाज उठाने के लिए हमेशा तत्पर रहते थे, वहाँ बहुजन समाज इस अन्याय को आँखें बन्द करके चुपचाप बरदाश्त कर लेता था। उन्होंने रंगभेद को न केवल एक परम्परा के रूप में स्वीकार कर लिया, बल्कि उसके साथ होनेवाले अपमान और अप्रतिष्ठा को भी बिना विरोध किये ही मान्य कर लिया। डेक्सटर चर्च के मुझसे पहले के पादरी श्री वर्नन जॉन्स ने मुझे एक घटना बतायी, जिससे लोगों के रुख का अच्छा-खासा पता चल जाता है। वे एक दिन एक बस में चढ़े तथा गोरे लोगों के लिए सुरक्षित आगेवाली सीट पर बैठ गये। बस-चालक ने उन्हें पीछे चले जाने को कहा, परन्तु श्री जॉन्स ने ऐसा करने से इनकार कर दिया। तब बस-चालक ने उन्हें बस से उतर जाने का आदेश दिया। श्री जॉन्स ने उस आदेश को भी ठुकरा दिया। अन्त में जब बस-चालक ने उनसे लिया हुआ किराये का पैसा वापस लौटाया, तब वह बस से उतरे। परन्तु उतरने के पहले बस में बैठे हुए अनेक नीग्रो लोगों से उन्होंने पूछा कि उनमें से कितने व्यक्ति बस-चालक के इस दुर्व्यवहार के खिलाफ अपना प्रदर्शन जताने के लिए बस से उतरने को तैयार होंगे! बस में बैठे हुए एक भी नीग्रो

ने उनकी बात का उत्तर नहीं दिया। कुछ दिन बाद श्री जॉन्स ने चर्च में आयी हुई एक महिला से, जो कि उस दिन बस में भी थी, पूछा कि आखिर उसने बस-चालक के दुर्व्यवहार का विरोध क्यों नहीं किया ? वह महिला बोली कि उसके पास बैठे हुए एक अन्य यात्री ने कहा था कि पादरी महोदय को तो पहले से ही यह जानना चाहिए था कि उनके बैठने का स्थान कौन-सा है ? अशिक्षित नीग्रो लोगों के दब्बूपन का यह एक स्पष्ट उदाहरण है।

कुछ अशिक्षित नीग्रो लोगों की अकर्मण्यता का कारण भय भी हो सकता है; क्योंकि जो नीग्रो गोरे लोगों पर निर्भर हैं, वे यदि रंगभेद का विरोध करेंगे तो उनकी नौकरियाँ समाप्त हो जायँगी। मुझे लगता है कि इससे भी बड़ा और बुनियादी कारण था इन लोगों के अन्दर घर किया हुआ हीन भाव। उसीके कारण वे अपने स्वाभिमान को कभी प्रकट नहीं कर पाते थे। बहुत-से लोगों के अवचेतन मानस में यह भी सवाल उठता था कि क्या वे इससे बेहतर अवस्था प्राप्त करने के हक़दार भी हैं ? उनकी आत्मा और मस्तिष्क रंगभेद की परम्परा के साथ इस तरह बँधे हुए थे कि उन्होंने अपने-आपको उसके अनुकूल बना लिया था। रंगभेद की समस्या का यही सबसे दुःखद परिणाम था। इस रूप में रंगभेद केवल बाह्य रूप में ही कष्टदायक नहीं था, बल्कि वह नीग्रो-समाज को मानसिक रूप से भी आहत कर रहा था। वह आत्मा को मार रहा था और व्यक्तित्व को बिखेर रहा था। यह भावना रंगभेद के शिकार लोगों के मनों में गहरा हीन भाव पैदा कर रही थी तथा रंगभेद को पैदा करनेवाले के दिलों में अपने को ऊँचा मानने का झूठा अभिमान भी पैदा कर रही थी। यह एक ऐसा तरीका है, जिसके माध्यम से रंगभेद के शिकार व्यक्ति के चेहरे पर घूर-घूरकर सदा ही यह कहा जाता है : "......की अपेक्षा तुम छोटे हो!" "......के बराबर तुम नहीं हो!" मॉण्टगोमरी के नीग्रो-समाज पर

छाये हुए इस आलस्य और अकर्मण्यता की सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी स्वयं रंगभेद पर ही है।

इस तरह मैंने नीग्रो-समाज को तीनों ओर से घिरा हुआ पाया : नेताओं की फूट, पढ़े-लिखे लोगों की उदासीनता और अनपढ़ लोगों की शिथिलता। इन परिस्थितियों ने मुझे यह मानने के लिए लगभग मजबूर कर दिया था कि मॉन्टगोमरी में कभी भी स्थायी समाज-सुधार संभव नहीं होगा। इस सूखी हुई ज़मीन के नीचे असंतोष का गीलापन अब भी शेष था। श्री वर्नन जॉन्स तथा श्री ई० डी० निक्सन जैसे व्यक्ति इन समस्याओं को सामने लाकर समाज की चेतना को झकझोरने के काम से थके नहीं थे। जब दूसरे कुछ लोग बोलने में डरते थे, तब ये लोग शक्ति और साहस के साथ बोलते थे; जब दूसरे लोग समस्याओं के सामने खड़े होने से घबराते थे, तब ये लोग अपनी दृढ़प्रतिज्ञता के साथ चट्टान की भाँति खड़े हो जाते थे।

श्री वर्नन जॉन्स, जो कि अब मेरीलैण्ड राज्य के बैप्टिस्ट सेंटर के संचालक हैं, रचनात्मक दिमाग के एक तेजस्वी वक्ता और गज़ब की स्मरण शक्तिवाले व्यक्ति थे। बिना पुस्तक देखे घंटों तक शास्त्रीय और दार्शनिक ग्रन्थों में से उद्धरण पर उद्धरण देते जाना उनके लिए कोई असाधारण बात नहीं थी। इस निर्भीक व्यक्ति ने किसी भी अन्याय को बिना उसके विरुद्ध आवाज़ उठाये अपने पास फटकने तक नहीं दिया। जब वे पादरी थे, रविवार का शायद ही कोई प्रवचन छोड़ा हो, जिसमें उन्होंने 'स्टेटसको' में ही सन्तुष्ट रहने की प्रवृत्ति के विरुद्ध आवाज़ न उठायी हो। उन्होंने अक्सर धर्म-परिषद् के सदस्यों को इस बात के लिए फटकारा कि वे अपनी केवल शैक्षणिक डिग्रियों को लेकर गर्व के साथ बैठे हैं, परन्तु उन शैक्षणिक डिग्रियों से प्राप्त होनेवाला स्वाभिमान तो उनके पास है ही नहीं। उनके कुछ बुनियादी सिद्धान्तों में से एक यह था कि कोई भी व्यक्ति जान-बूझकर अगर अन्याय के सामने

आत्मसमर्पण कर देता है, तो वह फिर कभी भी न्याय पाने का हकदार नहीं रह जाता।

श्री जॉन्स को खेती करने और प्रकृति के निकट रहने से बहुत प्रेम था। वे श्री बुकर टी० वाशिंगटन के इस सिद्धान्त से सहमत थे: "कोई भी जाति तब तक तरक्की नहीं कर सकती, जब तक वह इस बात को न सीख ले कि खेत खोदने के काम में भी उतनी ही प्रतिष्ठा है, जितनी कि एक कविता लिखने में।" श्री वाशिंगटन की तरह ही श्री जॉन्स का भी यही ख्याल था कि नीग्रो-समाज को अपनी तरक्की अपने ही ढंग के मार्ग पर चलकर करनी चाहिए। ऐसा करने के लिए उसे आर्थिक क्षेत्र में आत्मनिर्भर तथा मजबूत होना चाहिए। बड़ी दुःखदायक बात तो यह थी कि नीग्रो-समुदाय जितने सामान का उपभोग करता था, उस परिमाण में उत्पादन में उसका बहुत कम हिस्सा था। इस बात पर विचार करते हुए श्री जॉन्स ने सदा ही मॉण्टगोमरी के नीग्रो लोगों से यह अपील की कि वे अपने आर्थिक साधनों को एकत्रित एवं समन्वित करें। परिणामस्वरूप कुछ उद्योगशील व्यक्ति सन् १९५३ में सामने आये और उन्होंने श्री जॉन्स के प्रभाव के अन्तर्गत कुछ कृषि-सम्बन्धी और कुछ नगर-सम्बन्धी काम उठाने के लिए एक सहकारी विशाल बाजार (कोआपरेटिव सुपर मार्केट) प्रारम्भ किया, जो कि आज एक बड़े भारी व्यापार के रूप में विकसित हो गया है। यह प्रयत्न शिथिल नीग्रो-समुदाय के जीवन में नये प्राणों का संचार करनेवाला सिद्ध हुआ।

श्री जॉन्स की तरह ही श्री ई० डी० निक्सन भी सदैव किसी भी तरह के अन्याय के दुश्मन रहे हैं। आप इन लम्बे, काली चमड़ीवाले वृद्ध व्यक्ति के चेहरे को देखने मात्र से ही कह सकते हैं कि वे एक योद्धा रहे हैं। एक कुली का काम करने के कारण वे सदैव मजदूरों तथा मजदूर-संगठनों के निकट सम्पर्क में रहे। वे अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था की प्रान्तीय शाखा के अध्यक्ष के रूप में काम करते रहे

और मॉण्टगोमरी-शाखा के भी अध्यक्ष रहे। इन सभी माध्यमों से श्री निक्सन ने जनता के अधिकारों को प्राप्त करने के लिए काम किया। उन्होंने नीग्रो लोगों को उदासीनता एवं निष्क्रियता के कीचड़ से बाहर निकालने की भरपूर चेष्टा की। साधुवाद है उनके उन प्रयत्नों को, जिनके कारण सैकड़ों नीग्रो लोगों ने अपना नाम मतदाता-सूची में लिखवाने के लिए प्रोत्साहन पाया। अपने निर्भीक विचारों के कारण ही नीग्रो-समुदाय में नागरिक आवाज अपना प्रमुख स्थान रखती थी। ये आदर्शों के प्रतीक थे और अल्बामा राज्य की दीर्घ काल से दबी हुई जनता के लिए ये प्रेरणा के स्रोत थे।

श्री जॉन्स और श्री निक्सन जैसे व्यक्तियों के कार्य के माध्यम से अन्दर ही अन्दर असन्तोष की आग जलने लगी तथा नीग्रो लोगों पर रोज-रोज के अपमानों और अत्याचारों ने इसमें ईंधन का काम किया। ये ऐसे भयमुक्त पुरुष थे, जिन्होंने सामाजिक क्रान्ति के वातावरण को तैयार किया। किन्तु यह असन्तोष सन् १९५४ तक अन्दर ही अन्दर छिपा हुआ था। उस समय नीग्रो और गोरे लोग रंगभेद के बँधे-बँधाये तरीकों को जीवन की वास्तविकता माने बैठे थे। शायद ही किसीने इस पद्धति के विरुद्ध आवाज उठायी हो। मॉण्टगोमरी एक बने-बनाये ढर्रे पर चलनेवाला नगर था। इस नगर को एक शान्तिपूर्ण नगर भी कहा जा सकता है। पर इस शान्ति के लिए मानवीय दासता का मूल्य चुकाया गया था। कई महीनों बाद एक प्रभावशाली गोरे नागरिक ने आकर मेरे कामों का विरोध करते हुए कहा था : "यहाँ पर वर्षों से हम भिन्न रंगों के लोग शान्तिपूर्वक रह रहे थे। आप और आपके साथी हमारी शान्ति की इस लम्बी परम्परा को क्यों तोड़ रहे हैं?"

उनको मैंने सीधा-सा उत्तर देते हुए कहा : "महोदय, मॉण्टगोमरी में आप लोगों के बीच कभी भी वास्तविक शान्ति नहीं थी। आप लोग जिस शान्ति की बात करते हैं, उसका रूप बहुत ही नकारात्मक है। इस शान्ति को नीग्रो लोगों ने भी अक्सर परतन्त्रता और निरुपायता

स्वीकार कर लिया था। लेकिन यह सच्ची शान्ति नहीं है। सच्ची शान्ति तनाव का अभावमात्र नहीं है। वह तो न्याय की उपलब्धि द्वारा ही सम्भव है। जो तनाव आज हम मॉण्टगोमरी में देख रहे हैं, वह बहुत ही आवश्यक तनाव है और यह तनाव तब आता है, जब पददलित लोग खड़े होकर गति प्रारम्भ करते हैं एवं स्थायी व विधायक शान्ति की ओर आगे प्रयाण करते हैं।"

मैंने उन्हें आगे बताया कि प्रभु यीशु का भी यही मतलब था, जब उन्होंने कहा : "मैं शान्ति लेकर नहीं आया हूँ, बल्कि एक तलवार लेकर आया हूँ।" निश्चय ही प्रभु यीशु का मतलब यह नहीं था कि वे किसी बाहरी तलवार को लेकर आये हैं, बल्कि वे ऐसा कहते प्रतीत होते हैं : "मैं यह पुराने ढंग की नकारात्मक शान्ति लेकर नहीं आया हूँ, जिसमें निष्प्राणता तथा शिथिलता व्याप्त हो। मैं ऐसी निर्जीव शान्ति के विरुद्ध लोगों को हिलाने के लिए आया हूँ। जब मैं आता हूँ, तब नये और पुराने में संघर्ष छिड़ जाता है तथा न्याय और अन्याय में भेद पड़ जाता है। मैं एक विधायक शान्ति लेकर आया हूँ, जिसमें से न्याय, प्रेम और निश्चय ही ईश्वर का राज्य भी प्राप्त होता है।"

काले और गोरों के बीच मॉण्टगोमरी में जिस तरह की शान्ति चली आ रही थी, वह कोई क्रिश्चियन शान्ति नहीं थी। यह एक प्रस्तर-शान्ति थी, जो बहुत ऊँची कीमत देकर खरीदी गयी थी।

शहर की बसों में लम्बे काल से शान्ति सन्दिग्धावस्था मे पड़ी थी। इनमें नीग्रो लोगों को प्रतिदिन अप्रतिष्ठापूर्ण रंगभेद की याद दिलायी जाती थी। बसों में कोई भी नीग्रो ड्राइवर नहीं था। गोरे ड्राइवरों में से यद्यपि कुछ तो मृदु व्यवहारवाले थे, फिर भी अधिकांश बहुत ही अशिष्ट एवं असभ्यतापूर्ण व्यवहार करते थे। उन ड्राइवरों के मुँह से नीग्रो यात्रियों के लिए 'निगर्स', 'काले जानवर' और 'काले बन्दर' जैसे अभद्र शब्दों को सुनना कोई असाधारण बात नहीं थी। रोज ही नीग्रो यात्री बस का किराया देने के लिए अगले दरवाजे से चढ़ते और किराया

देने के बाद बस के अन्दर से वे पीछे की सीटों पर नहीं जा सकते थे, बल्कि बस से नीचे उतरकर पिछले दरवाजे से चढ़ने के लिए उन्हें मजबूर किया जाता था। कई बार तो ऐसा भी होता था कि नीग्रो यात्री से किराया प्राप्त करके बस आगे चल पड़ती थी और उस बेचारे यात्री को इतना समय ही नहीं मिलता था कि अगले दरवाजे से उतरने के बाद वह पिछले दरवाजे से बस में चढ़ भी सके। ऐसी हालत में उसका किराया भी गया और बस भी गयी!

इससे भी निर्दय व्यवहार तो यह था, जब नीग्रो यात्रियों को बस में पड़ी खाली सीटों के बावजूद खड़े रहने के लिए विवश किया जाता था। इन सीटों पर लिखा रहता था : 'केवल गोरे यात्रियों के लिए!' भले ही गोरे यात्री बस में न हों। यह कैसा मज़ाक था कि आगे की सीटें खाली पड़ी हों और पीछे नीग्रो यात्री भीड़ में पिसते हुए जायें! दस व्यक्तियों के बैठने की अगली चार सीटों पर नीग्रो लोगों को बैठने की मनाही होती थी। अगर गोरे यात्री अगली सुरक्षित सीटों पर भरे हुए हों और कुछ दूसरे यात्री बस में और चढ़ आयें तो बिना सुरक्षित सीटों पर बैठे हुए नीग्रो यात्रियों से कहा जाता था कि इन गोरे यात्रियों को बैठने दें और स्वयं खड़े हो जायें। अगर नीग्रो यात्री सीट खाली करने से इनकार कर दें तो वे गिरफ्तार कर लिये जाते थे! प्रायः नीग्रो यात्री बिना विरोध किये खड़े हो जाते थे। कभी-कभी ही मर्टीन कॉन्स जैसे लोग ही ऐसा करने से इनकार कर देते थे।

मेरे मॉण्टगोमरी पहुँचने के कुछ महीने बाद ही हाईस्कूल में पढ़ने-वाली एक किशोरी कुमारी क्लाडेट कोलविन को बस से उतार दिया गया और गिरफ्तार करके हथकड़ी पहनाकर वह जेल भेज दी गयी; क्योंकि उसने एक गोरे यात्री के लिए सीट छोड़कर खड़े होना स्वीकार नहीं किया था। इस घटना ने नीग्रो-समुदाय को झकझोर डाला और ऐसी भेदभावपूर्ण बसों का सर्वथा बहिष्कार करने की बातें उठने लगीं। नाग-रिकों की एक समिति बनायी गयी और उस पर यह भार सौंपा गया कि

बस कंपनी के मैनेजर तथा नगर के कमिश्नर से बातचीत करके उनसे बसों में बैठने संबंधी नियमों का खुलासा करनेवाला वक्तव्य प्रकाशित करवाया जाय; साथ ही, बस-चालकों की ओर से नम्र एवं सद्भावपूर्ण व्यवहार हो, ऐसी माँग की जाय।

इस समिति में काम करने के लिए मुझे भी आमंत्रित किया गया। मार्च १९५५ में एक दिन हम लोग सिटी बस के मैनेजर श्री जे० ई० बैगली से मिले। श्री डेव बर्मिंघम, जो कि उस समय पुलिस-कमिश्नर थे, नगर-कमिश्नर की ओर से उपस्थित हुए। ये दोनों व्यक्ति बहुत सद्भावपूर्ण व्यवहारवाले थे और उन्होंने हाइस्कूल में पढ़नेवाली किशोरी के साथ घटित घटना पर खेद प्रकट किया। श्री बैगली ने यह भी स्वीकार किया कि सुश्री कोलविन को गिरफ्तार करना गलत था और यह गलत काम करनेवालों पर उचित कार्रवाई की जायगी। श्री बर्मिंघम ने भी इस बात पर सहमति प्रकट की कि नगर के अटर्नी को बसों में बैठने के नियमों के बारे में एक निश्चित वक्तव्य देना चाहिए। इन सब बातों के बाद हम आशाभरे वातावरण में वापस आये। लेकिन उसके बाद इस संबंध में कुछ भी नहीं हुआ। अत्याचारों का वही पुराना दौर बराबर चलता रहा। नगर के अटर्नी ने एतद्संबंधी नियमों का खुलासा कभी नहीं किया। सुश्री कोलविन को, जिसका दंड एक बार स्थगित कर दिया गया था, दंडित किया गया।

बस कंपनी के मैनेजर तथा नगर-कमिश्नर ने तो कुछ नहीं किया, किन्तु नीग्रो-समुदाय के अंदर गहरी कुलबुलाहट अवश्य उठने लगी। लंबे काल से दबायी हुई असंतोष की भावनाएँ खदबदाने लगीं। जिस भय और उदासीनता की छाया ने नीग्रो-समाज के जीवन पर लंबे समय से अपना प्रभाव जमा रखा था, वह एक स्फूर्तिपूर्ण साहस तथा स्वाभिमान के आलोक में मिटने लगी। बस-अधिकारियों तथा नगर-अधिकारियों की ओर से सुश्री कोलविन के केस में दिखाई गयी उपेक्षा ने यह जरूरी बना दिया कि वे कुछ ही महीनों में एक दूसरी कमेटी का

सामना करें, जो निश्चय ही अधिक दृढ़प्रतिज्ञ लोगों की होगी। यह कमेटी लगभग पचास हजार लोगों के समर्थन से बनी होगी। ये ऐसे थके हुए पचास हजार लोग होंगे, जो इस नतीजे पर पहुँचे होंगे कि

आखिरकार अपमान का घूँसा सहकर बसों में यात्रा करने की अपेक्षा प्रतिष्ठापूर्वक सड़कों पर पैदल चलना ज्यादा सम्मानजनक होगा। ●

# वह निर्णायक गिरफ़्तारी

# 3

पहली दिसंबर '५५ के दिन कपड़े सीनेवाली एक आकर्षक और सुंदर महिला श्रीमती रोजा पार्क्स मॉण्टगोमरी शहर के अंदर क्लीवलैंड एवेन्यू में एक बस में चढ़ी। वह अपने दिनभर के नियमित काम के बाद वापस घर लौट रही थी। वह 'मॉण्टगोमरी फेअर' नाम की एक बहुत बड़ी दूकान में काम करती थी। घण्टों तक पैरों से काम लेने के कारण उसके पैर थके हुए थे। वह बस में चढ़ी और गोरे यात्रियों के लिए सुरक्षित सीटों को छोड़कर पीछे की एक सीट पर बैठ गयी। उसे बैठे थोड़ी ही देर हुई थी कि उसे तथा अन्य तीन नीग्रो यात्रियों को यह आदेश दिया गया कि नये चढ़नेवाले गोरे यात्रियों को स्थान देने के लिए वे खड़े हो जायँ। बस की सभी सीटें भरी हुई होने के कारण

अगर श्रीमती पार्क्स बस-चालक का आदेश मानतीं, तो उन्हें खड़े-खड़े यात्रा करने के लिए मजबूर होना पड़ता, जब कि अभी-अभी चढ़ा हुआ एक गोरे रंग का पुरुष उसकी सीट पर बैठकर यात्रा करता। अन्य तीन नीग्रो यात्रियों ने बस-चालक के आदेश को तुरन्त अंगीकार करके सीटें खाली कर दीं, किन्तु दिनभर के काम से थकी हुई श्रीमती पार्क्स ने सीट छोड़ने से साफ़-साफ़ इनकार कर दिया। नतीजा यह हुआ कि वह गिरफ्तार कर ली गयी!

श्रीमती पार्क्स ने बस-चालक के आदेश का पालन क्यों नहीं किया, इस बारे में अनेक तरह की अफ़वाहें फैलीं। बहुत-से गोरे लोगों ने यह तर्क दिया कि अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था ने जान-बूझकर आन्दोलनात्मक परिस्थिति तैयार करने के लिए भूमिका के रूप में यह बीज बोया है। गोरे लोगों का यह तर्क ऊपर से देखने में असंगत या बेबुनियाद भी नहीं लगता था; क्योंकि श्रीमती पार्क्स इस संस्था की स्थानीय शाखा में सचिव रह चुकी थीं। यह तर्क इतना वज़नदार और अनुकूल मालूम होता था कि देशभर के पत्रकारों को भी इसमें विश्वास हो गया। जब आन्दोलन के दिनों में मैं देशभर से आये हुए पत्रकारों की गोष्ठियों का आयोजन करता था, तो अनिवार्य रूप से पहला प्रश्न यही उठता था : "क्या यह बस-बहिष्कार अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था ने प्रारम्भ किया?"

परन्तु यह गिरफ्तारी बिना किसी पूर्वकल्पना के हुई थी। श्रीमती पार्क्स और अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था, दोनों के बयान से यही सिद्ध होता था। वास्तव में श्रीमती पार्क्स के इस निर्णय को कोई भी नहीं समझ सकता, जब तक कि वह यह न समझ ले कि एक-न-एक दिन धीरज का बाँध टूट ही जाता है और मानवीय चेतना कराह ही उठती है : "मैं अब और अधिक बरदाश्त नहीं कर सकती।" श्रीमती पार्क्स द्वारा अपनी सीट पर से उठने से इनकार करना इस बात का प्रमाण था कि उनके साथ बहुत अन्याय हो चुका है, अब वह

और बरदाश्त नहीं कर सकती। उसका यह कार्य इस बात को प्रकट करता था कि मानवीय प्रतिष्ठा और उसकी स्वतंत्रता अब अधिक दिन तक बेड़ियाँ डालकर बन्द नहीं रखी जा सकती। इसलिए उसके दिमाग में दूसरों के द्वारा कोई बीज नहीं बोया गया था, बल्कि स्वयं उसीके स्वाभिमान ने यह बीज बोया था। युगों-युगों से लादी गयी इस अप्रतिष्ठित रंगभेद की परम्परा ने और आनेवाली पीढ़ियों को आजाद कराने की इच्छा ने उसे यह काम करने की प्रेरणा दी। वह परम्परागत रूढ़ियों की शिकार थी और आनेवाले भविष्य को उज्ज्वल बनाने की तड़प से भरी हुई थी। उसने समय के प्रचलित रिवाजों को मानकर चलने से इनकार कर दिया। वह समय की पुकार थी।

सौभाग्य से ऐतिहासिक परिस्थितियों ने श्रीमती पार्क्स को जो पार्ट अदा करने को दिया, उसके लिए वह एक सुयोग्य पात्र साबित हुई। वह एक क्रान्त व्यक्तित्ववाली प्रभावशाली महिला थी। मधुर भाषण तथा हर परिस्थिति में शान्त रहना उसके स्वभाव का एक अंग था। वह एक निर्दोष चरित्र और गहरी निष्ठावाली स्त्री थी। इन सब गुणों के कारण वह पूरे नीग्रो-समाज में अत्यन्त सम्मानित थी।

श्रीमती पार्क्स की गिरफ्तारी का समाचार उस समय केवल श्री ई० डी० निक्सन और एक-दो अन्य व्यक्तियों को मालूम हुआ। शाम तक यह समाचार नीग्रो-समाज की कुछ प्रभावशाली महिलाओं तक, जिनमें कि अधिकांश 'राजनैतिक महिला समाज' की सदस्याएँ थीं, पहुँचा। फिर तो चारों ओर टेलीफोन खटखटाने लगे। ये महिलाएँ इस घटना से दुःखी हुईं और उन्होंने यह विचार प्रकट किया कि हमारी ओर से बसों का बहिष्कार होना चाहिए। उन्होंने तुरन्त ही यह प्रस्ताव श्री निक्सन के सामने रखा। वे तो इसके लिए तैयार ही थे। अपने साहसिक तरीके से उन्होंने इस सुझाव का प्रचार करना कबूल किया।

दूसरी दिसम्बर को बहुत सबेरे श्री निक्सन ने मुझे यह सब बताया। वे इस प्रस्ताव को बताने में इतने उतावले और उत्सुक हो रहे थे कि आम

तौर पर किया जानेवाला अभिवादन करना भी वे भूल गये। वे आते ही श्रीमती पार्क्स की गिरफ्तारी का किस्सा बयान करने लगे। मैंने यह सुना। इस निर्दय घटना से मुझे एक गहरा धक्का लगा। श्री निक्सन ने कहा : "इस तरह की घटनाएँ लम्बे समय से घटती चली आ रही हैं। अब यह समय आ गया है कि हमें इन बसों का बहिष्कार करना चाहिए। केवल इस तरह के बहिष्कार के माध्यम से ही हम यह बात स्पष्ट कर सकते हैं कि अब इस तरह के व्यवहार को हम कभी स्वीकार नहीं करेंगे।"

मैं तुरन्त इस बात से सहमत हुआ कि इस घटना का विरोध करना जरूरी है और बसों का बहिष्कार करना उसके लिए एक प्रभावशाली तरीका होगा।

मुझे बताने के पहले श्री निक्सन ने 'फर्स्ट बैप्टिस्ट चर्च' के तरुण पादरी श्री राल्फ एबरनाथी के साथ इस सम्बन्ध में चर्चा की थी। वे मेरे निकटतम साथियों में से थे और इस तरह के विरोध के प्रमुख आयोजक बननेवाले थे। उन्होंने भी यही महसूस किया कि बस-बहिष्कार ही इस समय एक सर्वोत्तम प्रक्रिया हो सकती है। लगभग तीस-चालीस मिनट तक हम तीनों बार-बार टेलीफोन करके इस सम्बन्ध में विचार करते रहे और इसकी व्यूह-रचना तथा योजना बनाते रहे। श्री निक्सन ने सुझाव दिया कि हम लोग शहर के सभी पादरियों और सामाजिक नेताओं की एक सम्मिलित सभा करें तथा उसमें बस-बहिष्कार के प्रस्ताव पर विचार करें। मैंने यह मीटिंग अपने चर्च में बुलाने के लिए निवेदन किया। हमने बैप्टिस्ट पादरी सभा के अध्यक्ष श्री एच० एच० हब्बर्ड की भी स्वीकृति प्राप्त कर ली। हम दोनों इस काम में तुरन्त लग गये। मैं और श्री एबरनाथी सभी बैप्टिस्ट पादरियों को टेलीफोन करने लगे। उसी दोपहर को लगभग सभी मेथोडिस्ट पादरी एक चर्च में मीटिंग करने आ रहे थे, इसलिए श्री एबरनाथी के लिए यह आसान हो गया कि वे उन सब पादरियों को एक ही साथ बस-बहिष्कार सम्बन्धी आगाही दे सकें।

बैठक की सूचना दे सकें। एक प्रसिद्ध दन्त-चिकित्सक की विधवा श्रीमती ए० डब्ल्यू० वेस्ट के पास श्री निक्सन पहुँचे और उसे सभी सामाजिक नेताओं को बैठक सम्बन्धी सूचना देने में मदद करने के लिए तैयार कर लिया।

दोपहर तक श्रीमती पार्क्स की गिरफ्तारी का समाचार भी अनियन्त्रित आग की तरह पूरे नीग्रो-समुदाय में फैल गया। चारों ओर टेलीफोन की घण्टियाँ बजने लगीं। उत्साही लोगों के एक दल ने गिरफ्तारी और प्रस्तावित बस-बहिष्कार के समाचार को साइक्लोस्टाइल किये हुए एक परिपत्रक द्वारा सब जगह पहुँचा दिया।

जब हमारी मीटिंग का समय नजदीक आया, तब यह जानने के लिए कि कितने लोग हमारा निमन्त्रण स्वीकार करके मीटिंग में भाग लेने आते हैं, मैं चर्च के दरवाजे पर पहुँचा। सौभाग्य से सर्दी की वह शाम असाधारण रूप से सौम्य थी और भयङ्कर सर्दी ने मानो उस दिन के लिए विदा लेकर हमारी मीटिंग के लिए अच्छा अवसर प्रदान कर दिया था। मुझे यह देखकर बड़ा सन्तोष हुआ कि हमने जिन-जिनको बुलाया था, वे सभी वहाँ उपस्थित हो रहे थे। नीग्रो-समाज के सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व करनेवाले चालीस से भी अधिक व्यक्तियों ने चर्च के सभागृह को भर दिया था। मैंने देखा कि डॉक्टर, स्कूलमास्टर, वकील, व्यापारी, डाकखाने के कर्मचारी, मजदूर संघ के नेता और पादरी; साथ ही नीग्रो-समाज के सभी संस्थाओं के लोग वहाँ आ गये थे। सबसे ज्यादा संख्या पादरियों की थी। पिछली बहुत-सी सामाजिक गोष्ठियों में दीखनेवाली पादरियों की अनुपस्थिति ने मेरे मन में निराशा पैदा कर रखी थी। जब मैंने चर्च में पहुँचकर इस मीटिंग के लिए इतने पादरियों को उपस्थित देखा तो मेरा मन आनन्द से भर गया। उस समय मुझे लगा कि कुछ-न-कुछ असाधारण घटना होनेवाली है।

अगर श्री ई० डी० निक्सन वहाँ उपस्थित होते तो अवश्य ही वे ही सभापति चुने जाते। किन्तु विवश होकर उन्हें रेलवे की अपनी ड्यूटी

पर शहर से बाहर जाना पड़ा था। उनकी अनुपस्थिति के कारण हमने तय किया कि अलग-अलग संप्रदायों के पादरियों की मिली-जुली सभा के अध्यक्ष श्री एल॰ रॉय बैनेट को इस मीटिंग का सभापति चुना जाय। उन्होंने इसे स्वीकार कर लिया। लंबे कद और [illegible] पर छा जाने-वाले व्यक्तित्व के धनी श्री बैनेट अध्यक्ष-स्थान पर आसीन हुए।

श्री एच॰ एच॰ हब्बर्ड द्वारा की गयी प्रार्थना के साथ साढ़े सात बजे मीटिंग प्रारंभ हुई। उसके बाद श्री बैनेट ने मीटिंग के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला। उन्होंने बड़े उत्तेजित शब्दों में श्रीमती पार्क्स द्वारा किये गये प्रतिकार और उनकी गिरफ्तारी का वर्णन किया। उन्होंने यह प्रस्ताव रखा कि मॉण्टगोमरी के नीग्रो नागरिकों को आगामी सोमवार के दिन बसों का बहिष्कार करना चाहिए। उन्होंने अन्त में कहा : "अब हलचल पैदा करने का समय आ गया है। यह बातें करने का नहीं, काम करने का वक्त है।"

श्री बैनेट ने 'अब बातें करने का वक्त नहीं है' इस तथ्य को बड़ी गंभीरता के साथ लिया और उन्होंने इस बात से भी इनकार कर दिया कि मीटिंग में कोई सुझाव या सवाल उपस्थित किये जायँ। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि हमें इस दिशा में निश्चित कदम बढ़ाने चाहिए और इस प्रस्ताव को क्रियान्वित करने के लिए एक कमेटी का निर्माण करना चाहिए। उनके इस कड़े रुख ने उपस्थित लोगों में कुछ विरोध की भावना पैदा की और कुछ शोर-गुल भी पैदा हुआ। करीब पैंतालीस मिनट तक यह हो-हल्ला जारी रहा। ऊँची आवाजें उठने लगीं। बहुत-से लोगों ने धमकी दी कि अगर उन्हें सवाल और सुझाव उपस्थित करने का अवसर नहीं दिया जायगा तो वे सभा-स्थान छोड़कर चले जायेंगे। कुछ देर तक तो ऐसा लगा कि यह आंदोलन शुरू होने के पहले ही समाप्त होने जा रहा है। लेकिन आखिर में श्री बैनेट ने लोगों की भावनाओं को देखकर यह मान लिया कि सभा में बस-बहिष्कार के प्रस्ताव पर खुली चर्चा हो।

तुरंत ही अनेक सवाल मैदान में आने लगे। बहुत-से लोगों ने श्रीमती पार्क्स के कार्य और उनकी गिरफ़्तारी के संबंध में जानकारी एवं स्पष्टीकरण चाहा। उसके बाद कुछ व्यावहारिक प्रश्न भी उठे। कितने दिन तक यह बहिष्कार चलेगा? सारे नीग्रो-समुदाय को यह विचार कैसे समझाया जायगा? किस तरह लोगों को घरों से कार्यालयों तक और वापस कार्यालयों से घरों तक पहुँचाया जायगा?

हमने जब यह सारी दिलचस्प चर्चा सुनी, तब यह देखकर हृदय को बड़ा संतोष हुआ कि प्रस्ताव को अमल में लाने के तरीकों पर मतभेद होने के बावजूद किसीने भी बस-बहिष्कार के विचार और उसकी आवश्यकता पर अंगुली नहीं उठायी। ऐसा लग रहा था, जैसे उपस्थित सभी लोग सर्वसम्मति से यह मानते हैं कि बस-बहिष्कार अवश्य होना चाहिए।

पादरियों ने इस योजना को बड़े उत्साह के साथ माना और यह आश्वासन दिया कि रविवार को सुबह वे अपनी धर्म-परिषद् के सामने यह प्रस्ताव रखेंगे और एक दिन के प्रस्तावित बस-बहिष्कार के लिए अपनी ओर से सिफारिश करेंगे। शहर के लगभग सभी प्रभावशाली नीग्रो पादरी इस सभा में उपस्थित थे। उनका यह हार्दिक समर्थन असाधारण महत्त्व रखता था। यह भी निश्चय किया गया कि सोमवार ता० ५ दिसंबर को शाम को नीग्रो-समाज की एक आम सभा की जायगी। उसीमें आखिरी रूप से इस बात पर फ़ैसला किया जायगा कि कितने दिनों तक हम बस-बहिष्कार को चालू रखें। श्री ए० डब्ल्यू० विलसन ने अपने होल्ट स्ट्रीट बैप्टिस्ट चर्च में यह आम सभा करने का विचार सुझाया। केन्द्र-स्थान में होने से तथा उसमें विशाल सभा के लिए पर्याप्त जगह होने के कारण यह चर्च हमारी आम सभा के लिए बहुत ही उपयुक्त था। सभा में उपस्थित लोगों ने यह तय किया कि शनिवार के दिन इस संबंध में अधिकाधिक परचे बाँट दिये जायँ। नीग्रो-समाज की

तरफ से एक वक्तव्य तैयार करने के लिए आगाा ने एक कमेटी का निर्माण किया, जिसमें मुझे भी शामिल किया गया।

मीटिंग चलती रही और वक्तव्य तैयार करनेवाली कमेटी के हम लोगों ने अलग जाकर वक्तव्य तैयार किया। वह इस प्रकार था :

> पाँचवीं दिसंबर, सोमवार को काम, स्कूल या अन्य किसी स्थान पर जाने के लिए बस में मत चढ़िये।
>
> एक और नीग्रो महिला गिरफ्तार करके जेल में डाल दी गयी है, क्योंकि उसने बस में अपनी सीट को छोड़कर खड़े होने से इनकार कर दिया था।
>
> काम पर जाने के लिए, शहर जाने के लिए, स्कूल जाने के लिए या और कहीं जाने के लिए सोमवार को बस में मत चढ़िये। अगर आपको काम पर पहुँचना है तो टैक्सी से, किसी मित्र की कार से या पैदल जाइये।
>
> आगे के निर्देशों को जानने के लिए सोमवार की शाम को सात बजे होल्ट स्ट्रीट बैप्टिस्ट चर्च में होनेवाली आम सभा में सम्मिलित होइये।

यह वक्तव्य तैयार कर लेने के बाद हमने चर्च की साइक्लोस्टाइल मशीन पर वक्तव्य की अधिकाधिक प्रतियाँ निकालना शुरू किया। लेकिन इस समय बहुत देर हो गयी थी। इसलिए मैंने कहा कि आप सब लोग जायँ, मैं शनिवार की सुबह तक काम पूरा करके तैयार रखूँगा।

मीटिंग के सामने आखिरी सवाल यह था कि आखिर लोगों को अपने-अपने काम पर कैसे पहुँचाया जायगा? अन्त में यह तय किया गया कि नीग्रो लोगों द्वारा चलायी जानेवाली जो अठारह टैक्सी कम्पनियाँ हैं, उनको यह कहा जाय कि वे किराया बस जितना ही

किराया लेकर लोगों को अपने-अपने काम पर पहुँचा दें। इस सम्बन्ध में कार्रवाई करने के लिए ओल्डशिप ए० एम० ई० जिओन चर्च के पादरी श्री डब्ल्यू० जे० पोवेल की अध्यक्षता में एक कमेटी नियुक्त की गयी। इतनी सब जिम्मेदारियों को उठाकर हमने मीटिंग समाप्त की। एक महान् विचार को अपने हृदयों में भरकर हम उठे। समय तेजी से भाग रहा था। दीवार की घड़ी बता रही थी कि आधी रात के बारह बज रहे हैं; लेकिन हमारी आत्मा की घड़ी को लग रहा था कि सुबह हो रही है।

मैं इतना उत्तेजित था कि उस रात बहुत ही कम सो पाया और बहुत सवेरे ही उठकर मैं चर्च की ओर चल पड़ा, ताकि जल्दी-से-जल्दी परचे तैयार कर लिये जायँ। नौ बजे तक चर्च के सचिव ने सात हजार परचे साइक्लोस्टाइल मशीन पर छाप डाले और ग्यारह बजे तक महिलाओं तथा तरुणों की एक सेना ने उन परचों को हाथों-हाथ बाँट देने का काम शुरू कर दिया।

टैक्सी कम्पनियों से सम्पर्क साधनेवाली कमेटी ने शनिवार की दोपहर तक अपना काम शुरू कर दिया और इतनी तेजी से उन्होंने अपना काम निपटाया कि शाम तक लगभग सभी कम्पनियों तक वे पहुँच गये। उन्होंने बताया कि जिस-जिससे भी सम्पर्क किया गया, उन सबने प्रस्तावित बस-बहिष्कार के साथ पूरा सहयोग करने का आश्वासन दिया है तथा बस के किराये में ही लोगों को घरों से काम तक ले जाने तथा वापस लाने की बात स्वीकार कर ली है।

इसी बीच हमारी बात पूरे शहर में एक बड़े अप्रत्याशित ढंग से पहुँच गयी। हुआ यह कि एक अनपढ़ नीग्रो महिला के हाथों में बिना दस्तखत किया हुआ वह परचा पहुँचा, जो शुक्रवार की शाम को कुछ युवकों ने बाँटा था। उस परचे में क्या लिखा है, यह जानने में असमर्थ होने के कारण उस महिला ने वह परचा अपनी मालकिन को दिया। इस गोरी मालकिन ने वह परचा पढ़ते ही स्थानीय समाचार-पत्र के कार्यालय

में पहुँचा दिया और 'मॉन्टगोमरी एडवर्टाइज़र' नाम के इस अखबार ने उस पर्चे का समाचार मुखपृष्ठ पर प्रकाशित किया। ऐसा लगता है कि अखबारवालों ने गोरे समुदाय के पाठकों को सावधान करने के लिए यह समाचार छापा था। लेकिन उनके ऐसा करने से नीग्रो लोगों को सबसे अधिक लाभ पहुँचा; क्योंकि इस अखबार के माध्यम से उन सैकड़ों लोगों के पास समाचार पहुँच गया, जिन्होंने बस-बहिष्कार की योजना के बारे में कुछ भी नहीं सुना था। रविवार की दोपहर तक मॉन्टगोमरी के प्रत्येक नागरिक तक यह समाचार पहुँच गया। केवल थोड़े-से ऐसे लोग, जो बहुत अलग-थलग रहते थे, इस समाचार से वाकिफ नहीं थे।

काफी काम करने के बाद रविवार की दोपहर को मैं बहुत देर से घर पहुँचा और सुबह का अखबार पढ़ने बैठा। बस-बहिष्कार के सम्बन्ध में उसमें एक लम्बा लेख छपा था। मैंने देखा कि पूरे लेख में यह संकेत-सा दिया गया था कि नीग्रो लोग भी अपनी समस्या के लिए वे ही तरीके अपनाने जा रहे हैं, जो तरीके 'गोरे नागरिकों की परिषद्' अपनाती रही है। इस तरह के तरीकों के परिणाम गम्भीर हुए थे। मिसीसिपी राज्य से प्रारम्भ होनेवाली 'गोरे नागरिकों की परिषद्' रंगभेद को सुरक्षित रखने में ही लगी थी, जब कि कुछ ही महीनों पहले सर्वोच्च न्यायालय ने स्कूलों में रंगभेद खत्म करने का फैसला सुनाया था। इस परिषद् ने दक्षिण में बड़ी तेजी से अपनी शाखाएँ-प्रशाखाएँ खोलीं और अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए काम शुरू किया। 'कानूनी अवज्ञा' तथा कानून के द्वारा रंगभेद मिटाने की व्यवस्था को 'टालना' शुरू किया। दुर्भाग्य से इस परिषद् के काम कानून के दायरे से बहुत आगे चले गये। उनके तरीके गुप्त और प्रकट रूप से भयानक तथा हिंस्र थे। वे निर्दयतापूर्वक नीग्रो पुरुषों, स्त्रियों एवं बच्चों को डराने-धमकाने में और भूखों मार देने का भय दिखाते थे। इस परिषद् ने उन गोरे लोगों को भी आर्थिक नाकेबन्दी कर देने का डर दिखाया, जिन्होंने कानून के

मुताबिक चलने एवं परिषद् के गैरकानूनी कामों का विरोध करने की बात सोची थी। परिषद् द्वारा की जानेवाली नाकेबन्दी का उद्देश्य उन लोगों को प्रभावित करना मात्र नहीं था, बल्कि अगर सम्भव हो तो उन्हें जड़मूल से मिटा देने का था।

हमारे बस-बहिष्कार के आन्दोलन की तुलना गोरे नागरिकों की परिषद् के कामों के साथ की जा रही थी, इस बात से मैं बहुत परेशान हुआ और इसीलिए हमारे बहिष्कार-आन्दोलन के तौर-तरीकों के सम्बन्ध में पहली बार गम्भीरतापूर्वक सोचने के लिए मैं मजबूर हुआ। अब तक बिना किसी शक-सन्देह के मैंने बस-बहिष्कार की बात को सर्वश्रेष्ठ तरीका मानकर स्वीकार कर लिया था। परन्तु अब कुछ शंकाएँ मुझे परेशान करने लगीं। क्या हम एक नैतिक मार्ग पर चल रहे हैं? क्या यह बहिष्कार का तरीका बुनियादी रूप से क्रिश्चियन-विरोधी नहीं है? किसी भी समस्या के समाधान के लिए बहिष्कार का मार्ग अपनाना क्या एक नकारात्मक तरीका नहीं है? क्या यह सच है कि हम भी गोरे नागरिकों की परिषद् के जैसे ही कुछ तरीके अपना रहे हैं? अगर इस बहिष्कार से स्थायी और व्यावहारिक परिणाम निकल भी आयें, तब भी क्या अनैतिक साधनों से प्राप्त किया हुआ नैतिक साध्य तर्कपूर्ण है? इन सवालों में से प्रत्येक का तर्कपूर्ण और ईमानदार उत्तर आवश्यक था।

मुझे यह मानना ही पड़ा कि बहिष्कार का तरीका अनैतिक और ईसाइयत-विरोधी स्वरूप धारण कर सकता है। मुझे यह भी स्वीकार करना पड़ा कि बहिष्कार के ऐसे तरीके नीग्रो लोगों को दबाने के लिए 'गोरे नागरिकों की परिषद्' द्वारा प्रायः इस्तेमाल किये जाते थे। साथ ही बहुत-से अच्छे गोरे लोगों का भी इस तरह दमन किया जाता था। लेकिन मैंने अपने-आपसे कहा कि हमारा प्रस्तावित आन्दोलन इस कोटि का नहीं माना जा सकता; क्योंकि हमारे आन्दोलन का उद्देश्य सर्वथा भिन्न था। हम लोग बहिष्कार का तरीका न्याय और स्वतंत्रता की स्थापना के लिए अपना रहे थे। साथ ही हम इस बहिष्कार के माध्यम से लोगों

से यह अपील करना चाहते थे कि देश के कानून को स्वीकार करें और, जब कि गोरे नागरिकों की परिषद् इन तरीकों को अन्याय तथा अमानवीय दमन के लिए इस्तेमाल करती थी। साथ ही वह देश के कानून के विरुद्ध लोगों को उकसाती थी। इसलिए मुझे लगा कि हम अपने आन्दोलन को 'बहिष्कार' का जो नाम दे रहे हैं, वह शायद गलत होगा, क्योंकि बहिष्कार में आर्थिक नाकेबन्दी का विचार आता है तथा व्यक्ति को नकारात्मक दलदल में फँसा दिया जाता है; जब कि हम विधेयात्मक पहलू से सम्बद्ध थे। हमारा यह उद्देश्य नहीं था कि बस-कम्पनी का व्यापार समाप्त हो जाय। हम तो इतना ही चाहते थे कि व्यापार में न्याय को दाखिल किया जाय।

ज्यों-ज्यों मैंने इस सम्बन्ध में आगे सोचा, त्यों-त्यों मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि जो कुछ हम करने जा रहे हैं, वह अन्यायपूर्ण परम्परा के साथ चलनेवाले हमारे सहयोग को बन्द करना मात्र है। बस-कम्पनी को मिलनेवाले आर्थिक लाभ को बन्द करना हमारा उद्देश्य नहीं है; क्योंकि उस अन्यायपूर्ण परम्परा के साथ बस-कम्पनी स्थूल रूप से जुड़ी हुई है, इसलिए सहज ही उसे घाटा सहना पड़ेगा; पर हमारा मूल ध्येय अन्याय के साथ असहयोग करना ही है। चिन्तन-धारा के इस मोड़ पर मैंने थोरो के 'सिविल डिसओबिडिएन्स'—सविनय अवज्ञा—सम्बन्धी लेख पर विचार करना शुरू किया। मुझे याद आया कि एक कॉलेज विद्यार्थी के रूप में जब मैंने सबसे पहले इस निबन्ध को पढ़ा था तो किस तरह प्रभावित हुआ था। मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि हम मॉन्टगोमरी में जो कुछ करने जा रहे थे, उसका सम्बन्ध थोरो के उन विचारों से था। हम गोरे समाज को यह सीधी-सी बात कहने जा रहे थे: "अब इस अन्याय-पूर्ण परम्परा के साथ हम सहयोग नहीं कर सकते।"

फिर मैंने अन्दर ही अन्दर कहना शुरू किया: "जो बिना विरोध किये अन्याय को बरदाश्त करता है, वह भी उतना ही अन्यायी है, जितना कि वह, जो अन्याय करने में मदद करता है। जो बिना

विरोध किये अन्याय को स्वीकार कर लेता है, वह वास्तव में अन्याय के साथ सहयोग ही करता है।" जब दबे हुए लोग इच्छापूर्वक दमन को स्वीकार कर लेते हैं, तब वे दमन करनेवाले की, अपने दमन को न्यायपूर्ण साबित करने में ही, मदद करते हैं। प्रायः दमन करनेवाला अपने दमन में समाये हुए अन्याय को देखे बिना ही चलता रहता है, जब तक कि दमित भी उसे स्वीकार करता चले। इसलिए अपनी चेतना के प्रति तथा ईश्वर के प्रति सच्चा होने के लिए एक अच्छे व्यक्ति के सामने अन्याय के साथ असहयोग करने के सिवा दूसरा कोई विकल्प नहीं रह जाता। मैंने यह महसूस किया कि हमारे आन्दोलन का रुख इसी ओर है। इसी क्षण से मुझे इस बात का भान हुआ कि हमारा आन्दोलन एक सार्वजनिक असहयोग का आन्दोलन है। उसके बाद मैंने 'बहिष्कार' शब्द का प्रयोग बहुत कम किया।

मैं थोड़ा थका हुआ था, लेकिन मेरे मन में प्रस्तावित आन्दोलन की नैतिक भूमिका के प्रति कोई संदेह नहीं रह गया था। मैंने देखा कि शाम मेरे बिना जाने ही ढल आयी है। कुछ स्थानों पर टेलीफोन करने के बाद मैंने शीघ्र ही सो जाने की तैयारी की। लेकिन मेरे बिस्तर में पहुँचने के थोड़ी ही देर बाद हमारी दो सप्ताह की पुत्री, योलांदा डेनिस ने रोना शुरू किया और उसके थोड़ी ही देर बाद टेलीफोन की घण्टी फिर से बजने लगी; इसलिए कुछ देर और जागते रहने का दण्ड सहज ही मिल गया। मैंने उस समय का उपयोग कुछ और मुद्दों पर सोचने में किया। अपनी पत्नी के साथ मैंने प्रस्तावित आन्दोलन की सफलताओं के बारे में चर्चा की। सचमुच अब भी मैं इसकी सफलता के सम्बन्ध में शकालु था। बावजूद इसके कि बस-बहिष्कार की खबर आश्चर्यजनक रूप से सब जगह फैल चुकी थी और सभी पादरियों ने इस योजना को हार्दिक समर्थन दिया था, मैं यही सोच रहा था कि क्या वास्तव में लोगों में इतना साहस होगा? मैंने बहुत-सी प्रशंसनीय और साहसिक योजनाओं को मॉण्टगोमरी में असफल होते हुए देखा था। तब फिर यही योजना

उसका आस्वाद क्यों होगी ? कोरेटा और मैंने इतना ही सोचा कि अगर आठ प्रतिशत लोगों ने भी इस आन्दोलन में भाग लिया तो यह बहुत बड़ी सफलता होगी ।

अर्धरात्रि के बाद टेलीफोन की घंटी बजी और हमारी कमेटी के एक सदस्य ने मुझे सूचित किया कि नीग्रो लोगों की सभी टैक्सी कम्पनियों ने आन्दोलन का समर्थन करना तथा सोमवार को सबेरे हर तरह की मदद करना स्वीकार कर लिया है । सफलता की सम्भावनाएँ जो भी हों, पर मैं सभी पादरियों और सामाजिक नेताओं के अनवरत प्रयत्नों को देखकर बहुत उत्साहित हो रहा था । यह भी अपने-आपमें एक असाधारण उपलब्धि थी ।

अर्धरात्रि के बाद टेलीफोन बजना बन्द हो गया । उसके कुछ ही क्षण पहले 'योकी' ने भी रोना बन्द कर दिया था । कुछ थके हुए स्वर में कोरेटा को मैंने 'शुभ रात्रि' कहा और आशा तथा आशंका के एक अजीब-से मिश्रित वातावरण में मुझे नींद आ गयी । ●

## पाँच दिसम्बर का ऐतिहासिक दिन | ४

सोमवार को सवेरे मेरी पत्नी और मैं साधारण तौर पर उठने के समय से पहले ही उठ गये। साढ़े पाँच बजे तक हम लोग कपड़े आदि पहनकर तैयार हो गये। विरोध-प्रदर्शन का दिन आ गया था। हम इस असाधारण नाटक को देखने के लिए उद्यत थे। मैं अभी भी यही कह रहा था कि अगर साठ प्रतिशत लोगों का सहयोग हमें मिल जाय तो हमारा यह कदम सफल माना जायगा।

सौभाग्य से हमारे घर के पाँच फुट आगे ही एक बस-स्टाप था। इसका मतलब यह हुआ कि हम अपने घर की खिड़की से ही सब कुछ देख सकते थे। पहली बस छह बजे के करीब उधर से गुजरनेवाली थी। इसलिए हमने अत्यधिक लम्बे प्रतीत होनेवाले आधे घण्टे तक प्रतीक्षा

की। मैं उस समय रसोईघर में कॉफ़ी पी रहा था कि कोरेटा चिल्लायी : 'मार्टिन, मार्टिन जल्दी आओ!" मैंने जल्दी-जल्दी प्याली को नीचे रखा और कमरे की तरफ़ दौड़ गया। ज्यों ही मैं घर के आगे की तरफ़ खुलने-वाली खिड़की के पास पहुँचा, कोरेटा ने आनन्द के साथ धीरे-धीरे जा रही बस की ओर इशारा करते हुए कहा : "प्रियतम, यह तो खाली है!" जो कुछ मैं देख रहा था, उस पर बड़ी मुश्किल से विश्वास कर पा रहा था। मैं जानता था कि हमारे घर के पास से गुज़रनेवाली इस साउथ जैक्सन लाइन की बस किसी भी दूसरी लाइन पर चलनेवाली बस से अधिक नीग्रो यात्रियों को ले जाया करती थी और ख़ास तौर से यह पहली बस घरेलू नौकरियों पर पहुँचनेवाले नीग्रो यात्रियों से भरी रहती थी। क्या और सभी बसें भी इसी तरह से आयेंगी, जिस तरह से कि यह पहली! बड़ी उत्सुकता से हमने दूसरी बस का इन्तज़ार किया। पन्द्रह मिनट में ही दूसरी बस भी सड़क पर रेंगती हुई आयी और यह भी पहली की तरह ही खाली थी! कुछ देर में तीसरी बस भी दिखायी पड़ी और उसमें केवल दो गोरे यात्री थे!

मैं अपनी कार में कूदा और एक घन्टे तक मैंने सभी प्रमुख सड़कों के चक्कर लगाकर गुज़रती हुई बसों को देखा। इस भीड़ के समय में मैंने कुल मिलाकर आठ से अधिक नीग्रो यात्रियों को बसों में नहीं पाया। मैं बहुत खुश था। जिस साठ प्रतिशत सहयोग की आशा हमने की थी, उसकी बजाय हमें क़रीब क़रीब सौ प्रतिशत सफलता मिल रही थी। यह एक चमत्कार ही हो गया था! निद्रित और जड़ नीग्रो-समुदाय अब जाग उठा था।

दिनभर यही क्रम जारी रहा। दोपहर के बाद अपने-अपने काम पर से वापस आने के भीड़भरे समय में भी बसें नीग्रो यात्रियों से वैसी ही खाली थीं, जैसी कि सुबह के समय। साउथ जैक्सन की बसों में साधारण तौर पर अल्बामा स्टेट कॉलेज के विद्यार्थियों की भीड़ रहा करती थी। पर आज वे बड़ी खुशी के साथ या तो पैदल चल रहे थे या किसी-न-

किसीकी कार में जगह बना रहे थे। विभिन्न कामों पर जानेवालों ने या तो यातायात का कोई अन्य तरीका ढूँढ़ लिया था, या फिर पैदल ही अपना मार्ग तय किया। कुछ लोगों ने टैक्सियों या निजी कारों में यात्रा की, तो कुछ ने कोई और तरीका ढूँढ़ लिया। कुछ लोग खच्चरों पर बैठकर गये तो कुछ लोगों ने उस दिन घोड़े की बग्घियों का प्रबन्ध कर लिया। भीड़ के समय में फुटपाथ मजदूरों और घरेलू नौकरों से भरे हुए थे। उनमें से बहुत-से तो प्रौढ़ावस्था पार किये हुए लोग थे, जो कि बड़े धैर्य के साथ पैदल चलकर अपने कामों पर गये और वापस आये। उनमें से कुछ ने तो बारह मील जितने लम्बे-लम्बे फासले भी तय किये। वे यह जानते थे कि वे क्यों पैदल चल रहे हैं और उन्होंने जिस ढंग से यह सब किया, वह उनकी चेतना का सबसे बड़ा सबूत था। जब मैंने उनके चेहरों को देखा तो मुझे लगा कि स्वतन्त्रता और स्वाभिमान के लिए कष्ट उठाने और त्याग करने की लोगों की साहसिक दृढ़प्रतिज्ञता से अधिक सुन्दर चीज और कुछ भी नहीं है।

बहुत-से दर्शक भी बस-स्टैण्डों पर यह जानने के लिए एकत्रित हो गये थे कि देखें, क्या होता है! शुरू में तो वे शान्त खड़े रहे, पर ज्यों-ज्यों दिन चढ़ा, उन्होंने खाली बसों को देख-देखकर मुखरित रूप से प्रसन्नता जाहिर करना प्रारम्भ कर दिया। वे हँसने और मजाक करने लगे। चिल्लानेवाले इन युवकों को कोई भी यह गाते हुए सुन सकता था कि 'आज नहीं हैं यात्री कोई!' नगर के कमिश्नर की तरफ से नियुक्त किये हुए पुलिस के दो सिपाही मोटर-साइकिलों पर नीग्रो-बस्तियों के अन्दर से बसों के साथ-साथ चल रहे थे। उनका यह दावा था कि कुछ ऐसे नीग्रो-दल संगठित किये गये हैं, जो साधारण नीग्रो यात्रियों को बसों में चढ़ने से रोकते हैं। पूरे दिन में ये सिपाही केवल एक व्यक्ति को गिरफ्तार करने में सफल हो सके! वह कॉलेज का एक विद्यार्थी था, जो एक वृद्ध स्त्री को सड़क पार करने में मदद कर रहा था। उस पर यह आरोप लगाया गया कि वह यात्रियों को बस में चढ़ने से रोक रहा था।

परन्तु संगठित नीग्रो-दल की बात तो कमिश्नर के दिमाग की कोरी कल्पना ही थी! किसीने भी बस में चढ़नेवालों को दबाया या धमकाया नहीं। अगर किसीने किसी तरह का दबाव महसूस किया, तो वह स्वयं उसकी अपनी चेतना का ही दबाव था।

सुबह के करीब साढ़े नौ बजे तक मैं नगर की सड़कों पर घूमा और उसके बाद भीड़ से भरे हुए पुलिस के थाने पर पहुँचा। यहाँ पर रंगभेद के आदेश का पालन न करने के कारण श्रीमती पार्क्स की पेशी हो रही थी। उनके वकील श्री फ्रेड ग्रे बचाव के लिए खड़े हुए थे। श्री ग्रे एक तेजस्वी तरुण नीग्रो थे, जो बाद में हमारे असहयोग-आन्दोलन के प्रमुख वकील बनाये गये। न्यायाधीश ने पूरा मुकदमा सुनने पर श्रीमती पार्क्स को दोषी पाया और उस पर दस डॉलर का जुरमाना लगाया गया। साथ ही उसे न्यायालय का खर्च, चार डॉलर, भरने का भी आदेश दिया गया। श्रीमती पार्क्स ने अपने केस की अपील ऊपर के न्यायालय में की। रंगभेद-कानून का पालन न करने पर किसी नीग्रो को दण्डित किये जाने का यह पहला साफ-साफ उदाहरण था। पहले या तो इस तरह के केस दबा दिये जाते थे या इस तरह के मामले में पकड़े गये लोगों पर अभद्र व्यवहार का आरोप लगाया जाता था। इसलिए श्रीमती पार्क्स की गिरफ्तारी और उनको दिया गया दण्ड वास्तव में दुहरा प्रभाव डालनेवाला था। एक तो इस तथ्य ने नीग्रो समुदाय को किसी निश्चयात्मक आन्दोलन के लिए उद्वेलित किया और दूसरे रंगभेद का कानून कसौटी पर चढ़ गया। मुझे विश्वास है कि अगर श्रीमती पार्क्स को दण्डित करनेवालों को कुछ दूरंदेशी का भान होता और इस तात्कालिक परिस्थिति से आगे का वे सोच पाते, तो वे किसी दूसरे ढंग से पेश आये होते।

श्रीमती पार्क्स के मुकदमे के दौरान श्री राल्फ एबरनाथी, श्री ई० डी० निक्सन और श्री ई० एन० फ्रेंच ने इस आन्दोलन के नेतृत्व और मार्गदर्शन को व्यवस्थित करने की जरूरत पर चर्चा की। अब तक का

सारा क्रम सहज गति से अपने-आप ही आगे बढ़ रहा था। इन लोगों में इतना जानने की समझ थी कि अब आन्दोलन में एक स्पष्ट निर्देश एवं संचालन का समय आ गया है।

इसी बीच श्री रॉय बेनेट ने तीन बजे बहुत-से लोगों को मिलने के लिए बुलाया, ताकि शाम की आम सभा के स्वरूप को निर्धारित कर लिया जाय। इस बैठक में उपस्थित सभी व्यक्ति आन्दोलन में मिली हुई अभूतपूर्व सफलता से गर्व का अनुभव कर रहे थे। लेकिन इस अनुभव के अन्दर से यह सवाल भी उठ रहा था कि हमें यहाँ से आगे किधर बढ़ना चाहिए। जब श्री निक्सन ने श्री एबरनाथी और श्री फ्रेंच के साथ हुई चर्चा का विवरण रखा और एक तात्कालिक संचालन समिति बनाने का सुझाव दिया, तो बैठक में उपस्थित सभी लोगों ने बड़े उत्साह के साथ उसका समर्थन किया। इस नयी संचालन समिति के अधिकारियों का चुनाव करने का काम सबके सामने था।

ज्यों ही श्री बेनेट ने इस समिति के लिए अध्यक्ष मनोनीत करने की बात कही, एक दूर के कोने से श्री रूफुस लुइस ने कहा : "अध्यक्ष महोदय, मेरा सुझाव है कि इस समिति का अध्यक्ष श्री मार्टिन लूथर किंग को मनोनीत किया जाय।" उनके प्रस्ताव का समर्थन हुआ और कुछ ही क्षणों बाद सर्वसम्मति से मुझे अध्यक्ष चुन लिया गया।

इस चुनाव ने मुझे स्तम्भित कर दिया। यह सब कुछ इतना जल्दी हुआ कि मुझे सांगोपांग चिन्तन के लिए समय तक नहीं मिला। अगर मुझे अच्छी तरह सोचने का अवसर मिला होता तो मैंने अध्यक्ष-पद अस्वीकार कर दिया होता। तीन सप्ताह पहले ही अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था की स्थानीय शाखा के लोगों ने मुझसे यह आग्रह किया था कि मैं इस संस्था के अध्यक्ष-पद के लिए चुनाव लड़ूँ। उन्होंने यह भी विश्वास दिलाया था कि चुनाव में मेरी विजय लगभग निश्चित है। जब इस सम्बन्ध में मेरी पत्नी में और मुझमें चर्चा हुई, तो हमने यही तय किया कि क्योंकि मैंने अभी-अभी अपना शोध-निबन्ध पूरा किया है, इसलिए मुझे

चर्च के कामों में ज्यादा ध्यान देना चाहिए और अन्य किसी सामाजिक उत्तरदायित्व को नहीं उठाना चाहिए। लेकिन इस अवसर पर घटनाएँ बड़ी तेज रफ्तार के साथ बढ़ीं और जब मैंने इस पर ध्यान दिया तो मैं अध्यक्ष चुना जा चुका था।

इस नयी समिति के अन्य अधिकारियों का चुनाव भी बहुत शीघ्रता से हुआ। श्री एल० रॉय बेनेट, उपाध्यक्ष; श्री यू० जे० फील्ड्स, कार्यालय-मन्त्री; श्री ई० एन० फ्रेंच, सम्पर्क-मन्त्री; श्रीमती एरना ए० डंगी, अर्थ-मन्त्री; श्री ई० डी० निक्सन, कोषाध्यक्ष चुने गये। उसके बाद यह तय किया गया कि अभी अस्थायी समिति के जो सदस्य हैं, वे सब कार्यकारिणी के सदस्य माने जायेंगे। यह नया संगठन सारे आन्दोलन का सूत्रधार होगा। यह संगठन काफी सन्तुलित था; क्योंकि इसमें सभी सम्प्रदायों के पादरी, अध्यापक, व्यापारी और दो वकील थे।

इस नये संगठन का नाम क्या रखा जाय! अनेक नाम सुझाये गये। किसीने नीग्रो नागरिक समिति सुझाया। लेकिन इस नाम को अस्वीकार कर दिया गया, क्योंकि यह नाम गोरे नागरिकों की परिषद् से बहुत मिलता-जुलता था। इसी तरह बहुत-से सुझाव आये और अस्वीकृत हुए। अन्त में श्री राल्फ एबरनाथी ने सुझाया कि इस संगठन का नाम 'मॉण्टगोमरी विकास संगम' (मॉण्टगोमरी इंप्रूवमेंट असोसिएशन) रखा जाय। यह नाम सभी को पसन्द आया और स्वीकार कर लिया गया।

संगठन-सम्बन्धी इस चर्चा के बाद हम लोगों ने शाम की आम सभा के बारे में विचार करना आरम्भ किया। बहुत-से लोग यह नहीं चाहते थे कि हमारे भविष्य के कार्यक्रमों की जानकारी अखबारवालों को हो। इसलिए उन्होंने सुझाया कि हमें आम सभा में केवल गाना और प्रार्थना करनी चाहिए। अगर लोगों को कोई राय सुझाय देना हो तो उसको माइक्लोस्टाइल मशीन पर छापकर गुप्त रूप से मीटिंग के अन्दर बाँट देना चाहिए। इससे अखबारवाले बिल्कुल अँधेरे में रहेंगे। दूसरे बहुत-से लोगों ने कहा कि कुछ-न-कुछ ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि हम अपने

नेताओं के नाम गुप्त रख सकें। अगर कोई भी नाम प्रकट नहीं किया जायगा तो वह सभी के लिए अधिक सुरक्षित होगा। इस तरह की लम्बी चर्चाओं से ऊबकर श्री ई० डी० निक्सन ने कहा :

"हम लोग बच्चों की तरह बातें कर रहे हैं। किसी-न-किसीका नाम तो प्रकट करना ही होगा। अगर हम लोग इतने डरपोक हैं तो अच्छा होगा कि इसी समय हम सारा आन्दोलन बन्द कर दें। हममें इतनी मर्दानगी होनी चाहिए कि खुली सभा में इन सुझावों पर चर्चा कर सकें। एक लिखा हुआ परचा बाँट देने का विचार तो बेवकूफी मात्र है। गोरे लोग तो हमारे सभी रहस्य किसी-न-किसी तरह प्राप्त कर ही लेंगे। अच्छा होगा कि हम इस बात का अभी ही निर्णय कर लें कि हम लोग निर्भीक पुरुष बनना चाहते हैं या डरपोक बच्चे।"

इस साहसभरे वक्तव्य से सारा वातावरण साफ हो गया। उसके बाद किसीने यह सुझाव नहीं रखा कि हम अपने-आपको छिपाकर रखें या आनेवाले प्रश्नों का सामना करने से अपने-आपको बचायें। श्री निक्सन के साहसभरे वक्तव्य ने उन लोगों को एक नयी हिम्मत दी, जिनका हृदय भय के मारे टुकड़े-टुकड़े हुआ जा रहा था।

सर्वसम्मति से यह तय किया गया कि हमारा आन्दोलन तब तक चलता रहेगा, जब तक हमारी माँगें पूरी न हों। यह भी तय किया गया कि श्री राल्फ एबरनाथी के संयोजकत्व में एक प्रस्ताव-समिति बनायी जाय, जो हमारी माँगों को प्रस्ताव के रूप में लिखकर तैयार करे। फिर वह प्रस्ताव आम सभा में उपस्थित करके सभी लोगों द्वारा स्वीकृत करवाया जाय। इसके बाद हमने बाकी के कार्यक्रमों को जल्दी से तय कर लिया। श्री बेनेट आम सभा की अध्यक्षता करेंगे और मैं प्रमुख वक्ता के रूप में भाषण दूँगा। कई अन्य वक्ता भी कुछ शब्द कहेंगे। इसके अलावा प्रार्थना, भजन, गीत इत्यादि होंगे।

इसके तुरन्त बाद ही प्रस्ताव-समिति ने वक्तव्य तैयार करना प्रारम्भ किया। आन्दोलन की अब तक की सफलता पर सन्तोष के

होकर साथ-साथ गाना शुरू कर दिया। चर्च के अन्दर से जब इस सामूह-गान की आवाज बाहर तैरने लगी, तो वह ऐसी शक्तिशाली ध्वनि पैदा कर रही थी, मानो वह स्वर्ग से आनेवाली प्रतिध्वनि हो।

वेडलाइ बैप्टिस्ट चर्च के पादरी श्री डब्ल्यू० एफ० अल्फोर्ड ने प्रार्थना कराने में परिषद् का नेतृत्व किया। उसके बाद बेल स्ट्रीट बैप्टिस्ट चर्च के पादरी श्री यू० जे० फील्ड्स ने बाइबिल में से कुछ वाक्य पढ़े और तब सभा के अध्यक्ष ने मेरा परिचय दिया और उपस्थित जनता ने हर्ष-ध्वनि की। मैं उठा और मंच पर जाकर खड़ा हो गया। टेलीविजन के कैमरों ने चारों ओर से फोटो खींचने शुरू किये। जनता पूरी तरह से शान्त हो गयी।

बिना लिखित भाषण के मैंने श्रीमती पार्क्स के साथ हुई घटना का वृत्तान्त सुनाया। उसके बाद नीग्रो नागरिकों ने नगर की बसों में जिस अपमान और घृणा का सामना अब तक किया है, उसका इतिहास मैंने बताया। "लेकिन एक समय आता है" मैंने कहा : "जब लोग इन सबसे थक जाते हैं। हम यहाँ उन लोगों से, जिन्होंने हमारे साथ लम्बे समय से दुर्व्यवहार किये हैं, यह कहने के लिए इकट्ठे हुए हैं कि अब हम थक चुके हैं। हम रंग के कारण होनेवाले भेदभाव तथा निर्दयता से थक चुके हैं। हम दमन की नृशंसतापूर्ण लातों से ठोकरें खाते-खाते थक चुके हैं।" उपस्थित जनता ने मेरे इस वक्तव्य को हर्षध्वनि के साथ सुना। "हमारे सामने इस अत्याचार का विरोध करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था।" मैंने अपनी बात चालू रखी। "बहुत सालों तक हमने आश्चर्यजनक धैर्य रखा। हमने बहुत बार अपने गोरे भाइयों को यह समझाने दिया कि वे हमारे साथ जो व्यवहार कर रहे हैं, उसे हम पसन्द करते हैं। लेकिन आज हम यहाँ उस धैर्य से छुटकारा पाने के लिए एकत्रित हुए हैं, जो हमें स्वतन्त्रता और न्याय से वंचित कर रहा है।" जनता ने फिर से हर्षध्वनि करके मुझे बोलने से रोक दिया।

संक्षेप में मैंने हमारे आन्दोलन को नैतिक और कानूनी दृष्टि से तर्कपूर्ण सिद्ध किया। "जनतन्त्र की यह बहुत बड़ी महिमा है कि वह हमें अपने अधिकारों के लिए विरोध-प्रदर्शन करने का अधिकार देता है।" गोरे नागरिकों की परिषद् और कु क्लक्स क्लान जैसी संस्थाओं के तरीकों के साथ हमारे आन्दोलन के तरीकों की तुलना करते हुए मैंने स्पष्ट किया कि ये संस्थाएँ समाज में न्याय को दबाने के लिए विरोध-प्रदर्शन करती हैं, जब कि हम समाज में न्याय को स्थापित करने के लिए यह प्रदर्शन कर रहे हैं। उनके तरीके समाज को हिंसा और अराजकता की तरफ ले जाते हैं, जब कि हमारे तरीकों से इस तरह की आग पैदा नहीं होगी। कोई भी गोरे रंग का व्यक्ति घर से बाहर निकालकर उन्मत्त नीग्रो उपद्रवियों द्वारा निर्दयता के साथ मारा नहीं जायगा। किसीको भी डर और धमकियाँ नहीं दी जायँगी। हम कानून और व्यवस्था के उच्चतम सिद्धान्तों के अनुसार चलेंगे।"

तेजस्विता के साथ काम करने के लिए इस तरह भूमिका बाँधने के बाद मैंने लोगों को सावधानी बरतने की भी सलाह दी और यह अपील की कि किसी भी व्यक्ति को बस में चढ़ने से जबरदस्ती नहीं रोका जाना चाहिए। "हमारे तरीके हृदय-परिवर्तन के होंगे, न कि भय पैदा करने के। हम लोगों से इतना ही कहेंगे कि 'आप अपनी चेतना को ही अपना मार्ग-दर्शक बनाइये'।" प्रेम के क्रिश्चियन सिद्धान्त पर जोर देते हुए मैंने कहा : "हमारा आन्दोलन हमारी क्रिश्चियन श्रद्धा के गम्भीर सिद्धान्तों के अनुसार चलना चाहिए। प्रेम ही हमें चलानेवाला आदर्श होगा। सदियों से प्रतिध्वनित होनेवाले प्रभु ईसा के इन शब्दों को हमें निश्चित रूप से मानना ही चाहिए कि 'अपने दुश्मन से भी प्यार करो। जो तुम्हें आघात पहुँचाता है, उसे भी आशीर्वाद दो। जो तुम्हारे साथ द्वेषभाव रखता है, उसके लिए भी प्रार्थना करो।' अगर हम ऐसा करने में असफल रहे तो हमारा आन्दोलन इतिहास के मंच पर खेले गये एक निरर्थक नाटक की तरह समाप्त हो जायगा और इसकी यादें शर्म के

यह उत्साह भी एक आश्चर्यजनक आत्मानुशासन द्वारा सधा हुआ था। इन लोगों में उद्देश्य की एकता और सामूहिकता की भावना अनिर्वचनीय रूप से प्रेरणादायक थी। कोई भी इतिहासकार पूरी तरह से इस सभा का वर्णन नहीं कर पायेगा। कोई भी समाजशास्त्री इस सभा के वातावरण की सम्पूर्ण व्याख्या नहीं कर पायेगा। इसे अच्छी तरह से समझने के लिए किसीको भी स्वयं इस अनुभव का हिस्सेदार बनना आवश्यक था।

बेनमूर होटल में जब लिफ्ट धीरे-धीरे ऊपर चढ़ी और छत के ऊपर, जहाँ भोज होनेवाला था, पहुँची तब मैं अपने-आपसे कह रहा था कि प्रस्ताव में उल्लिखित त्रिसूत्री कार्यक्रम को प्राप्त करने में भले ही हमें कितना ही लम्बा संघर्ष क्यों न करना पड़े, पर विजय हमें प्राप्त हो चुकी है। बस की व्यवस्था में सुधार होने की अपेक्षा आज की यह विजय निश्चय ही बहुत महान् है। वास्तविक विजय आज की उस आम सभा में थी, जहाँ हजारों काले लोग प्रतिष्ठा और भविष्य की एक नयी चेतना के साथ भावविभोर खड़े थे।

बहुत-से लोग यह सवाल जरूर पूछेंगे कि यह घटना मॉण्टगोमरी में सन् १९५५ में क्यों हुई? बहुत-से लोगों ने कहा कि स्कूलों से रंगभेद मिटाने का सर्वोच्च न्यायालय का फैसला दो साल पहले ही हुआ था। उस फैसले ने सभी जगह नीग्रो लोगों के लिए तात्कालिक न्याय प्राप्त करने की नयी आशा उत्पन्न की थी; साथ ही दमन के विरोध में उठ खड़े होने के लिए उनमें उत्साह की ज्योति जगायी थी। यद्यपि यह कारण कुछ हद तक यह समझने में सहायक हो सकता है कि आन्दोलन ने क्यों जड़ पकड़ी; परन्तु इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि यह आन्दोलन मॉण्टगोमरी में ही क्यों पैदा हुआ?

निश्चय ही मॉण्टगोमरी की बसों में चलनेवाले अन्याय का इतिहास कुछ हद तक इस आन्दोलन की सम्भावनाओं को व्यक्त करता है। लेकिन यह सब आन्दोलन उसी तरह से अचानक प्रकट नहीं हो गया, जिस

तरह कि शिवजी की जटाओं में से गंगा बह निकली थी। यह आन्दोलन तो धीरे-धीरे अन्दर-ही-अन्दर विकसित होता हुआ चरमोत्कर्ष तक पहुँचा था। श्रीमती पार्क्स की गिरफ्तारी इस आन्दोलन का बुनियादी कारण नहीं थी, बल्कि वह तो लोगों को झकझोर देनेवाली एक घटना थी। बुनियादी कारण तो इस तरह के अन्यायों की लम्बी परम्परा का अभिलेख ( रेकार्ड ) ही था। लगभग सभी व्यक्ति ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं के साक्षी बन सकते थे। या तो वे स्वयं ऐसे अन्यायों के शिकार हुए हैं या उन्होंने किसी और को ऐसे अन्याय का शिकार होते देखा है।

लेकिन एक समय आता है, जब लोग दमन सहते-सहते ऊबने लगते हैं। एक समय आता है, जब लोग शोषण के कीचड़ में फँसाये जाने से और अन्यायों को बर्दाश्त करने से ऊबने लगते हैं। मॉण्टगोमरी की कहानी ऐसे पचास हजार नीग्रो लोगों की कहानी है, जो अपनी थकी हुई आत्मा के बदले अपने पैरों को थकाने की तैयारी में थे। वे मॉण्टगोमरी की सड़कों पर तब तक पैदल चलने को तैयार थे, जब तक कि न्याय की शक्तियों द्वारा रंगभेद की दीवारें ढाह न दी जायँ।

लेकिन इन कारणों से भी इस आन्दोलन की पूरी व्याख्या नहीं हो सकती। दूसरे शहरों के नीग्रो लोग भी इतनी ही खराब, और कई बार तो इससे भी निकृष्ट हालतों का सामना करते रहे हैं। इसलिए मॉण्टगोमरी की कहानी की व्याख्या हम केवल यह कहकर नहीं कर सकते कि यहाँ के लोगों ने बहुत तकलीफें उठायी हैं। हम इस कहानी की व्याख्या यह कहकर भी नहीं कर सकते कि मॉण्टगोमरी के नेतागण बहुत संगठित थे; क्योंकि इस आन्दोलन के पहले नेताओं में व्याप्त आपसी मनमुटाव और फूट को भी हम देख चुके हैं। हम यह तर्क भी नहीं दे सकते कि मॉण्टगोमरी में नया नेतृत्व पैदा हो गया था। अगर इस आन्दोलन के नेता पैदा न भी हुए होते, तो भी यह किस्सा अवश्य घटित होता।

सभी तर्कपूर्ण व्याख्याएँ किसी-न-किसी बिन्दु पर पहुँचकर टूट ही जाती हैं। इस आन्दोलन में कुछ ऐसा है, जो तर्क से भी ऊपर है; जिसकी कि बिना दैवी शक्ति में श्रद्धा रखे व्याख्या नहीं की जा सकती। बहुत-से लोग भिन्न-भिन्न नामों से इसका विश्लेषण कर सकते हैं। वे नाम कुछ भी हों, परन्तु मानवीय शक्ति से ऊपर की कोई शक्ति ही, जो इस बिखरे हुए विश्व-मण्डल में एकता पैदा करती है, इसका संचालन कर रही थी। ईश्वर अपने आशयों को अभिनीत करने के लिए इतिहास के माध्यम से काम कर रहा था। ऐसा लगता है, जैसे ईश्वर अमेरिका में स्वतन्त्रता और न्याय को प्राप्त करने के आन्दोलन के लिए मॉण्टगोमरी को एक निर्णायक भूमिका के रूप में उपयोग में लाना चाहता है। पुराने दक्षिण के प्रतीक इस मॉण्टगोमरी से बेहतर और दूसरा स्थान हो भी कौन सकता था? हमारे युग का यह कैसा व्यंग्य है कि संयुक्तता का पालना माने जानेवाली मॉण्टगोमरी अब स्वतन्त्रता और न्याय के पालने का रूप बदलने जा रही थी।

यह ५ दिसम्बर १९५५ का सोमवार का ऐतिहासिक दिन अब समाप्त होने जा रहा था। हम सभी अपने-अपने घरों को जा रहे थे। हम स्वयं पूरी तरह यह समझ नहीं पा रहे थे कि आज क्या हुआ है! प्रेरणापूर्ण विचारों से भरी हुई दिसम्बर महीने की यह रात कभी भुलायी नहीं जा सकेगी। उस रात को हम एक ऐसा आन्दोलन प्रारम्भ कर रहे थे, जो सारे देश में फैलनेवाला था, जिसकी प्रतिध्वनि दुनिया के सभी देशों के लोगों के कानों में गूँजनेवाली थी। एक ऐसा आन्दोलन जो दमन करनेवाले को झकझोर डालेगा और दमित लोगों के लिए नयी आशा लायेगा। वह रात मॉण्टगोमरी के लिए एक ऐतिहासिक रात थी।

# आन्दोलन में गति-संचार

## ५

सोमवार की रात्रि को एक प्रकार का पर्वतारोहण करने के बाद जब मैं मंगलवार को सवेरे उठा, तो मुझे महसूस हुआ कि अब आसमान की ऊँचाई को छोड़कर वापस धरती पर आना है। बहुत सारी संगठनात्मक बातें मेरे सामने थीं। बिना परिपूर्ण योजना के आन्दोलन आगे नहीं चल सकता था।

आन्दोलन को मार्गदर्शन और दिशा प्रदान करने के लिए आवश्यक विभिन्न समितियों के बारे में मैं सोचने लगा। सबसे पहले एक स्थायी यातायात समिति की आवश्यकता थी, ताकि अपने-अपने काम पर जाने-वालों की समस्या का हल हो सके। मैं जानता था कि सत्रह हजार पाँच सौ नीग्रो यात्रियों को, जो कि दिन में दो बार बस-यात्रा करते थे, हम

लोग यातायात के आवश्यक साधन नहीं दे सकेंगे। अच्छे-से-अच्छे प्रबन्ध के बावजूद भी सभी लोगों को कुछ-न-कुछ तो चलना ही पड़ेगा। फिर भी हमें जहाँ तक हो सके, इस समस्या को हल करने का मार्ग निकालना चाहिए।

इस आन्दोलन को चालू रखने के लिए हमें अर्थ-संग्रह भी करना पड़ेगा। इसलिए एक अर्थ-समिति का गठन भी आवश्यक था। इसके अलावा हमें नियमित रूप से आम सभाओं के आयोजन भी करने पड़ेंगे, इसलिए एक कार्यक्रम समिति भी बनानी चाहिए। इसके अलावा समय-समय पर आन्दोलन के लिए नीति-निर्धारण करना भी आवश्यक होगा। अतः हमें ऐसे कुशल मस्तिष्कवाले व्यक्तियों की सहायता मिलनी चाहिए, जो सैद्धान्तिक रूप से सोच-समझकर कार्यकारिणी समिति के सामने सुझाव उपस्थित करें। इसलिए ऐसी एक नीति-निर्धारण समिति तो अनिवार्य ही थी।

इन सब बातों पर विचार करने के लिए मैंने अल्बामा नीग्रो बैप्टिस्ट सेण्टर में बुधवार को दस बजे कार्यकारिणी समिति की एक बैठक बुलायी। इस बैठक में सभी सदस्य उपस्थित थे। लगभग ढाई दिन गुजर जाने के बाद भी हमारा आन्दोलन ९९ प्रतिशत सफलता के साथ चल रहा था। इस पर सभी लोग बेहद प्रसन्न थे। हमने इस बैठक में अनेक समितियों का गठन किया। क्योंकि कार्यकारिणी समिति के सदस्यों की संख्या बहुत कम थी, इसलिए यह आवश्यक था कि एक ही व्यक्ति को कई समितियों में लिया जाय। जैसा कि सभी संगठनों में हुआ करता है, हमारे बीच में भी व्यक्तियों के अहं के टकराने की समस्या थी। इसलिए समितियों में ऐसे व्यक्तियों को ही एक साथ रखने की कोशिश की गयी, जो आसानी से मिल-जुलकर काम कर सकें। श्री रूफुस लुइस ने यातायात समिति की अध्यक्षता स्वीकार कर ली और श्री आर० जे० ग्लैस्को ने अर्थ-समिति की अध्यक्षता स्वीकार की। कार्यकारिणी समिति में भी पूर्ण नीग्रो समाज को प्रतिनिधित्व देने के विचार से हमने सदस्यों की,

संख्या में वृद्धि की। नीति-निर्धारण समिति के सदस्यों की नियुक्ति कुछ दिनों के बाद की गयी। इस नयी समिति में लगभग एक दर्जन ऐसे स्त्री-पुरुषों को लिया गया, जिन्होंने आन्दोलन के प्रारम्भ के दिनों में बहुत ही मजबूत नेतृत्व का प्रदर्शन किया था। उनके सुलझे हुए विचार, स्पष्ट चिन्तन और साहसपूर्ण मार्गदर्शन से अनेक कठिन प्रश्नों का निर्णय करने में कल्पनातीत सहायता मिलने को थी। श्री ई० डी० निक्सन और तेजस्वी कानूनवेत्ता श्री फ्रेड ग्रे को तो इस समिति में रहना ही था। उनके अलावा श्री रॉय बेनेट को भी, जिन्होंने इस आन्दोलन को प्रारम्भ करने के लिए की गयी पहली सभा की अध्यक्षता की थी और जब तक वे कैलिफोर्निया के एक चर्च के पादरी बनकर चले नहीं गये, तब तक आन्दोलन को हार्दिक समर्थन देते रहे। श्री एच० एच० हब्बर्ड और श्री ए० डब्ल्यू० विल्सन नाम के दो बैप्टिस्ट पादरियों ने भी मॉण्टगोमरी की दो सबसे बड़ी धर्म-परिषदों का इस समिति में प्रतिनिधित्व किया। श्री हब्बर्ड की महत्त्वपूर्ण उपस्थिति में सभी लोग बड़ी सुरक्षा का अनुभव करते थे तथा उनके साथी श्री विल्सन ने, जो कि अल्बामा बैप्टिस्ट सम्मेलन में बहुत महत्त्वपूर्ण पद पर काम कर चुके थे, अपनी संयोजन तथा संचालन-सम्बन्धी प्रतिभा के कारण इस समिति को बहुत मदद पहुँचायी। मॉण्टगोमरी के एक प्रसिद्ध डॉक्टर की पत्नी श्रीमती युरेटा अडेअर भी, जो किसी समय टस्केजी विद्यापीठ में अध्यापिका रह चुकी थीं और जिनमें बौद्धिकता तथा समाज-सुधार की आतुरता का सुन्दर समन्वय हुआ था, इस समिति में शामिल हो गयीं। आधुनिक बुद्धिजीवी वर्ग का प्रतिनिधित्व श्रीमती जो एन रॉबिन्सन तथा श्री जे० ई० पीअर्स ने किया। ये दोनों अल्बामा स्टेट कॉलेज में प्राध्यापक थे और इन दोनों ने जनता की समस्याओं के प्रति कभी उदासीनता नहीं दिखायी। श्री रुफुस लुइस भी इस समिति में आये। यह एक व्यापारी थे और नीग्रो लोगों को भी प्रथम श्रेणी की नागरिकता दिलाने के आन्दोलन में प्रारम्भ से ही इन्हें दिलचस्पी थी। शुरू में जो

यातायात-समिति बनी थी, उसके अध्यक्ष वे ही बनाये गये थे। इस आन्दोलन के कई महीनों बाद जब मॉण्टगोमरी विकास संघ की प्रवृत्तियाँ बढ़ीं और नीग्रो लोगों के नाम मतदाता-सूची में लिखाये जाने के लिए अलग से एक समिति बनायी गयी, तो उसकी अध्यक्षता भी इन्हींको सौंपी गयी थी और इसे वे अभी भी निभा रहे हैं।

श्री बेनेट की भाँति श्री डब्ल्यू० जे० पॉवेल और श्री एस० एस० सीए भी ए० एम० ई० जिओन चर्च के पादरी थे। श्री पॉवेल बहुत ठण्डे दिमाग के थे और उन उद्वेगपूर्ण दिनों में भी, जब कि नीति-निर्धारण समिति को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा, वे सदा शान्त रहे। श्री सीए उन इने-गिने पादरियों में से थे, जिन्होंने आन्दोलन के पहले के वर्षों में नीग्रो-समुदाय पर होनेवाले अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठायी थी और नीग्रो-समुदाय से यह अपील की थी कि वे अपने मूल्य और महत्त्व को समझें। वे एक तेजस्वी वक्ता थे। समय-समय पर उनके भाषणों को जिस-जिसने भी सुना, उसीके हृदय में एक नयी प्रेरणा उत्पन्न हुई।

नीति-निर्धारण समिति के आखिरी सदस्य श्री एबरनाथी तो आन्दोलन के मोरचे पर पहले से ही थे। वे भी उन इने-गिने नीग्रो पादरियों में से थे, जो सामाजिक कार्यों में लम्बे समय से सक्रिय थे। यद्यपि उनकी उम्र उस समय केवल २९ वर्ष की थी, परन्तु नीग्रो-मुक्ति के उद्देश्यों के प्रति उनकी निष्ठा तर्कातीत थी। नाटे और गठीले शरीर तथा विचारशील मुख-मुद्रा के कारण वे अपनी उम्र से कहीं अधिक प्रौढ़ दीख पड़ते थे। परन्तु उनके चेहरे पर एक बालसुलभ मुस्कान हमेशा खेलती रहती थी। एबरनाथी का भोलापन और उनकी सीधी तथा सरल बातों के कारण लोग उनके बारे में धोखा खा जाते थे। वास्तव में वे एक शानदार कार्यकर्ता, गम्भीर चिन्तक और उर्वर मस्तिष्क के व्यक्ति थे। वक्ता के रूप में वे तेजस्वी तथा प्रभावशाली थे तथा उनके भाषण श्रोताओं को खूब हँसानेवाले होते थे। जब आम सभाओं में वातावरण

फीका होने लगता था, तब श्री एबरनाथी की ही पुकार होती थी और वे श्रोताओं में नये जीवन का संचार कर देते थे। लोगों ने उन्हें शक्ति तथा साहस के प्रतीक के रूप में स्नेह और आदर दिया।

आन्दोलन के प्रारम्भ से ही श्री एबरनाथी मेरे निकटतम सहयोगी और विश्वासपात्र साथी थे। हमने साथ मिलकर प्रार्थनाएँ कीं और साथ मिलकर ही महत्त्वपूर्ण निर्णय भी लिये। उनका हाजिरजवाब तथा विनोदी स्वभाव तनावपूर्ण क्षणों में भी हलकापन एवं मनोरंजन भर देता था। जब भी मैं शहर से बाहर जाता था, तब हमारे विकास संगम के मुख्य कामों की जिम्मेवारी उन्हीं पर छोड़कर जाता था। मुझे विश्वास रहता था कि मेरा काम सुरक्षित हाथों में है। जब श्री बेनेट मॉण्टगोमरी से कैलिफोर्निया चले गये, तब हमारे विकास संगम के उपाध्यक्ष के पद पर श्री एबरनाथी ही नियुक्त किये गये और तब से वे उस पद को बड़ी कुशलता एवं प्रतिष्ठा के साथ सँभाल रहे हैं।

यहाँ मैंने जिन लोगों का परिचय दिया है, वे ऐसे लोग हैं, जिनके साथ मैंने प्रारम्भ से ही मिल-जुलकर काम किया था। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों नये लोग भी शामिल होते गये। इन नये लोगों में, जो कि हमारी कार्यकारिणी समिति में लिये गये, श्री रॉबर्ट ग्रेट्ज भी एक थे। उनके साथ मेरी पहली मुलाकात मानवीय सम्बन्ध परिषद् में हुई थी। नीग्रो ट्रिनिटी ल्यूदरान चर्च का यह तरुण पादरी आन्दोलन के दिनों में हमें बराबर इस बात की याद दिलाता रहता था कि बहुत-से गोरे और नीग्रो भाई अपने पड़ोसी को अपनी ही तरह प्यार करने का क्रिश्चियन सिद्धान्त अपने जीवन में उतारने की कोशिश कर रहे थे। जो लोग बाद में कार्यकारिणी समिति में दाखिल हुए, उनमें श्री क्लेरेन्स डब्ल्यू० ली भी थे, जो कि अलग से ही दीख पड़नेवाले एक लम्बे कद के प्रभावशाली व्यक्ति थे। उनकी गहरी कार्यक्षमता ने हमारे संगठन को बड़ी मदद पहुँचायी और श्री मोसेस डब्ल्यू० जॉन्स एक

प्रसिद्ध डॉक्टर भी हमारे सहकर्मी बने थे। बाद में ये मॉण्टगोमरी विकास निगम के द्वितीय उपाध्यक्ष बनाये गये।

जब भी कोई आपत्कालीन परिस्थिति हमारा ध्यान आकृष्ट करती थी, हम लोग वक्त-बेवक्त का ध्यान रखे बिना मिलते रहते थे। कभी-कभी रात को दो-तीन बजे भी हम लोगों में से किसीके घर में हमारी मीटिंग चलती रहती थी। ऐसे अवसर कम नहीं आते थे। हमारी पत्नियाँ कॉफी के प्याले तैयार करती रहतीं और हमारी अनौपचारिक चर्चाओं में भाग भी लेती रहती थीं। हम लोग तरह-तरह की योजनाएँ बनाते और नीति-सम्बन्धी मतभेदों को पार करके सहमति की मंजिल तक पहुँचते। हमारी इन गोष्ठियों के लिए किसी भी प्रकार के संसदीय नियमों की जरूरत नहीं पड़ती थी। हममें से अधिकांश की जो राय होती, उसीको हम सब लोग मान लेते थे।

आन्दोलन के शुरू के दिनों में यातायात की समस्या ने हमारा सबसे अधिक समय लिया। इस समस्या को हल करने में जितना श्रम और जितनी कल्पना-शक्ति हमें लगानी पड़ी, वह मॉण्टगोमरी की कहानी का बहुत ही दिलचस्प अध्याय है। पहले के कुछ दिन तो हम लोग नीग्रो टैक्सी कम्पनियों के भरोसे पर रहे, जिन्होंने यह वादा किया था कि बस जितना ही किराया लेकर वे नीग्रो लोगों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचायेंगे। कुछ निजी कारों के अलावा ये टैक्सियाँ ही लोगों के लिए यातायात का एकमात्र साधन थीं। परन्तु बृहस्पतिवार, ८ दिसम्बर को नगर के अधिकारियों के साथ हमारी जो पहली 'समझौता-वार्ता' हुई, उसमें पुलिस-कमिश्नर ने इस कानून की ओर थोड़ा-सा इशारा किया था कि टैक्सियों के लिए तय हुआ जो न्यूनतम किराया है, उससे कम किराया लेकर कोई भी व्यक्ति टैक्सी नहीं चला सकता। उसी समय मैंने उनके इशारे को पकड़ लिया तथा समझ गया कि टैक्सी-कम्पनियाँ हमारे आन्दोलन में जो मदद पहुँचा रही हैं, उसे बन्द करने में पुलिस-अधिकारी इस कानून का उपयोग कर सकते हैं।

मुझे याद आया कि मेरे एक अच्छे मित्र श्री थियोडोर जेमिसन ने लुइसियाना राज्य के बैटनरोग नगर में उसी तरह का एक बस-बहिष्कार-आन्दोलन कुछ दिन पहले चलाया था। मुझे यह भी मालूम था कि उन लोगों ने निजी कारों को आपस में बाँटने का एक प्रभावकारी तरीका आजमाया था। मैंने उनके सुझाव जानने के लिए एक ट्रंककॉल बुक किया। उन्होंने जो अनुभवों की जानकारी मुझे दी, वह मेरी आशा के अनुकूल ही, हमारे लिए बहुत ही मूल्यवान् साबित हुई। मैंने पुलिस-अधिकारी के इशारे की बात और श्री जेमिसन के सुझाव तुरन्त ही यातायात-समिति के सामने रखे। मैंने यह भी कहा कि हमको अविलम्ब ही अपनी निजी कारों द्वारा लोगों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने की व्यवस्था को मजबूत बनाना चाहिए, ताकि यदि टैक्सियों को हमारे आन्दोलन की सहायता करने से अलग होने के लिए मजबूर होना पड़े तो भी हम परेशानी में न पड़ें।

सौभाग्य से उसी शाम को एक आम सभा होनेवाली थी। सभा में मैंने यह बात सबके सामने रखी और कहा कि जो-जो लोग इस तरह स्वेच्छा से यातायात-समिति की व्यवस्था के अन्तर्गत अपनी कारों की सेवाएँ देना चाहें, वे अपने नाम-पते और टेलीफोन नम्बर लिखकर हमें दे दें। साथ ही वे यह भी लिखकर दे दें कि दिन में कितने बजे से कितने बजे तक वे अपनी सेवाएँ दे सकेंगे। इसका उत्तर बहुत ही गजब का मिला। डेढ़ सौ से भी अधिक व्यक्तियों ने अपने-अपने नाम-पते आदि लिखकर हमें दिये। कुछ ऐसे लोग, जो कहीं काम नहीं करते थे, पूरे दिन के लिए कार चलाने को तैयार थे। जो लोग काम करते थे, उन्होंने काम के पहले और बाद में कुछ घण्टों तक कार चलाकर लोगों को एक जगह से दूसरी जगह पहुँचाने के लिए अपना नाम दिया, इसके अलावा जितने भी पादरी वहाँ उपस्थित थे, उन्होंने यह वादा किया कि जिस समय भी जरूरत पड़ेगी, वे अपनी सेवाएँ अर्पित करने को तैयार हैं।

शुक्रवार की शाम को, जैसा कि मुझे पहले से ही अन्दाज था, पुलिस-अधिकारी ने टैक्सी-कम्पनियों के नाम एक आदेश निकालकर उन्हें इस कानून की याद दिलायी कि उन्हें यात्रियों से ४५ सेंट का न्यूनतम किराया वसूल करना ही चाहिए। जो कोई भी इस नियम का उल्लंघन करेगा, वह कानून तोड़ने का अपराधी होगा। इस आदेश के कारण सस्ते में प्राप्त होनेवाली टैक्सियों की सुविधा समाप्त हो गयी।

हमने तुरन्त उन लोगों को सूचित किया, जिन्होंने अपनी-अपनी कारों में लोगों को ले जाने का वादा किया था। वे सब तुरन्त हाजिर हो गये। लोगों ने बिना किसी खास तरीके के मॉण्टगोमरी की सड़कों में एक जगह से दूसरी जगह जानेवाले नीग्रो यात्रियों को कारों में पहुँचाना शुरू किया। शनिवार को सभी पादरियों ने यह तय किया कि वे रविवार को अपने प्रवचन में और भी नये लोगों को इस काम में मदद करने की अपील करेंगे तथा उनके नाम प्राप्त कर लेंगे। जब उन्होंने ऐसा किया तो और भी बड़ी संख्या में नाम मिले। इस तरह लगभग तीन सौ कारें हमारे पास हो गयीं।

अब हमारे सामने मुख्य कार्य यह था कि हम इन तीन सौ कारों के लिए निश्चित 'रूट' सारे तय करें, ताकि ये कारें शहर में किसी निश्चित तरीके के अभाव में यों ही घूमती न रहें। यातायात-समिति सारी रात शाम से सुबह तक व्यवस्थित ढंग से 'रूट' तय करने में कितने ही दिन लगी रही। आखिर हमने कारों में चढ़ाने और वापस उतारने के कुछ निश्चित स्टेशन बनाये। उन स्टेशनों पर यात्री लोग इकट्ठे हो जाते थे। सुबह छह से दस बजे तक और शाम को तीन से सात बजे तक इन स्टेशनों पर कारें उपलब्ध रहती थीं।

इसके बाद मुश्किल सवाल यह था कि इन स्टेशनों के लिए ऐसे कौन-से स्थान हों, जो पूरे नगर के लोगों की पहुँच में आ सकें। हमारे लिए ऐसे स्टेशनों के लिए स्थान ढूँढ़ना तो फिर भी आसान था, पर

से कामों पर पहुँचाने के लिए नीग्रो यात्रियों को लेकर जाना था। क्योंकि ये स्टेशन प्रायः नीग्रो-बस्तियों में ही स्थापित करने थे। परन्तु कामों पर से उनको वापस घरों तक पहुँचाने के लिए स्टेशनों के स्थान ढूँढ़ने में हमें बड़ी कठिनाई हो रही थी। बसों में चढ़कर जानेवाले अधिकांश लोग गोरे मालिकों के यहाँ काम करते थे, अतः उन लोगों को लाने के लिए गोरे लोगों के मोहल्लों में हमें स्टेशन स्थापित करने थे। परन्तु उन मोहल्लों की जानकारी हम लोगों को बहुत ही कम थी। सौभाग्य से हमारी यातायात-समिति में दो डाकिये भी थे, जो शहर को एक सिरे से दूसरे सिरे तक अच्छी तरह जानते थे। उनकी सहायता से और नगर के नक्शे सामने रखकर हमने स्टेशनों के स्थानों का निर्धारण करना शुरू किया। समिति के प्रमुख सदस्य श्री आर० जे० ग्लास्को तथा समिति के अध्यक्ष श्री रूफुस लुइस ने समिति के अन्य सदस्यों के साथ बैठकर स्टेशनों के स्थानों की रूपरेखा तैयार कर ली। १३ दिसम्बर, मंगलवार तक सारे मार्ग भी निश्चित हो गये। साइक्लोस्टाइल किये हुए हजारों परचे इस सम्बन्ध में पूरे नीग्रो-समाज में बाँट दिये गये। इनमें ४८ ऐसे स्टेशनों की सूची दी गयी, जहाँ से नीग्रो यात्रियों को कारें उठायेंगी और उन्हें अपने-अपने काम पर पहुँचायेंगी तथा ४२ ऐसे स्टेशनों की सूची थी, जहाँ से नीग्रो यात्रियों को उठाकर उन्हें वापस अपने-अपने घर पहुँचाया जायगा। ये सूचियाँ भी सब जगह बाँट दी गयीं। नीग्रो यात्रियों को काम पर पहुँचाने के लिए जो स्टेशन बनाये गये थे, वे अधिकांश नीग्रो चर्चों पर थे। प्रत्येक सुबह चर्च के दरवाजे जल्दी खोलकर सभी चर्चों के अधिकारियों ने बहुत सहयोग किया, जिससे यात्रीगण कारों की प्रतीक्षा करते समय चर्चों के अन्दर बैठ सकते थे। बहुत-से चर्चों ने तो कड़कड़ाती सर्दियों में गरम 'हीटरों' का प्रबन्ध भी किया। सभी कारों पर यह जिम्मेदारी डाली गयी थी कि वे सुबह के निश्चित स्टेशनों पर एकत्रित यात्रियों को प्रतिदिन ले जायँ और शाम को किसी निश्चित स्टेशन पर से यात्रियों को वापस लायें। एक

स्टेशन पर कितनी कारें रहेंगी, इसका निश्चय उस स्टेशन से चढ़नेवाले यात्रियों की संख्या के अनुसार तय किया गया। हमारा सबसे बड़ा स्टेशन शहर के मध्यभाग में स्थित कारों का एक ऐसा अड्डा था, जिसका मालिक एक नीग्रो ही था। इस स्थान का हमने सुबह और शाम दोनों के स्टेशन के रूप में इस्तेमाल किया।

कुछ ही दिनों में यातायात का हमारा यह प्रबन्ध आश्चर्यजनक रूप से व्यवस्थित होकर चलने लगा। हमारे आन्दोलन के विरोधी गोरे लोग भी इससे अत्यन्त प्रभावित हुए। हमारी शीघ्र व्यवस्था के इस चमत्कार को देखकर गोरे नागरिकों की परिषद् के एक समारोह में यह कहा गया कि नीग्रो लोगों द्वारा निजी कारों का आपसी साझा एक सैनिक प्रबन्ध की तरह नियमित और ठीक-ठीक चल रहा है। मॉण्टगोमरी निवास संगम ने उस व्यवस्था को कुछ ही दिनों में जमा लिया, जिसके लिए बस-कम्पनी सालों तक उलझी व परेशान रही थी।

इस सफलता के उपरान्त भी लोगों के जीवन में आन्दोलन की भावना ने ऐसी गहरी जड़ जमा ली थी कि अनेक बार लोग यातायात के साधनों के उपलब्ध होने के बावजूद पैदल चलकर ही अपने काम पर पहुँचना ज्यादा पसन्द करते थे; बहुत-से लोगों के लिए पदयात्रा एक प्रतीक की भाँति महत्त्वपूर्ण बन गयी थी। एक बार एक वृद्ध महिला बड़ी कठिनाई से सड़क पर पैदल चली जा रही थी। साझे की कार के एक चालक ने उसे देखकर कहा : "दादीजी, आप कार में चली आइये। आपको पैदल चलने का कष्ट उठाने की कोई जरूरत नहीं है!" उस वृद्ध महिला ने चालक को हाथ से इशारा करते हुए कहा : "भैया, मैं अपने लिए पैदल नहीं चल रही हूँ। मैं तो अपने बेटे-पोतों के लिए यह कष्ट उठा रही हूँ।" और वह पैदल ही अपने घर की ओर बढ़ती रही।

यद्यपि साझे की कारें चलानेवालों में सबसे बड़ी संख्या पादरियों की थी, पर उन चालकों की पंक्ति को अनेक गृहिणियों, अध्यापकों, व्यापारियों और श्रमिकों ने अपनी सेवाएँ देकर बड़ा किया। सामुदायिक के

अड्डे पर काम करनेवाले तीन गोरे व्यक्तियों ने भी खाली समय में साझे की कारें चलाने का काम किया। बहुत ही विश्वासपात्र ड्राइवरों में से एक, श्रीमती ए० डब्ल्यू० वेस्ट थीं, जिन्होंने कि इस आन्दोलन के विचार को क्रियान्वित करने में बहुत उत्साह दिखाया था और हमारी सबसे पहली बैठक के लिए सामाजिक नेताओं को आमन्त्रित करने में मदद की थी। इन्होंने अपनी बड़ी-सी हरे रंग की 'कॅडलक कार' को लेकर सुबह और शाम घण्टों हमारी मदद की। इस रजतकेशी सुन्दर और असाधारण महिला ड्राइवर को हमारी मदद में जुटे हुए कोई भी कभी भी देख सकता था।

इसके अलावा श्रीमती जो एन रॉबिन्सन भी बहुत ही विश्वासी ड्राइवर थीं। यह आकर्षक, गेहुँए रंगवाली और तरुण-हृदय महिला अपने अच्छे स्वभाव के कारण ही हमारे आन्दोलन में थीं। उन्होंने अहिंसा का सिद्धान्त किसी किताब से नहीं सीखा। वह तो उनके जीवन में ही बसा हुआ था। श्रीमती जो एन ने हमारे आन्दोलन के हर क्षेत्र में अपनी सक्रियता शायद किसी भी अन्य व्यक्ति से अधिक दिखायी। वह कार्यकारिणी समिति तथा नीति-निर्धारण समिति में भी बराबर आती थीं। कुछ महीनों बाद जब मॉण्टगोमरी विकास संगम की ओर से एक समाचार-पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया गया तो उन्होंने उसके सम्पादन का भार सँभाला। अधिकारियों के साथ चलनेवाली समझौता-वार्ता में भी ये नियमित रूप से उपस्थित होतीं; हालाँकि उनके ऊपर अल्बामा स्टेट कॉलेज में पूरे समय पढ़ाने का भार था; फिर भी सुबह और शाम नीग्रो-यात्रियों को यातायात की सुविधा प्रदान करने के लिए वे समय निकाल ही लेतीं। हमारे ड्राइवरों की संख्या एक और अज्ञात स्रोत से भी बढ़ गयी थी। बहुत-सी ऐसी गोरे घरों की गृहिणियाँ थीं, जो कि रंगभेद में भले ही विश्वास करती रही हों, परन्तु अपनी नौकरानियों के बिना काम नहीं चला सकती थीं। इसलिए वे प्रतिदिन सुबह नीग्रो मुहल्ले में आकर अपनी नौकरानियों को अपनी कारों में

ले जाती थीं और शाम को वापस छोड़ जाती थीं। हालाँकि इसमें उन गृहिणियों का ही स्वार्थ था, परन्तु अपनी विश्वासपात्र नौकरानियों के प्रति उनका स्नेह भी इसका एक कारण था। इन गोरे मालिकों और नीग्रो सेवकों के बीच कई तरह के विनोद भी चलते थे।

एक वृद्ध नीग्रो नौकरानी से एक धनी मालकिन ने पूछा : "देखो न, यह बस-बहिष्कार कितना भयानक है! है न?" उस वृद्ध महिला ने उत्तर दिया : "हाँ मालकिन, निश्चय ही यह भयानक है! और मैंने अपने सभी बच्चों को कह दिया है कि यह सब गोरे लोगों का धन्धा है! हमारा भला इसीमें है कि जब तक ये गोरे लोग इस मामले को निपटा न दें, हम लोग बसों में न चढ़ें।"

ज्यों-ज्यों दिन बीते, हमारी खाली की कारों की संख्या भी बढ़ती गयी। कुछ दिनों बाद यातायात-समिति की अध्यक्षता का भार [illegible] के बैप्टिस्ट चर्च के पादरी तथा कॉलेज के प्रोफेसर श्री बी० जे० सिम्स ने उठा लिया। उन्होंने अपने से पहले के अध्यक्ष श्री रूफस लुइस द्वारा कुशलतापूर्वक चलाये गये काम को बड़ी योग्यता के साथ निभाया, और अपनी ओर से कई रचनात्मक तत्त्व भी उसमें जोड़े। यातायात-समिति के कार्यालय में छह स्वयंसेवकों का 'स्टाफ' हो गया था। दिनभर कारें चलाते रहने के लिए २५ से भी अधिक वैतनिक ड्राइवर रखे गये, जो सप्ताह में छह दिन काम करते थे। लगभग सभी स्टेशनों पर कुछ वैतनिक कर्मचारी रखे गये, ताकि सारा काम सरलता और आसानी से चले। इन कर्मचारियों के ऊपर श्री जे० एच० बेरी को अधिकारी नियुक्त किया गया और उनका केन्द्र शहर के बीच में कारों के अड्डे पर बनाये गये स्टेशन में रखा गया। उनके काम का मूल्य कल्पनातीत था। इनके अलावा श्री रिचर्ड हैरिस भी, जो एक नीग्रो औषधि-विक्रेता थे, हमारे यातायात के काम में बहुत सहायक थे। वे अपनी दवाओं की दुकान से ही टेलीफोन द्वारा सुबह से शाम तक कारों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए निर्देश दिया करते थे। उनकी दुकान के

ग्राहक इस शक्तिशाली तरुण व्यापारी को देखकर अचरज करते थे कि किस तरह वे टेलीफोन कान पर लगाये, विभिन्न कारों को विभिन्न स्थानों पर जाने का निर्देश दे रहे हैं और उसके साथ ही लोगों को दवाइयाँ भी देते जा रहे हैं।

आखिर में पन्द्रह से भी अधिक नयी स्टेशन वैगन मोटरें भी हमने खरीद लीं। सन् १९५६ के मॉडेल की ये सभी मोटरें विभिन्न चर्चों की सम्पत्ति के रूप में 'रजिस्टर' की गयीं। इन मोटरों के आगे और बगल में उन चर्चों के नाम की पट्टी भी टाँग दी गयी। चलते-फिरते चर्च की तरह ये मोटरें जब यात्रियों को लेकर जाती थीं तो कभी-कभी इनकी खिड़कियों में से धार्मिक गीतों की धुन भी सुनायी देती थी। कभी-कभी भीड़ से भरी हुई मोटरों में जगह न मिलने के कारण पैदल जानेवाले यात्री जब अपने इस 'चर्च' को देखते थे तो वे हाथ हिलाकर उसका अभिवादन करते थे और एक नये जोश के साथ आगे चलने लगते थे।

यह यातायात की व्यवस्था आपसी सहयोग और संयोजन का एक बेहतरीन नमूना था। देश के कोने-कोने से आये हुए दर्शकों और पत्रकारों ने इसे अद्वितीय सफलता के रूप में स्वीकार किया। लेकिन इस काम को करने में काफी पैसा लगता था। प्रारम्भ में तो मॉण्टगोमरी विकास संगम ने स्थानीय लोगों से चन्दा एकत्रित करके काम चलाया। मॉण्टगोमरी के गरीब या अमीर सभी तरह के नीग्रो नागरिकों ने जो कुछ भी दे सकते थे, दिया। कभी-कभी तो दानपेटी में २५ सेण्ट और १० सेण्ट के छोटे-छोटे सिक्के भी आते थे। परन्तु ज्यों-ज्यों काम बढ़ा, त्यों-त्यों खर्च भी बढ़ा, इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि हमें बाहरी मदद की आवश्यकता होती। मॉण्टगोमरी विकास संगम का मासिक खर्च ५ हजार डॉलर तक पहुँच गया था।

सौभाग्य से अखबारों ने मॉण्टगोमरी के संघर्ष की कहानी का सारे संसार में खूब प्रचार कर दिया था। यद्यपि हमने चन्दे के लिए कोई

सार्वजनिक निवेदन नहीं किया था; फिर भी टोकियो जैसे दूर-दूर के स्थानों से भी चन्दा आने लगा। मॉण्टगोमरी विकास संगम के नेतागण चन्दा एकत्रित करने के लिए देश के कोने-कोने से आमन्त्रित किये जाने लगे। प्रत्येक दिन किसी-न-किसी चन्दा देनेवाले को लेकर आता था और प्रत्येक डाक कोई-न-कोई चेक लेकर आती थी। कभी-कभी यह सहायता पाँच हजार डॉलर जितनी बड़ी राशि के रूप में होती थी, तो कभी-कभी एक डॉलर जितनी छोटी राशि के रूप में। कुल मिलाकर हमें दो लाख पचास हजार डॉलर प्राप्त हुए।

हमें सबसे ज्यादा सहायता विभिन्न चर्चों से मिली— विशेषकर नीग्रो चर्चों से। बहुत-सी पादरियों की संस्थाओं ने बड़ी उदारता के साथ हमारी सहायता की। यह कहना उचित ही होगा कि संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रत्येक नगर के चर्चों से हमें सहायता प्राप्त हुई। मजदूरों, नागरिकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं के संगठनों ने हमारा विशेष रूप से समर्थन किया। बहुत-से स्थानों पर तो हमारे आन्दोलन का समर्थन करने के लिए ही नयी-नयी संस्थाओं की स्थापना की गयी। अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था की लगभग सभी शाखाओं ने बड़ी उदारता के साथ हमारा साथ दिया। इस संस्था के प्रबन्ध-मन्त्री ने अपनी सभी शाखाओं को यह लिखा था कि मॉण्टगोमरी के आन्दोलन के लिए नैतिक और आर्थिक सहयोग पहुँचाया जाय। यह उन अनेक तरीकों में से एक था, जिनके द्वारा यह संस्था हमें आनेवाले दिनों में बल पहुँचानेवाली थी।

देश और विदेश के तथा गोरे और नीग्रो-समुदाय के अनेक सामान्य नागरिकों ने भी हमें आर्थिक सहयोग दिया। इस चन्दे के साथ इन लोगों की जो चिट्ठियाँ आती थीं, वे हमारे हृदय में प्रेरणा पैदा करती थीं तथा हम अपने ही समुदाय में जो अकेलापन महसूस करते थे, उसे दूर करती थीं। पेनसिल्वेनिया राज्य से एक सौ डॉलर का एक चेक आया, उसके साथ टेढ़े-मेढ़े अक्षरों में लिखा हुआ एक वृद्ध महिला का पत्र था:

"आपका काम अद्भुत है और हमारे देश के इतिहास में अभूतपूर्व है। निश्चय ही यह आन्दोलन युगनिर्माणकारी है और इसका प्रभाव दूरगामी होगा। ईश्वर ने कहा है: 'जबरदस्ती से नहीं, सत्ता से भी नहीं, किन्तु जाग्रति के द्वारा'—यह मॉण्टगोमरी विकास संगम का नारा हो सकता है।" इसी तरह एक भूतपूर्व न्यायाधीश ने लिखा: "आपने दिखा दिया है कि आखिरकार शालीनता और साहस की ही विजय होगी।" सामने खड़ी समस्या शायद अब तक सुलझी नहीं होगी, किन्तु आपका विश्वास और दृढ़प्रतिज्ञता अपना कमाल दिखाकर ही रहेगी। अन्याय करनेवालों ने अब तक अपने-आप ही महसूस कर लिया होगा कि वे एक निर्दय, किन्तु हारती हुई लड़ाई लड़ रहे हैं। सारा देश आपका अभिवादन कर रहा है तथा यह प्रार्थना कर रहा है कि आपको शीघ्र ही विजय और सुख प्राप्त हो।"

सिंगापुर से एक आश्वासनभरा पत्र मिला: "आप जो कुछ कर रहे हैं, वह हमारे लिए एक सच्ची प्रेरणा है; क्योंकि हम दुनिया के इस कोने में जनतंत्र और अधिनायकवाद के बीच संघर्ष छेड़े हुए हैं।" समुद्र में तैरते हुए एक जहाज के नाविकों ने समुद्री तार करके हमें सूचित किया: "न्याय के लिए किये जानेवाले संघर्ष के साथ हमारी पूर्ण सहानुभूति है और हम आपकी सफलता के लिए प्रार्थना करते हैं।" और एक स्विस महिला ने, जिसके साथी और पति इस संघर्ष के उद्देश्य को समझ नहीं पा रहे थे, अपने निजी पैसे बचाकर हमें भेजे, जो कि इस तरह सामान्य व्यक्तियों से प्राप्त होनेवाली बड़ी धनराशि में से एक थे। उसने लिखा: "क्योंकि मेरे लिए सम्भव नहीं है कि मैं आपको वास्तव में कोई फलदायक सहायता पहुँचा सकूँ। (विश्वास कीजिये, यह विवशता बहुत बुरी लगती है) परन्तु मेरे हृदय में कुछ-न-कुछ करने की एक अग्नि-सी जल रही है। मैं आपको पाँच सौ डॉलर भेज रही हूँ। अगर आप इसे स्वीकार करेंगे, तो मुझे परम आनन्द प्राप्त होगा। क्योंकि इसके अलावा और तो मैं कर भी क्या सकती हूँ!"

भारत में मॉन्टगोमरी-आन्दोलन का संसार पर बड़ा भारी असर पड़ा। परन्तु जहाँ ये पत्र हमारे लिए उत्साहवर्धक थे, वहीं उन्होंने मुझमें कुछ निराशा भी पैदा की; क्योंकि मॉन्टगोमरी विकास संगम के पास ऑफिस तथा कर्मचारियों की पूरी सुविधा नहीं थी और किसी सहायक के अभाव में बहुत-से जरूरी पत्र भी बिना उत्तर दिये ही रह गये। यहाँ तक कि आर्थिक सहायता के प्राप्त होने की सूचनाएँ या रसीदें भी अक्सर नहीं जा पाती थीं। ज्यों-ज्यों मैं अपनी इन अयोग्यताओं के बारे में सोचता था, त्यों-त्यों मैं ज्यादा परेशान होता था।

मेरी परेशानी का तो कोई ठिकाना ही नहीं था। आन्दोलन प्रारम्भ होने के बाद कई सप्ताह गुजर जाने पर भी लोग पाँच बजे सवेरे से मुझे टेलीफोन करना शुरू करते थे। शायद ही कोई ऐसी रात गयी हो, जब बारह बजे से पहले टेलीफोन बजना बन्द हुआ हो। इस तरह रात और दिन का प्रत्येक घण्टा बड़ा व्यस्त बीतता था। कभी कोई भूतपूर्व बस-यात्री महिला फोन करती कि मुझे अमुक समय पर काम के लिए पहुँचना है और अमुक समय पर वापस आना है। कृपया मेरे निश्चित समय के लिए यातायात का प्रबन्ध कीजिये। कभी हमारा कोई मोटर-ड्राइवर शिकायत करता कि यात्रीगण उसे तंग कर रहे हैं। कभी कोई यात्री शिकायत करता कि मोटर-ड्राइवर बहुत गुस्सेबाज है; कभी कोई ड्राइवर कहता कि उसकी कार खराब हो गयी है। कभी कोई घरेलू नौकरानी कहती कि अगर मैं साधारण बसों द्वारा जाना-आना प्रारम्भ नहीं करूँगी तो मेरा मालिक मुझे नौकरी से निकाल देने की धमकी देता है और कभी-कभी तो ऐसे लोगों के फोन आते, जो केवल इतना-भर जानना चाहते थे कि अमुक स्थान के आसपास 'कार-स्टेशन' कहाँ है? कभी-कभी कुछ लोग यह भी फोन पर बताते कि अमुक ड्राइवर यात्रियों से पैसा वसूल कर रहा है। इसलिए बजाय इसके कि हमारी सम्पूर्ण यातायात-व्यवस्था गैरकानूनी करार दी जाय, इस तरह के भ्रष्टाचार को रोकना चाहिए।

हमने यह अनुभव किया कि इस तरह की समस्याओं का हल करने के लिए एक अच्छा दफ्तर चाहिए। प्रारम्भ में तो हमने कुछ स्वयं-सेवकों की सहायता से ही सारा काम चलाने की कोशिश की। पर वह पर्याप्त नहीं था। इसलिए हमने पूरे समय का एक वैतनिक सचिव रखा, जो इस तरह के कामों को नियमित रूप से करता। इसके अलावा हमने यातायात-समिति के लिए और एक वैतनिक सचिव रखा, जो उस क्षेत्र में काम करता। ज्यों-ज्यों समय बीता, त्यों-त्यों पत्र-व्यवहार का काम भारी होता चला गया और यातायात की व्यवस्था में बारीकियाँ बढ़ती गयीं। इसलिए हमें अपने दफ्तर के लिए धीरे-धीरे करके दस कार्यकर्ता रखने पड़े। कार्यकर्ताओं की इस वृद्धि के साथ तथा प्रशासनिक कामों की बहुलता के कारण कार्यकारिणी समिति ने श्री आर० जे० ग्लास्को को मेरे सहायक के रूप में दिया। दफ्तर के काम के लिए वैतनिक कार्यकर्ताओं को रखने से, यातायात-समिति का अलग कार्यालय बना देने से और मुझे एक सचिव प्राप्त हो जाने से मेरे काम का बोझ काफी हल्का हो गया।

परन्तु आन्दोलन को गतिशील बनाने का काम अभी पूरा नहीं हुआ था। मॉण्टगोमरी विकास संगम के दफ्तर के लिए स्थायी रूप से मकान ढूँढ़ने का काम सामने था। यह काम बहुत ही कठिन साबित हुआ। अपेक्षाकृत स्थायी जगह प्राप्त करने के पहले हमें अपने दफ्तर के लिए चार जगहें बदलनी पड़ीं।

हमारा सबसे पहला ऑफिस अलबामा नीग्रो बैप्टिस्ट सेंटर में था। यहाँ पर दो बड़े कमरे और एक सभा-गृह था, जो कार्यकारिणी समिति की बैठक के काम में आता था। इस जगह से हमारी सभी जरूरतें पूरी हो रही थीं। परन्तु ज्यों ही हम यहाँ पर जमे कि मॉण्टगोमरी बैप्टिस्ट असोसिएशन, जो कि 'सेंटर' को चलाने के लिए सबसे अधिक आर्थिक सहयोग देता था, के गोरे अधिकारियों ने 'सेंटर' के ट्रस्टी लोगों को अपनी सभा में बुलाकर सुझाया कि 'सेंटर के भले के लिए' तथा 'समाज

के भले के लिए' मॉन्टगोमरी विकास संगम का कार्यालय 'सेंटर' से हटा दिया जाना चाहिए। हालाँकि यह साफ-साफ कहा नहीं गया था, परन्तु उनकी बात से यह समझना कठिन नहीं था कि अगर उनकी सलाह को नहीं माना जाता तो उनसे प्राप्त होनेवाली आर्थिक सहायता बन्द हो जाती।

यह देखकर कि हम दरवाजे से बाहर धकेले जा रहे थे, श्री रूफस लुइस ने अपने 'सामाजिक क्लब' की जगह में मॉन्टगोमरी विकास संगम का दफ्तर रखने के लिए हमें आमन्त्रित किया। यहाँ पर हमें एक काफी बड़ा कमरा दिया गया, जो कि आम तौर पर बड़े मौकों के लिए काम में आया करता था और यातायात-समिति के लिए एक छोटा कमरा भी दिया गया। यहाँ पर हमने कुछ ही सप्ताह बिताये थे कि एक विश्वस्त सूत्र से श्री लुइस को सूचना मिली कि उनके क्लब का लाइसेंस समाप्त कर दिया जायगा, क्योंकि क्लब के मकान का ऑफिस के मकान के रूप में उपयोग किया जा रहा है, जो गैर-कानूनी है। ऐसे आपत्कालीन समय में फर्स्ट मेथॉडिस्ट चर्च ने कुछ समय के लिए हमें अपना स्थान देना स्वीकार किया।

आखिर में हमें पता लगा कि 'ब्रिकलेयर्स यूनियन' के नये भवन में कुछ स्थान उपलब्ध है, जो हमारे काम के लिए पर्याप्त होगा। साथ ही वहाँ से गोरे समुदाय के लोग हमें बाहर भी नहीं निकाल सकेंगे, क्योंकि इस यूनियन भवन के अधिकांश सदस्य तथा सभी अधिकारी नीग्रो ही थे। इस विचार से हमने तय किया कि उस जगह को किराये पर ले लिया जाय।

अब तक हमारे दफ्तर के सभी कार्यकर्ता दफ्तर के स्थान को इधर-उधर बदलते-बदलते थक चुके थे। बदलने की इस प्रक्रिया में बहुत से महत्वपूर्ण पत्र खो गये थे और असाधारण महत्त्व के कागजात भी इधर-उधर हो गये थे। लेकिन कम-से-कम हमारे इस नये दफ्तर में स्थायित्व

का वातावरण था। पहली बार हम लोग पर्याप्त स्थान, शान्तिपूर्ण वातावरण और सुरक्षा की भावना के साथ काम कर सके।

किसी भी आन्दोलन को ऊपर उठाने के लिए सबसे पहला काम यह होता है कि आन्दोलन के लोगों में एकता रखी जाय। इसके लिए केवल समान उद्देश्य होना ही पर्याप्त नहीं होता। इसके लिए एक ऐसे दर्शन की आवश्यकता होती है, जो लोगों की बुद्धि पर विजय पा सके और उसे पकड़कर रख सके। इसके लिए एक ऐसे सतत और खुले हुए प्रवाह की आवश्यकता होती है, जिसके माध्यम से आन्दोलन के नेताओं और जनता के बीच ठीक तरह विचारों का आदान-प्रदान हो सके। मॉण्टगोमरी में ये सभी बातें उपस्थित थीं।

प्रारम्भ से ही एक बुनियादी सिद्धान्त ने इस आन्दोलन का मार्ग-दर्शन किया था। उस सिद्धान्त को अनेक शब्दों द्वारा पुनः-पुनः प्रकट किया जाता था। हम लोग उसे अहिंसात्मक प्रतिकार का आन्दोलन, असहयोग-आन्दोलन और शान्तिपूर्ण प्रतिकार का आन्दोलन कहकर पुकारते थे। लेकिन शुरू के दिनों में इन शब्दों का व्यवहार नहीं किया गया था। हम लोग प्रायः इस सिद्धान्त को 'क्रिश्चियन प्रेम' कहकर पुकारते थे। मॉण्टगोमरी के नीग्रो लोगों को प्रतिष्ठापूर्ण सामाजिक आन्दोलन करने की प्रेरणा देनेवाले सिद्धान्त को हम 'शान्तिपूर्ण प्रतिकार' कहने के बजाय 'सरमन ऑन दी माउंट' कहकर पुकारते थे। वे नजारेथ के ईसामसीह थे, जिन्होंने नीग्रो लोगों को प्रेम के प्रभावकारी शस्त्र द्वारा अन्याय का मुकाबला करने की प्रेरणा दी।

और तब आयी, महात्मा गांधी की प्रेरणा। इस प्रेरणा ने धीरे-धीरे अपना प्रभाव दिखाना शुरू किया। मैंने तो शुरू में ही यह अनुभव किया था कि प्रेम के क्रिश्चियन सिद्धान्त को अगर गांधी के अहिंसात्मक तरीके के माध्यम से व्यवहार में लाया जाय, तो वह स्वतन्त्रता-प्राप्ति के इस संघर्ष के लिए एक अत्यन्त शक्तिशाली अस्त्र साबित होगा। हमारे आन्दोलन के प्रारम्भ होने के करीब एक सप्ताह बाद गोरे

के भले के लिए' मॉण्टगोमरी विकास संगम का कार्यालय 'सेंटर' से हटा दिया जाना चाहिए। हालाँकि यह साफ-साफ कहा नहीं गया था, परन्तु उनकी बात से यह समझना कठिन नहीं था कि अगर उनकी सलाह को नहीं माना जाता तो उनसे प्राप्त होनेवाली आर्थिक सहायता बन्द हो जाती।

यह देखकर कि हम दरवाजे से बाहर धकेले जा रहे थे, श्री रूफुस लुइस ने अपने 'नागरिक क्लब' की जगह में मॉण्टगोमरी विकास संगम का दफ्तर रखने के लिए हमें आमन्त्रित किया। यहाँ पर हमें एक काफी बड़ा कमरा दिया गया, जो कि आम तौर पर बड़े भोजों के लिए काम में आया करता था और यातायात-समिति के लिए एक छोटा कमरा भी दिया गया। वहाँ पर हमने कुछ ही सप्ताह बिताये थे कि एक विश्वस्त सूत्र से श्री लुइस को सूचना मिली कि उनके क्लब का लाइसेंस समाप्त कर दिया जायगा, क्योंकि क्लब के मकान का ऑफिस के मकान के रूप में उपयोग किया जा रहा है, जो गैर-कानूनी है। ऐसे आपत्कालीन समय में फर्स्ट बैप्टिस्ट चर्च ने कुछ समय के लिए हमें अपना स्थान देना स्वीकार किया।

आखिर में हमें पता लगा कि 'ब्रिकलेयर्स यूनियन' के नये भवन में कुछ स्थान उपलब्ध है, जो हमारे काम के लिए पर्याप्त होगा। साथ ही वहाँ से गोरे समुदाय के लोग हमें बाहर भी नहीं निकाल सकेंगे, क्योंकि इस यूनियन भवन के अधिकांश सदस्य तथा सभी अधिकारी नीग्रो ही थे। इस विचार से हमने तय किया कि उस जगह को किराये पर ले लिया जाय।

अब तक हमारे दफ्तर के सभी कार्यकर्ता दफ्तर के स्थान को इधर-उधर बदलते-बदलते थक चुके थे। बदलने की इस प्रक्रिया में बहुत-से महत्त्वपूर्ण पत्र खो गये थे और असाधारण महत्त्व के कागजात भी इधर-उधर हो गये थे। लेकिन कम-से-कम हमारे इस नये दफ्तर में स्थायित्व

का वातावरण था। पहली बार हम लोग पर्याप्त स्थान, शान्तिपूर्ण वातावरण और सुरक्षा की भावना के साथ काम कर सके।

किसी भी आन्दोलन को ऊपर उठाने के लिए सबसे पहला काम यह होता है कि आन्दोलन के लोगों में एकता रखी जाय। इसके लिए केवल समान उद्देश्य होना ही पर्याप्त नहीं होता। इसके लिए एक ऐसे दर्शन की आवश्यकता होती है, जो लोगों की बुद्धि पर विजय पा सके और उसे पकड़कर रख सके। इसके लिए एक ऐसे सतत और खुले हुए प्रवाह की आवश्यकता होती है, जिसके माध्यम से आन्दोलन के नेताओं और जनता के बीच ठीक तरह विचारों का आदान-प्रदान हो सके। मॉण्टगोमरी में ये सभी बातें उपस्थित थीं।

प्रारम्भ से ही एक बुनियादी सिद्धान्त ने इस आन्दोलन का मार्ग-दर्शन किया था। उस सिद्धान्त को अनेक शब्दों द्वारा पुनः-पुनः प्रकट किया जाता था। हम लोग उसे अहिंसात्मक प्रतिकार का आन्दोलन, असहयोग-आन्दोलन और शान्तिपूर्ण प्रतिकार का आन्दोलन कहकर पुकारते थे। लेकिन शुरू के दिनों में इन शब्दों का व्यवहार नहीं किया गया था। हम लोग प्रायः इस सिद्धान्त को 'क्रिश्चियन प्रेम' कहकर पुकारते थे। मॉण्टगोमरी के नीग्रो लोगों को प्रतिष्ठापूर्ण सामाजिक आन्दोलन करने की प्रेरणा देनेवाले सिद्धान्त को हम 'शान्तिपूर्ण प्रतिकार' कहने के बजाय 'सरमन ऑन दी माउंट' कहकर पुकारते थे। वे नजारेथ के ईसामसीह थे, जिन्होंने नीग्रो लोगों को प्रेम के प्रभावकारी शस्त्र द्वारा अन्याय का मुकाबला करने की प्रेरणा दी।

और तब आयी, महात्मा गांधी की प्रेरणा। इस प्रेरणा ने धीरे-धीरे अपना प्रभाव दिखाना शुरू किया। मैंने तो शुरू में ही यह अनुभव किया था कि प्रेम के क्रिश्चियन सिद्धान्त को अगर गांधी के अहिंसात्मक तरीके के माध्यम से व्यवहार में लाया जाय, तो वह स्वतन्त्रता-प्राप्ति के इस संघर्ष के लिए एक अत्यन्त शक्तिशाली अस्त्र साबित होगा। हमारे आन्दोलन के प्रारम्भ होने के करीब एक सप्ताह बाद गोरे

समाज की एक महिला ने, जिसने नीग्रो लोगों के प्रश्नों को ठीक तरह समझा था और जिसकी हमारे साथ पूरी सहानुभूति भी थी, 'मॉण्टगोमरी एडवर्टाइजर' नामक दैनिक अखबार को एक पत्र लिखा, जिसमें भारत में चलनेवाले गांधीजी के आन्दोलन के साथ हमारे बस-बहिष्कार के आन्दोलन की तुलना की गयी थी। बहुत कोमल और नाजुक यह महिला कु० जुलियट मॉर्गन बहुत दिन बच नहीं पायी। गोरे समाज की ओर से उसको काफी तिरस्कार तथा भर्त्सना सहनी पड़ी। परन्तु सन् १९५७ की गर्मियों में उसके मरने के काफी पहले महात्मा गांधी का नाम मॉण्टगोमरी में पूरी तरह प्रचारित हो चुका था। जिन्होंने भारत के इस सन्त का कभी नाम तक भी नहीं सुना था, वे लोग भी गांधीजी का नाम इस तरह लेने लगे, जैसे वे उनके बहुत परिचित हों। अहिंसात्मक प्रतिकार का विचार इस आन्दोलन में एक विशिष्ट तकनीक के रूप में प्रतिष्ठित हो गया था, जब कि प्रेम का विचार एक आदर्श के रूप में था। दूसरे शब्दों में ईसामसीह ने प्रेरणा और उद्देश्य दिया, जब कि गांधीजी ने उस उद्देश्य को पाने का एक तरीका दिया।

यह सिद्धान्त मुख्य रूप से शहर के विभिन्न नीग्रो चर्चों में आयोजित आम सभाओं में चर्चा का विषय होता था। शुरू के कई महीनों तक ये सभाएँ सप्ताह में दो दिन सोमवार और बृहस्पतिवार को हुआ करती थीं। परन्तु सन् १९५६ की शरद् ऋतु में यह क्रम बदलकर हफ्ते में केवल एक मीटिंग का रह गया, जो कि अब तक चल रहा है। आन्दोलन के प्रारम्भ के दिनों में सप्ताह में दो बार होनेवाली ये सभाएँ हमारे बीच विचारों के आदान-प्रदान की एक बहुत ही आवश्यक माध्यम थीं, क्योंकि मॉण्टगोमरी में नीग्रो लोगों का अपना कोई रेडियो-स्टेशन भी नहीं था तथा व्यापक रूप से प्रचारित होनेवाला कोई नीग्रो अखबार भी नहीं था।

ये सभाएँ विभिन्न चर्चों में आयोजित हुआ करती थीं। सभाओं के वक्ता भी विभिन्न क्रिश्चियन सम्प्रदायों के लोग होते थे। इसीलिए

किसी भी प्रकार की साम्प्रदायिक ईर्ष्या के लिए भी कोई स्थान नहीं था। मॉण्टगोमरी-आन्दोलन की एक सबसे बड़ी महिमा यह थी कि बैप्टिस्ट, मेथोडिस्ट, लुथरन्स, प्रेस्बिटेरियन्स, एपिस्कोपालियन्स तथा अन्य सभी सम्प्रदायों के लोग एक साथ मिलकर यह प्रयत्न करते थे कि इस आन्दोलन में सम्प्रदायगत भेदभाव का स्थान न रहे। हालाँकि कोई भी कैथोलिक पादरी सक्रिय रूप से इस आन्दोलन में भाग नहीं ले रहा था; तथापि उस सम्प्रदाय के अनेक माननेवालों ने भाग लिया था। सभी ने क्रिश्चियन प्रेम के बन्धन में बँधकर हाथ से हाथ मिलाया। इस प्रकार सोमवार और बृहस्पतिवार को होनेवाली आम सभाओं ने लोगों को एकता के सूत्र में बाँधनेवाली उस सफलता को भी प्राप्त किया, जिसे क्रिश्चियन चर्च रविवार को सुबह की प्रार्थना-सभाओं में पाने में असफल रहे थे।

इन आम सभाओं ने वर्गभेद को भी काट डाला। सभाओं में भाग लेनेवालों में बहुमत श्रमिक-वर्ग का होने पर भी दूसरे पेशे के लोगों की उपस्थिति भी अच्छी संख्या में होती थी। डॉक्टर, अध्यापक और वकील लोग घरेलू नौकरों अथवा मजदूरों के आसपास बैठते या खड़े रहते थे। पी-एच० डी० जैसी डिग्रियोंवाले और बिना डिग्रियोंवाले भी एक समान उद्देश्य के लिए एक साथ मिल गये थे। वे तथाकथित 'बड़े लोग' भी, जो निजी कारें रखते थे और कभी भी बस में नहीं चढ़े थे, बसों में यात्रा करनेवाले घरेलू नौकरानियों और मजदूरों के संपर्क में आये। वे लोग, जो वर्गों के गलत मूल्यों के आधार पर आपस में अलग-अलग कर दिये गये थे, अब एक सामूहिक संघर्ष में, जो कि आजादी तथा मानव-प्रतिष्ठा के लिए किया जा रहा था, साथ मिलकर गाने लगे और प्रार्थना करने लगे।

सभाएँ सात बजे प्रारम्भ होती थीं, परन्तु बैठने की जगह रोकने के लिए लोग घण्टों पहले से आ जाते थे। चर्च पाँच बजे शाम को ही पूरी तरह भरे हुए मिले, यह कोई असाधारण बात नहीं थी। कुछ लोग

सभा की प्रतीक्षा में बिताये और अखबार पढ़कर समय बिताते थे, तो कुछ लोग सामूहिक रूप से भजन गाते थे। साधारण तौर पर उनके गाने में ताल और स्वर का ठिकाना नहीं रहता था। लेकिन इन परम्परागत गीतों को सुनकर कोई भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता था, क्योंकि इन गीतों में नीग्रो लोगों के कष्टों का लम्बा इतिहास भरा रहता था।

जब मीटिंग प्रारम्भ होती थी तो पूरा स्थान भर जाता था और सैकड़ों लोगों को बाहर सड़कों पर खड़े रहना पड़ता था। विलम्ब से आनेवाले बहुत-से लोगों ने साथ में 'फोल्डिंग स्टूल' लाना शुरू किया। बहुत-से लोग सभाओं में इसलिए भी नहीं आते थे, क्योंकि उन्हें मालूम था कि वहाँ बैठने की जगह नहीं मिलेगी। शुरू-शुरू में इस समस्या को हल करने के लिए शहर में एक ही साथ पाँच अलग-अलग स्थानों पर सभाओं के आयोजन किये गये। प्रत्येक सभा का तरीका और चर्चा का विषय एक ही होता था। कई सप्ताहों तक तो मैं स्वयं इन पाँचों सभाओं में भाग लेता था। लेकिन यह बहुत परिश्रम का काम था। फिर लोगों ने भी इसी पर जोर दिया कि आम सभा एक ही स्थान पर होनी चाहिए। अतः हमें अलग-अलग पाँच जगहों की सभाएँ बन्द करनी पड़ीं।

इन सायंकालीन सभाओं का तरीका बड़ा आसान था। भजन, प्रार्थना, बाइबिल-पाठ, अध्यक्ष द्वारा उद्घाटन, विभिन्न लोगों द्वारा काम की रिपोर्ट और 'अन्य चर्चा' के बाद सभा में किसी न किसी चर्च के पादरी द्वारा आम तौर पर एक मुख्य वक्तव्य दिया जाता था। यह 'अन्य चर्चा' शुरू में तो बहुत ही उत्तेजनापूर्ण होती थी, क्योंकि इसका मुख्य उद्देश्य लोगों में प्रेरणा तथा उत्साह भरना था। हर रात जनता को घृणा के बजाय प्रेम का उपदेश दिया जाता था। लोगों से यह भी कहा जाता था कि अगर गोरे समुदाय की ओर से हिंसक व्यवहार होता हो तो उसे सहन किया जाय, परन्तु उसके जवाब में हिंसक प्रतिकार न किया जाय। लोगों को उकसाने और प्रेरणा देनेवाली सभाओं से यही

कहा जाता था कि वे अपने वक्तव्य के मुख्य भाग में अहिंसा पर ही प्रकाश डालें।

कभी-कभी कोई वक्ता अपने आपे से बाहर भी हो जाता था। एक बार एक पादरी ने गोरे लोगों के व्यवहार के विरुद्ध भर्त्सनाभरे शब्दों में व्याख्यान दिया और अन्त में कहा कि ये गोरे लोग 'गन्दे पदार्थों की तरह' हैं। सभा समाप्त होने के बाद इन पादरी महोदय को दृढ़ता, परन्तु नम्रता के साथ कहा गया कि गोरे लोगों को अपमानित करने-वाले ये शब्द इस सभा के उपयुक्त नहीं थे। लेकिन ऐसी आक्रामक भाषा का उपयोग करने की घटनाएँ आश्चर्यजनक रूप से बहुत कम हुआ करती थीं।

मैं अपने साप्ताहिक अध्यक्षीय भाषण में बराबर इस बात पर जोर देता था कि हमारे आन्दोलन में हिंसा का उपयोग अव्यावहारिक भी होगा और अनैतिक भी। गोरे लोगों में व्याप्त घृणा का बदला लेने के लिए अगर हम भी घृणा का ही सहारा लेंगे तो विश्व में अधर्म को ही प्रश्रय मिलेगा। घृणा घृणा को पैदा करेगी; हिंसा हिंसा को बढ़ायेगी; कठोरता और भी भयंकर कठोरता उत्पन्न करेगी। हमें घृणा के दबाव पर प्रेम की शक्ति से विजय प्राप्त करनी चाहिए। हमें भौतिक शक्तियों का आत्मिक शक्तियों द्वारा समाधान करना चाहिए। हमारा उद्देश्य गोरे लोगों को हराना या दयनीय बनाना नहीं है। हम उनकी समझ को दुरुस्त करके उनके साथ मित्रता का नाता जोड़ना चाहते हैं।

शुरू से ही लोगों ने इस सिद्धान्त के प्रति अद्‌भुत दिलचस्पी दिखाई। हाँ, कुछ लोग इस बात को समझने में देर करते। कभी-कभी हमारी कार्यकारिणी के सदस्य अकेले में मुझसे कहते कि हमारा तरीका और अधिक तीव्र और संघर्ष-परायण होना चाहिए। वे अहिंसा को कम-जोर तथा समझौतावादी तरीका समझते थे। कुछ लोग ऐसा महसूस करते थे कि हिंसा की थोड़ी-सी खुराक देने से गोरे लोग यह समझ सकेंगे कि नीग्रो लोग निर्भीक हैं तथा अपनी सफलता के लिए दृढ़प्रतिज्ञ हैं। एक

दिन मेरे चर्च का एक सदस्य मेरे पास आया और उसने मुझे गम्भीरता से सुझाया : "अगर हम आठ-दस गोरे लोगों को मार डालें तो हमारा काम चटपट हो जायगा। ये गोरे लोग केवल इसी भाषा में समझ पायेंगे। लातों के भूत बातों से नहीं मानते। अगर हम ऐसा नहीं करेंगे तो गोरे लोग समझेंगे कि हम डरपोक हैं। इसलिए हमें अब यह बता ही देना चाहिए कि हम डरपोक नहीं हैं।" इसके अलावा उसने ऐसा भी सोचा था कि अगर थोड़े-से गोरे लोगों की हत्या कर दी जायगी तो केन्द्रीय सरकार इस झगड़े में दखल देगी और केन्द्रीय सरकार की दखलन्दाजी हम लोगों के अनुकूल पड़ेगी।

कुछ लोगों ने यह भी सोचा कि वे केवल तभी तक अहिंसक रह सकते हैं, जब तक कि उन पर कोई आक्रमण न करे। वे कहते थे : "अगर दूसरा कोई मुझे परेशान नहीं करता तो मैं भी दूसरे किसीको परेशान नहीं करूँगा। अगर दूसरा कोई मुझे नुकसान नहीं पहुँचाता तो मैं भी दूसरे किसीको नुकसान नहीं पहुँचाऊँगा। परन्तु अगर मुझे नुकसान पहुँचाया गया तो मैं भी बदले में उसे नुकसान पहुँचाऊँगा।" इस तरह ये लोग आक्रामक हिंसा और प्रतिरक्षात्मक हिंसा के बीच एक नैतिक रेखा खींचते थे। इन सब मतभेदों के बावजूद एक व्यापक बहुमत पूर्ण अहिंसात्मक मार्ग को आजमाने के लिए तैयार था।

आम सभाओं के तौर-तरीकों से भी उपर्युक्त बात जाहिर होती थी। भजन, प्रार्थना, बाइबिल-पाठ आदि के अलावा अधिकांश भाषणों में भी अहिंसा का ही स्वर प्रकट होता था। इन सभाओं में बाइबिल का यह हिस्सा बहुत ही लोकप्रिय हो गया था : "हम श्रद्धा, आशा और प्रेम; इन तीनों पर दृढ़ रहें; पर इन तीनों में से भी सबसे अधिक प्रेम पर।" इसके अलावा ईसामसीह और पीटर के बीच का क्षमा-सम्बन्धी यह प्रसिद्ध संवाद भी बहुत लोकप्रिय हो गया था : "तब पीटर उसके पास आया और बोला; भगवन्, मेरा भाई कितनी बार मेरे विरुद्ध पाप करेगा और मैं उसे माफ कर दूँ ? क्या सात बार ?" ईसामसीह ने उसमें

कहा : "मैं कहता हूँ, सात बार तक उसे माफ कर दो। परन्तु यह होगा सत्तर गुना सात बार।" इन आम सभाओं के लिए बाइबिल के ये पाठ केवल सदियों दूर से आनेवाली कोई चीज नहीं थी, बल्कि इनका महत्त्व और अर्थ आज की समस्याओं से जुड़ा हुआ था।

पूरे आन्दोलन में कटुता का आश्चर्यजनक अभाव था; यहाँ तक कि तब भी, जब वक्ताओं ने गोरे लोगों द्वारा किये गये अपमान और अन्याय की ताजा घटनाओं का उल्लेख किया। बाद में जब मॉण्टगोमरी विकास संगम अपने एकमात्र आन्तरिक संघर्ष में से गुजर रहा था, तब भी नीग्रो लोगों ने यह दिखा दिया कि वे अपने आन्तरिक विरोध को भी पूरे धीरज के साथ सुलझा सकते हैं। वे केवल कायिक हिंसा से ही नहीं, बल्कि मानसिक हिंसा से भी अपने को दूर रख सकते हैं।

मॉण्टगोमरी के नीग्रो लोगों ने सच्चे अर्थों में यह प्रकट कर दिया कि रंगभेद को मिटाने के संघर्ष में वे एक नये मार्ग पर चल सकते हैं। यह शायद सच हो सकता है कि बहुत-से लोगों ने अहिंसा को एक जीवन-सिद्धान्त मानकर उसमें विश्वास नहीं किया था। लेकिन अपने नेताओं में उनका विश्वास और नेताओं का अहिंसा में विश्वास होने के कारण ये नीग्रो अहिंसक प्रक्रिया को एक पद्धति मानकर प्रयोग में लाने के लिए तैयार थे। इसका एक बड़ा कारण यह भी था कि अहिंसा की व्याख्या उनके सामने क्रिश्चियन भावना को जीवन-व्यवहार में लाने के एक सरल तरीके के रूप में उपस्थित की गयी थी। असल में अहिंसा अपने सच्चे अर्थों में एक तात्कालिक समस्या का समाधान करने की नीतिमात्र नहीं है। वह तो अन्ततोगत्वा एक जीवन-पद्धति है; क्योंकि अहिंसा का सर्वोच्च आदर्श है, एक मजबूत नैतिक जीवन। अगर कोई अहिंसा को केवल नीति के रूप में ही अपनाता है तो वह भी एक आगे का ही कदम है। जो व्यक्ति अहिंसा को एक नीति मानने तक पहुँचता है, बहुत सम्भव है कि वह बाद में अहिंसा को जीवन-पद्धति के रूप में स्वीकार कर लेगा।

●

# अहिंसा की तीर्थयात्रा

## ६

प्रायः अहिंसा की मेरी अपनी बौद्धिक तीर्थयात्रा के सम्बन्ध में प्रश्न उठते रहे हैं। इस सवाल को समझने के लिए अटलांटा में बिताये हुए मेरे किशोर-जीवन की घटनाओं में जाना आवश्यक होगा। मैं न केवल रंगभेद से नफरत करते हुए ही बड़ा हुआ, परन्तु साथ ही दमन करनेवाले क्रूर व्यवहारों से भी, जो कि रंगभेद के ही परिणाम थे, मुझे गहरी घृणा थी। मैंने वे स्थान देखे थे, जहाँ नीग्रो लोग क्रूरतापूर्वक पीटे जाते थे और 'कु क्लक्स क्लान' (रंगभेद में विश्वास करनेवालों की संस्था) के निरीक्षण में उन्हें रात में सताया जाता था। मैंने अपनी आँखों से पुलिस के क्रूर दुर्व्यवहार को भी देखा था। मैंने न्यायालयों में नीग्रो लोगों के मुकदमों में दुःखद और अन्यायपूर्ण फैसले होते हुए भी देखे

थ। इन सभी बातों ने मेरे व्यक्तित्व को बनाने में कुछ-न-कुछ योगदान दिया था। मैं मजबूर होकर सभी श्वेतांगों के प्रति क्रोध करने के निकट पहुँच गया था।

मैंने यह भी जाना कि रंगभेद के अन्याय का जुड़वा भाई आर्थिक अन्याय है। यद्यपि मैं आर्थिक रूप से सुरक्षित और अपेक्षाकृत आराम-देह घर में पैदा हुआ था; फिर भी मैं अपने साथियों की आर्थिक असुरक्षा और मेरे पास-पड़ोस में रहनेवालों की कष्टदायी गरीबी को कभी भी अपने दिमाग से निकाल नहीं पाता था। मैंने अपने किशोर-जीवन के उत्तरार्ध में एक ऐसे कारखाने में दो बार काम किया, जहाँ नीग्रो और गोरे मजदूर एक साथ काम करते थे, हालाँकि मेरे पिताजी की इस काम के लिए सहमति नहीं थी। वे नहीं चाहते थे कि मैं और मेरा भाई श्वेतांगों के साथ काम करें, क्योंकि उनका व्यवहार बहुत दमनकारी होता था। इस कारखाने में पहली बार मैंने आर्थिक अन्याय के दर्शन किये और देखा कि श्वेतांग गरीब मजदूरों का भी उतना ही शोषण होता था, जितना कि नीग्रो मजदूरों का। इन प्रारम्भिक अनुभवों के कारण हमारे समाज में होनेवाले तरह-तरह के अन्यायों को समझते हुए मैं पला।

इसीलिए जब मैं सन् १९४४ में अटलांटा के मोरहाउस कॉलेज में पढ़ने के लिए गया, तब रंग-भेद और अर्थ-भेद के आधार पर चलने-वाले अन्यायों के विरुद्ध मेरी भावनाएँ काफी मजबूत हो चुकी थीं। अपने कॉलेज के छात्र-जीवन में ही मैंने थोरो का 'सिविल डिसओबिडियन्स' (सविनय अवज्ञा) शीर्षक निबन्ध पहली बार पढ़ा था। दोषपूर्ण व्यवस्था से असहयोग करने के इस जादू की तरह असर करनेवाले विचार से मैं इतना गहरा प्रभावित हुआ कि उस लेख को मैंने कई बार पुनः-पुनः पढ़ा। अहिंसात्मक प्रतिकार के सिद्धान्त के साथ मेरा यह प्रथम बौद्धिक परिचय था।

परन्तु जब तक सन् १९४८ में 'क्रोजर थियोलॉजिकल सेमिनरी' में मैं प्रविष्ट नहीं हुआ, तब तक मैंने सामाजिक अन्यायों को मिटाने के

हो सकते हैं। इस तरह के सिद्धान्त के प्रति मेरे मन में नफरत ही पैदा हुई। अच्छे और रचनात्मक साध्य को पाने के लिए बुरे और तोड़फोड़-मूलक साधनों का प्रयोग किसी भी तरह नैतिक दृष्टि से उचित और तर्कपूर्ण नहीं माना जा सकता, क्योंकि अगर हम पूरे विश्लेषण तक पहुँचे तो हमारे साध्य साधनों में ही निहित हैं। तीसरे, मुझे साम्यवादियों के राजनैतिक अधिनायकवाद से भी विरोध था। व्यक्ति राज्य के लिए अपने अस्तित्व को मिटा देता है। हाँ, साम्यवादी यह तर्क देंगे कि राज्य तो अन्तरिम काल की व्यवस्था है। वर्गहीन समाज की रचना के बाद राज्य का अस्तित्व तो मिट ही जायगा। परन्तु मुझे लगता है कि जब तक राज्य रहता है, तब तक वही साध्य बनकर रहता है और व्यक्ति राज्य के हाथ का एक खिलौना मात्र बन जाता है। अगर किसी व्यक्ति की स्वतन्त्रता राज्य के पथ में बाधा बनेगी तो उसे रास्ते से साफ कर दिया जायगा। व्यक्ति का विचार-स्वातंत्र्य, वोट देने की स्वतन्त्रता, जो कुछ समाचार वह सुनना चाहता है उसकी स्वतन्त्रता, जो कुछ वह पढ़ना चाहता है उसकी स्वतन्त्रता आदि पर भी बन्धन डाल दिये जाते हैं। इस तरह मनुष्य साम्यवादी व्यवस्था में राज्य के पहिये की एक कील बनने के अलावा और कुछ नहीं रह जाता।

व्यक्ति की स्वतन्त्रता को नष्ट करने का यह विचार मुझे दोषपूर्ण लगता था। मेरा यह दृढ़ विश्वास था और आज भी है कि मानव अपने-आपमें एक साध्य है, क्योंकि वह ईश्वर का पुत्र है। मनुष्य का निर्माण राज्य के लिए नहीं किया गया है, बल्कि राज्य का निर्माण मनुष्य के लिए किया गया है। उसे अपनी स्वतन्त्रता से वंचित करना एक तरह से उसे अपने स्तर से गिराने जैसा है, न कि अपने स्तर से ऊपर उठाने जैसा। मनुष्य के साथ ऐसा व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए कि वह राज्य के लिए एक साधनमात्र बन जाय, बल्कि उसके साथ ऐसा व्यवहार होना चाहिए, जैसे कि वह अपने-आपमें एक साध्य हो।

साम्यवाद के प्रति मेरा रुझान नकारात्मक होने पर भी और उसे

दोषपूर्ण मानते हुए भी उसमें मुझे कई ऐसे स्थल मिले, जो चुनौती से भरे हुए थे। कैंटरबरी के स्व० आर्कबिशप श्री विलियम टेंपल ने साम्यवाद को 'क्रिश्चियन विरोधी धर्म' कहा था। ऐसा कहने से उनका तात्पर्य यह था कि साम्यवाद के पास भी कुछ सत्य है, जो कि क्रिश्चियन दृष्टिकोण में भी आवश्यक है। लेकिन साम्यवाद ने उस सत्य को ऐसे विचार और क्रिया से बाँध दिया है कि जिसे क्रिश्चियन धर्म कभी भी स्वीकार नहीं कर सकता। साम्यवाद ने इस तरह स्व० आर्कबिशप को चुनौती दी थी और वह प्रत्येक क्रिश्चियन को चुनौती देनेवाला है। उसने सामाजिक न्याय के प्रति मेरे हृदय में उठनेवाली तड़प को भी चुनौती दी। अपने अनेक तर्कहीन विचारों और दोषपूर्ण तरीकों के बावजूद साम्यवाद का जन्म शोषित व्यक्तियों पर लादी गयी कठिनाइयों के विरुद्ध आन्दोलन के रूप में हुआ। सिद्धान्ततः साम्यवाद ने एक वर्गहीन समाज की स्थापना पर जोर दिया और सामाजिक न्याय की प्रतिष्ठा के लिए तड़प पैदा की। हालाँकि संसार अपने दुःखद अनुभवों से यह जानता है कि व्यवहार में साम्यवाद ने नये वर्गों का निर्माण किया तथा अन्याय के नये तरीकों को जन्म दिया। कोई भी क्रिश्चियन सदैव ऐसे किसी भी आन्दोलन से चुनौती महसूस करेगा, जो गरीबों के साथ किये गये अनुचित व्यवहार के विरोध में पैदा हुआ हो; क्योंकि स्वयं क्रिश्चियन धर्म इसी तरह का एक आन्दोलन है। ईसामसीह के शब्दों में यह बात जितनी अच्छी तरह प्रकट हुई है, उस तरह शायद ही कहीं दूसरी जगह प्रकट हुई हो! उन्होंने कहा है : "मुझमें ईश्वर की ही प्रेरणा काम कर रही है। क्योंकि उसने मुझे गरीबों को धर्मोपदेश सुनाने के लिए नियुक्त किया है। उसने मुझे टूटे हुए दिलवालों को आश्वस्त करने के लिए भेजा है। बंधन में पड़े हुए लोगों को मुक्ति का सन्देश सुनाने के लिए; अन्धों को दृष्टि देने के लिए; कुचले हुए लोगों को आजाद कराने के लिए तथा ईश्वर के उपदेशों को सुनाने के लिए ही मैं भेजा गया हूँ।"

मैंने आज की बुर्जुआ संस्कृति के सम्बन्ध में मार्क्स द्वारा की गयी

छात्रों की तरह मुझे विश्वास नहीं हुआ और मुझे लगा कि युद्ध विधायक और अन्तिम रूप से अच्छा या वांछनीय नहीं हो सकता। परन्तु एक दोषपूर्ण शक्ति के बढ़ाव को रोकने के अर्थ में यह नकारात्मक रूप से तो वांछनीय हो ही सकता है। युद्ध भयंकर होने के बावजूद नात्सी, फासिस्ट या कम्युनिस्ट शक्तियों जैसी अधिनायकवादी व्यवस्था के सामने आत्म-समर्पण करने की अपेक्षा बेहतर है।

इस अरसे के बीच सामाजिक समस्याओं का हल करने में प्रेम की शक्ति की उपयोगिता में मुझे निराशा होने लगी थी। शायद थोड़े समय के लिए प्रेम की शक्ति में निहित मेरे विश्वास को नीत्शे के सिद्धान्त ने हिला दिया था। मैंने नीत्शे द्वारा लिखित 'नैतिकता की परम्पराएँ'[1] नामक पुस्तक के कुछ अंश पढ़े थे और उसके बाद 'शक्ति की चाह'[2] नाम की पुस्तक तो मैंने पूरी ही पढ़ डाली थी। नीत्शे ने शक्ति की महिमा का जो गान किया था, उसकी जड़ साधारण नैतिकता के प्रति उसके तिरस्कार में है। नीत्शे ने अपने सिद्धान्त में माना है कि सभी जीवन-शक्ति के लिए चाह प्रकट करते हैं। उसने यहूदी व क्रिश्चियन नैतिकता के ऐसे सम्पूर्ण विचार पर ही हमला किया था, जो धर्मनिष्ठा और नम्रता के गुणों पर आधारित था, जो परलोक-परायणता में बँधा था और जो कष्ट-पीड़ितों के प्रति एक विशेष रुख रखता था, क्योंकि ये नैतिक मान्यताएँ नीत्शे के अनुसार दुर्बलता की महिमा बढ़ानेवाली हैं तथा जरूरतमंदी एवं बेबसी को सद्गुणों की संज्ञा देने का प्रयत्न है। नीत्शे ने मानव को लाँघते हुए अतिमानव का विकास देखने की कोशिश की, जैसे कि बन्दर या लंगूर की अवस्था को लाँघकर मानव का विकास हुआ है।

एक रविवार की दोपहर को मैं हॉवर्ड विश्वविद्यालय के अध्यक्ष डॉ० मोर्डेकाई जॉनसन का प्रवचन सुनने के लिए फिलाडेल्फिया गया।

१. 'दी जिनिआलॉजी ऑफ मोरल्स'।

२. 'दी विल टु पॉवर'।

वे वहाँ पर फिलाडेल्फिया के फेलोशिप हाउस के लिए व्याख्यान देनेवाले थे। डॉ० जॉनसन हाल ही में भारत की यात्रा करके लौटे थे और मेरे लिए बड़ी दिलचस्पी की बात यह थी कि वे महात्मा गांधी के जीवन और विचारों के सम्बन्ध में बोले। उनका व्याख्यान इतना प्रभावोत्पादक और बिजली की तरह झकझोर देनेवाला था कि सभा समाप्त होते ही मैंने गांधी के जीवन और काम के सम्बन्ध में आधा दर्जन पुस्तकें खरीद डालीं।

बहुत-से और लोगों की तरह मैंने भी गांधी का नाम सुना था, लेकिन उनके सम्बन्ध में गम्भीरता से कभी अध्ययन नहीं किया था। जब मैंने उनके सम्बन्ध में पुस्तकें पढ़ीं तो उनके अहिंसात्मक प्रतिकार-मूलक आन्दोलनों से मैं मोहित हो गया। खास तौर से नमक-सत्याग्रह के लिए की गयी उनकी यात्रा और उनके अनेक उपवासों की बातों से मैं बहुत ही प्रभावित हुआ। सत्याग्रह का पूरा विचार मेरे लिए अत्यन्त असाधारण महत्त्व का था। ज्यों ही मैंने गांधी-दर्शन में गहरा गोता लगाया, त्यों ही प्रेम की शक्ति के बारे में मेरे सन्देह दूर होने लगे और मैं पहली बार यह अच्छी तरह देख सका कि सामाजिक सुधारों के क्षेत्र में प्रेम का सिद्धान्त का प्रभावशाली उपयोग हो सकता है। गांधी को पढ़ने के पहले मैं इस नतीजे पर लगभग पहुँच चुका था कि ईसामसीह के सिद्धान्त केवल व्यक्तिगत सम्बन्धों तक ही प्रभावकारी हो सकते हैं। 'अगर तुम्हारे एक गाल पर कोई थप्पड़ मारता है तो दूसरा गाल आगे कर दो' और 'अपने दुश्मनों से भी प्यार करो' का आदर्श केवल तभी उपयोगी हो सकता था, जब संघर्ष एक-दो व्यक्तियों के बीच ही सीमित हो। लेकिन जब अलग-अलग रंगों के वर्ग या अलग-अलग देश संघर्ष में उलझे हों तो हमें कोई दूसरा ज्यादा व्यावहारिक रास्ता ढूँढ़ना जरूरी होगा। लेकिन गांधी-साहित्य पढ़ने के बाद मैंने देखा कि मैं कितना गलत था।

गांधी शायद इतिहास का पहला व्यक्ति था, जिसने ईसामसीह के

प्रेम के सन्देश को दो व्यक्तियों के बीच की कड़ी मात्र से ऊपर उठाकर उसे एक व्यापक पैमाने पर शक्तिशाली तथा प्रभावकारी सामाजिक शक्ति बनाया । गांधी के लिए प्रेम एक ऐसा शक्तिशाली हथियार था, जिसके द्वारा सामाजिक और सामूहिक जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाया जा सकता है । मैं जिस चीज को महीनों से खोज रहा था, सामाजिक क्रान्ति का वह तरीका मुझे गांधीवादी प्रेम और अहिंसा के विश्लेषण में प्राप्त हुआ । जैसा बौद्धिक और आध्यात्मिक सन्तोष मुझे गांधी के अहिंसात्मक प्रतिकार के सिद्धान्त में प्राप्त हुआ, वैसा बेंथम और मिल के उपयोगितावाद ( युटीलिटेरियनिज़्म ) में, अथवा मार्क्स और लेनिन के क्रान्तिकारी साम्यवाद में, अथवा हॉब्स ( Hobbes ) के सामाजिक समझौतावाद ( सोशियल-कंट्राक्टस थ्योरी ) में, अथवा रूसो के 'प्रकृति की ओर' वाले आशावाद में, अथवा नीत्शे के अतिमानववाद ( सुपरमैन फिलॉसफी ) में भी प्राप्त करने में मैं असफल रहा था । मैं यह अनुभव करने लगा कि शोषित जन-समुदाय के पास आजादी के संघर्ष के लिए गांधी का तरीका ही एक नैतिक और व्यावहारिक दृष्टि से पक्का तरीका है ।

अहिंसा के प्रति मेरी बौद्धिक जिज्ञासा का अन्त यहीं नहीं हुआ । अपने थियोलॉजिकल स्कूल के आखिरी वर्ष में मैंने श्री रेनहोल्ड निबुहर ( Reinhold Niebuhr ) का साहित्य पढ़ना शुरू किया । उपदेशात्मक और वास्तववादी शैली में लिखे हुए भी निबुहर के उत्तेजक तथा दृढ़ विचार मुझ पर अपनी छाप डाल रहे थे । मैं उनके विचारों तथा सामाजिक सिद्धान्तों से इतना एकमत होने लगा कि उन्होंने जो कुछ लिखा था, उसे बिना किसी तर्क-वितर्क के ही स्वीकार करने लगा ।

लगभग इसी समय मैंने श्री निबुहर द्वारा प्रस्तुत शान्तिवादी विचारों की समालोचना भी पढ़ी । वे स्वयं भी किसी समय शान्तिवादी संगठनों के सदस्य रह चुके थे । बहुत सालों तक वे 'फैलोशिप ऑफ रिकंसिलिएशन' नाम की विख्यात शान्तिवादी संस्था के अध्यक्ष भी रह चुके थे । शान्तिवादी विचारधारा के साथ उनका मतभेद सन् १९३०-'३९

के बीच हुआ। उन्होंने अपनी आलोचना को सबसे पहली बार जिस वक्तव्य में दिया, वह 'नैतिक मनुष्य और अनैतिक समाज'* शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। इस पुस्तक में उन्होंने यह तर्क उपस्थित किया था कि हिंसक प्रतिकार और अहिंसक प्रतिकार के बीच कोई नैतिक भेद-रेखा स्पष्ट रूप से नहीं खींची जा सकती। इन दोनों तरीकों के सामाजिक परिणाम भिन्न हो सकते हैं। लेकिन इन दोनों के बीच का भेद परिमाण में ही सकता है, प्रकार में नहीं। आगे इन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि अहिंसात्मक प्रतिकार पर निर्भर रहने से गैरजिम्मेदारी भी पैदा होती है, क्योंकि इस बात की कोई गारण्टी नहीं दी जा सकती कि अधिनायकवाद के प्रसार को रोकने में अहिंसात्मक प्रतिकार के तरीके सफलता प्राप्त करेंगे। उनका यह भी तर्क था कि अहिंसा तभी सफलता प्राप्त कर सकती है, जब कि उसका उपयोग किसी ऐसे समुदाय के विरुद्ध किया जाय, जो कुछ-न-कुछ परिमाण में नैतिक चेतनावाला हो, जैसा कि गांधी ने ब्रिटिश लोगों के सामने किया। निबुहर ने शान्तिवाद को पूरी तरह से अस्वीकार किया और यह अस्वीकृति उनके मानववादी विचारों पर आधारित थी। उनका यह कहना था कि शान्तिवाद सामाजिक क्रान्ति को चरितार्थ करने में असफल हुआ और उसके स्थान पर उसने एक साम्प्रदायिक परिपूर्णतावाद का सहारा लिया, जो यह मानता है कि "ईश्वरीय शक्ति मनुष्य को इतिहास की पापपूर्ण परिस्थितियों से ऊपर उठा लेती है और उसे पापपूर्ण संसार से ऊपर ही प्रतिष्ठित रखती है।"

पहले तो श्री निबुहर द्वारा की गयी शान्तिवाद की आलोचना से मैं भ्रम में फँस गया। लेकिन ज्यों-ज्यों मैं उनके विचारों को आगे पढ़ता और समझता गया, त्यों-त्यों उनमें अनेक कमियाँ दिखाई देने लगीं। उदाहरण के तौर पर उन्होंने शान्तिवाद की व्याख्या एक उदासीनता-मूलक तत्त्व के रूप में की, जो कि बुराई का प्रतिकार करने के लिए उद्यत नहीं होता और केवल भोले प्रेम में विश्वास रखता है। लेकिन

* 'Moral Man and Immoral Society'

यह एक गम्भीर भूल थी। गांधी के विचार पढ़ने के बाद मैं यह अच्छी तरह समझ गया कि शान्तिवाद बुराई के प्रति अप्रतिकार नहीं, बल्कि अहिंसक प्रतिकार है। इस अप्रतिकार में और अहिंसक प्रतिकार में रात-दिन का अन्तर है। गांधी ने बुराई का प्रतिकार उतनी ही उत्कटता और ताकत के साथ किया, जितना कि कोई हिंसक प्रतिकार करनेवाला करता। लेकिन उनके प्रतिकार में घृणा के स्थान पर प्रेम था। सच्चा शान्तिवाद बुरी शक्तियों के सामने सिर्फ आत्मसमर्पण नहीं है, जैसा कि श्री निबुहर ने कहा है। यह तो बुराई के साथ प्रेम की शक्ति का साहसपूर्ण मुकाबला है। इसमें यह विश्वास रहता है कि हिंसा को सहन कर लेना बेहतर होगा, बजाय हिंसा का जवाब हिंसा से देने के। क्योंकि हिंसा के व्यवहार से हिंसा और कटुता बढ़ती ही जायगी, जब कि इसे विषपान की तरह स्वीकार कर लेने से प्रतिपक्षी के हृदय में शायद शर्म उत्पन्न होगी और तब उसका हृदय-परिवर्तन सम्भव हो सकेगा।

इन सब बातों के बावजूद श्री निबुहर के सिद्धान्तों में मुझे बहुत-सी प्रेरक बातें भी मिलीं। बहुत-से ऐसे विचार-बिन्दु थे, जिन्होंने मेरे चिंतन को सक्रिय रूप से प्रभावित किया। समकालीन अध्यात्म-चिंता के क्षेत्र में श्री निबुहर का महान योगदान यह था कि उन्होंने प्रोटेस्टेंट पन्थ के अति उदारवादी व्यक्तियों के निरपेक्ष आशावाद का विरोध किया। फिर भी वे कॉन्टिनेण्ट के अध्यात्मवादी श्री कार्ल बर्थ के हेतुवाद-विरोधी (anti-rationalism) विचारों में अथवा अन्य सन्देहशील अध्यात्मवादियों के अर्धसिद्धान्तवाद (semi-fundamentalism) के विचारों में नहीं उलझे। श्री निबुहर के विश्लेषण की विशेषता यह भी थी कि उन्होंने बड़े असाधारण ढंग से मानव-स्वभाव का अन्तर्दर्शन किया था। खास तौर से राष्ट्रों तथा सामाजिक वर्गों के बीच का आचरण-व्यवहार किस तरह चलता है, इसके विश्लेषण में उन्होंने अपनी सूक्ष्म दृष्टि का अच्छा परिचय दिया था। वे मानव के उद्देश्यों में निहित पेचों और

गुत्थियों को बड़ी पैनी दृष्टि से देखते थे तथा नैतिकता एवं सत्ता के सम्बन्धों के भी सूक्ष्म विवेचक थे। उनका अध्यात्म-चिंतन इस वास्तविकता की बराबर याद दिलाता है कि मनुष्य के अस्तित्व में हर स्तर पर पाप मौजूद रहता है। श्री निबुहर के चिंतन में प्रस्तुत इन मुद्दों ने मुझे यह समझने में मदद पहुँचायी कि मनुष्य-स्वभाव के सम्बन्ध में ऊपरी आशावाद मात्र काल्पनिक दौड़ है और वास्तविकता से हटा हुआ निरर्थक आदर्शवाद खतरों से भरा हुआ है। मैं अभी भी यह विश्वास करता हूँ कि मनुष्य में अच्छाइयों की सम्भावनाएँ भरी हैं, परन्तु श्री निबुहर ने मेरा ध्यान इस बात की ओर भी आकृष्ट किया कि अच्छाइयों की तरह ही बुराइयों की संभावनाएँ भी मनुष्य में निहित हैं। श्री निबुहर ने मुझे यह समझने में मदद की कि मनुष्य जहाँ सामाजिक जीवन में पड़ता है, वहाँ उसमें अनेक पेंच और वक्रताएँ आ जाती हैं। उन्होंने सामूहिकता के कारण पैदा होनेवाले दोषों की चमकती हुई वास्तविकता मेरे सामने रखी।

बहुत-से शान्तिवादियों ने इस पहलू की उपेक्षा की है, ऐसा मुझे लगा। बहुत-से शान्तिवादी मनुष्य के सम्बन्ध में बहुत अधिक आशावादी थे और वे अन्तर्चेतन मानस में अपने को ही पूरी तरह सत्य के दावेदार मानने लगे थे। श्री निबुहर के विचारों के प्रभाव के कारण मेरे मन में शान्तिवादियों के इस रुख के खिलाफ विद्रोह जागा और इसीलिए शान्तिवाद की ओर गहरा झुकाव होने के बावजूद मैं किसी भी शान्तिवादी संगठन में शामिल नहीं हुआ। श्री निबुहर को पढ़ने के बाद मैंने वास्तविकतावादी शान्तिवाद को अपनाने की कोशिश की। दूसरे शब्दों में मैंने शान्तिवाद को सर्वथा निर्दोष विचार के रूप में नहीं, बल्कि वर्तमान परिस्थितियों में कम-से-कम दोषवाले विचार के रूप में अपनाया। मेरा यह विचार उस समय भी था और आज भी है कि शान्तिवादियों के संगठन में शामिल न होनेवाले क्रिश्चियन लोग जिस नैतिक पसोपेश का अनुभव करते हैं, अगर शान्तिवादी लोग उससे सर्वथा ऊपर उठे हुए

होने का दावा न करें, तो समाज पर वे अपना प्रभाव ज्यादा अच्छी तरह डाल सकेंगे।

मेरी अहिंसा की बौद्धिक तीर्थयात्रा का दूसरा पड़ाव बोस्टन विश्वविद्यालय में पढ़ते समय आया। यहाँ पर मुझे बहुत-से अहिंसावादी व्याख्याताओं से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इनमें से कुछ विद्यार्थी थे और कुछ बाहर से आनेवाले लोग। डीन श्री वाल्टर मूल्डर तथा प्रो० एलेन नाइट चामर्स के तत्वावधान में चलनेवाला बोस्टन विश्वविद्यालय का 'स्कूल ऑफ थियॉलॉजी' उन्हीं के असर की वजह से शान्तिवाद के साथ गहरी सहानुभूति रखता था। उपर्युक्त दोनों व्यक्तियों को सामाजिक न्याय की स्थापना के विचार से बहुत गहरा लगाव था। यह लगाव केवल ऊपरी आशावाद का ही परिणाम नहीं था, बल्कि उनके हृदय में मानव के प्रति एक गहरी श्रद्धा थी। उनका विचार था कि अगर मानव को ईश्वर के साथ मिलकर काम करने का मौका दिया जाय, तो मानवीय स्वभाव में बड़ी गहरी सम्भावनाएँ छिपी हैं। बोस्टन विश्वविद्यालय में ही मुझे स्पष्ट प्रतीति हुई कि श्री निबुहर ने मनुष्य स्वभाव की भ्रष्टता पर जरूरत से ज्यादा जोर दिया था। मनुष्य-स्वभाव के बारे में उनकी निराशा के साथ मनुष्य में निहित ईश्वरीय स्वभाव के प्रति आशा का सन्तुलन नहीं था। श्री निबुहर मनुष्य के पापों की बीमारी का विश्लेषण करने में इतने व्यस्त हो गये थे कि उन्होंने उस बीमारी के ईश्वरीय वरदान द्वारा होनेवाले उपचार को नजर-अन्दाज कर दिया।

मैंने बोस्टन विश्वविद्यालय में श्री एडगर एस० ब्राइटमॅन और श्री एल० हेराल्ड डे वोल्फ की देखरेख में दर्शन और अध्यात्मवाद का अध्ययन किया। इन दोनों ने मेरे चिंतन को बड़ी गति दी। इन्हीं अध्यापकों के तत्वावधान में मैंने व्यक्तित्ववादी दर्शन ( personalistic philosophy ) का अध्ययन किया। इस दर्शन का मुख्य सूत्र यह है कि अन्तिम वास्तविकता के रहस्य को समझने की कुंजी व्यक्तित्व ही है।

यह व्यक्तिपरायण आदर्शवाद ही आज मेरा बुनियादी दार्शनिक सिद्धान्त है। व्यक्तित्ववाद के इस आग्रह ने कि—मर्यादित या अमर्यादित—व्यक्तित्व ही अन्तिम वास्तविकता है, मुझे दो तरह से बल पहुँचाया। एक तो मुझे व्यक्तिगत ईश्वर के विचार के लिए तात्त्विक और दार्शनिक भूमिका मिली तथा दूसरे मुझे सभी मनुष्यों के व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा रखने के लिए तात्त्विक या आध्यात्मिक आधार मिला।

डॉ० ब्राइटमॅन की मृत्यु के कुछ ही पहले मैंने उनके साथ श्री हेगेल के दर्शन का अध्ययन शुरू किया। यद्यपि पाठ्यक्रम में उनकी 'फेनो-मेनॉलॉजी ऑफ माइण्ड' नाम का ग्रन्थ ही था। लेकिन मैंने अपना खाली समय भी उनके अन्य ग्रन्थ, जैसे 'फिलॉसफी ऑफ हिस्ट्री'; 'फिलॉसफी ऑफ राइट' आदि पढ़ने में बिताया। श्री हेगेल के चिंतन में ऐसे बहुत-से पहलू थे, जिनके साथ मैं कतई सहमत नहीं हो सका। उनका सुनिश्चित, अन्तिम और निरंकुश विचारवाद तर्क की कसौटी पर खरा नहीं उतरता था, क्योंकि यह अनेक तथ्यों को एक ही खूँटे से बाँध देनेवाला था। लेकिन उनके चिन्तन में कुछ ऐसे पहलू भी थे, जिन्होंने मुझे आन्दोलित किया। उनके इस कथन और विश्लेषण ने कि 'सत्य पूर्ण है', मुझे एक दार्शनिक और तर्कपूर्ण विचारधारा दी। उनका न्याय-पद्धति का विवेचन अपनी कमियों के बावजूद मुझे यह समझाने में मददगार हुआ कि संघर्ष से ही विकास होता है।

सन १९५४ में मैंने इन सभी बुद्धिवादियों की विचारधारा का अध्ययन समाप्त कर लिया और उनके विचारों में से एक विधायक सामाजिक दर्शन की पँखुड़ियाँ मेरे मानस में फूटने लगी थीं। इन विभिन्न दर्शनधाराओं से मुझे यह दृढ़ विश्वास प्राप्त हुआ कि दमित एवं शोषित समाज के पास सामाजिक न्याय की प्राप्ति के संघर्ष में विजय पाने के लिए अहिंसात्मक प्रतिकार का शस्त्र ही सर्वाधिक उपयुक्त था। किन्तु उस समय तक अहिंसा को मैंने केवल बौद्धिक रूप से ही समझा और

लगता था। इस विचार को किसी सामाजिक परिस्थिति में आजमाने की निष्ठा मुझमें पैदा नहीं हुई थी।

जब मैं एक पादरी के रूप में मॉण्टगोमरी गया था, तो मेरे दिमाग में तिलमात्र भी यह विचार नहीं था कि मैं वहाँ जाकर किसी ऐसे सामाजिक आन्दोलन में लिप्त हो जाऊँगा, जिसमें कि अहिंसात्मक प्रतिकार के तरीकों को आजमाने का मौका मिलेगा। मैंने मॉण्टगोमरी का बस-आन्दोलन न तो शुरू किया और न उसे शुरू करने का सुझाव ही दिया। मैंने तो लोगों की इस माँग को स्वीकारभर किया कि इस आन्दोलन के संचालन में प्रवक्ता का काम करूँ। जब हमारा बस-आन्दोलन शुरू हुआ, तब मेरा ध्यान सचेतन या अवचेतन रूप से 'सरमन ऑन दी माउण्ट' के सिद्धान्त, जिसमें कि प्रेम का उत्कृष्ट दर्शन निहित है, और गांधीजी के अहिंसात्मक प्रतिकार के तरीकों की ओर गया। ज्यों-ज्यों दिन बीते, त्यों-त्यों अहिंसा की शक्ति को मैंने अधिक-से-अधिक समझा। जब आन्दोलन के वास्तविक अनुभव के दौरान से मैं गुज़र रहा था, तब अहिंसा मेरे लिए केवल बौद्धिक तर्क-वितर्क का विषय नहीं रह गयी थी, बल्कि एक जीवन-पद्धति के रूप में मैं उसके साथ बँध गया था। अहिंसा-सम्बन्धी बहुत-से ऐसे प्रश्न, जिन्हें मैं बौद्धिक तर्क-वितर्क से हल नहीं कर पाया था, जीवन के व्यावहारिक क्रिया-कलापों से स्वतः हल होते गये।

मॉण्टगोमरी-आन्दोलन में अहिंसा ने एक विधायक और महत्त्वपूर्ण पार्ट अदा किया। इसलिए यहाँ उसके कुछ बुनियादी पहलुओं की चर्चा करना शायद अप्रासंगिक नहीं होगा।

सबसे पहले इस बात पर ज़ोर दिया जाना चाहिए कि अहिंसात्मक प्रतिकार कायर लोगों द्वारा इस्तेमाल किया जानेवाला तरीका नहीं है; क्योंकि इसमें प्रतिकार की महान् शक्ति निहित है। अगर कोई व्यक्ति अहिंसा के तरीकों का इस्तेमाल भयभीत होकर अथवा हिंसात्मक साधनों के अभाव में करता है तो वह अहिंसक नहीं है। इसीलिए, गांधी ने कहा है

कि अगर हिंसा का विकल्प एकमात्र कायरता ही है, तो उस कायरता की अपेक्षा हिंसा अथवा लड़ना ही बेहतर है। गांधी ने यह विचार व्यक्त किया, इसका कारण यह था कि उनकी दृष्टि में यह साफ था कि हिंसा का विकल्प कुछ और भी हो सकता है : किसी भी व्यक्ति या समुदाय को किसी भी गलत साधन के सम्मुख आत्मसमर्पण करने की जरूरत नहीं है और न गलत को सही बनाने के लिए हिंसा के उपयोग की ही जरूरत है। इसके अलावा भी एक तीसरा रास्ता अहिंसात्मक प्रतिकार का है, जिस पर केवल शक्तिशाली लोग ही चल सकते हैं। यह उदासीनता और कमजोरी का मार्ग नहीं है। कभी-कभी 'शान्त प्रतिकार' शब्द में से निष्क्रियता का-सा आभास आता है, जिसमें कि प्रतिकार करनेवाला चुपचाप बुराई के सामने सिर झुका देता है। परन्तु यह अहिंसात्मक प्रतिकार नहीं है। इससे बढ़कर गलत बात हो ही नहीं सकती। अहिंसात्मक प्रतिकार करनेवाला शान्त केवल इसी अर्थ में रहता है कि वह शारीरिक रूप से अपने विरोधी के ऊपर आक्रमण नहीं करता। परन्तु उसका मस्तिष्क और उसकी भावनाएँ सदा ही सक्रिय रहती हैं और वह अपने विरोधी को हर तरह से उसकी गलती समझाने में जुटा रहता है। इस तरह अहिंसात्मक प्रतिकार शारीरिक रूप से भले ही निष्क्रिय दीखता है, पर आध्यात्मिक रूप से मजबूत और सक्रिय होता है। अहिंसा बुराई के प्रति शिथिल या अप्रतिकारमूलक नहीं है। यह तो सक्रिय तथा अहिंसक प्रतिकारमूलक है।

अहिंसा के स्वरूप-निरूपण में दूसरा बुनियादी पहलू यह है कि वह अपने प्रतिपक्षी को हराने या निर्दयता से मिटाने का उद्देश्य नहीं रखती बल्कि उसे मित्र बनाकर उसमें वास्तविकता की समझ पैदा करना चाहती है। अहिंसात्मक प्रतिकार करनेवाला अपने विरोध को असहयोग या बहिष्कार के माध्यम से अवश्य प्रकट करता है, परन्तु वह जानता है कि उसका आखिरी उद्देश्य इतना ही नहीं है; बल्कि अपने प्रतिपक्षी के हृदय में एक नैतिक भावना को जाग्रत करने के लिए वह असहयोग

या बहिष्कार को साधन के रूप में अपना रहा है। उसका उद्देश्य तो सहयोग और सामंजस्य की स्थिति पैदा करना ही है। अहिंसा का परिणाम एक प्रेमपूर्ण समुदाय की स्थापना है; जब कि हिंसा का परिणाम एक दुःखद कटुता के रूप में प्राप्त होता है।

इस तरीके की तीसरी विशेषता यह है कि इसका आक्रमण बुराई की शक्तियों पर होता है, न कि उन व्यक्तियों पर, जो संयोग से उस बुराई के आचरण में फँसे हुए हैं। जिसको अहिंसक प्रतिकार करनेवाला हराना चाहता है वह बुराई ही है, न कि वह व्यक्ति, जो उस बुराई का शिकार हुआ है। अगर अहिंसक प्रतिकार करनेवाला रंगभेद के अन्याय का विरोध कर रहा है, तो वह अपने हृदय में अच्छी तरह से जानता है कि बुनियादी तनाव भिन्न-भिन्न रंगवाले वंशों के बीच नहीं है। जैसा कि मैं मॉण्टगोमरी के लोगों को कहना पसन्द करूँगा : "हमारे शहर में असली तनाव गोरे और काले लोगों के बीच नहीं है, बल्कि न्याय और अन्याय के बीच में है; प्रकाश और अन्धकार की शक्तियों के बीच है। अगर हमें कोई विजय प्राप्त होती है, तो वह केवल पचास हजार नीग्रो लोगों की विजय नहीं होगी, बल्कि यह न्याय और प्रकाश की शक्तियों की विजय होगी। हमें अन्याय को हराना है, न कि अन्यायग्रस्त लोगों को।"

इस सिद्धान्त का चौथा पहलू यह है कि इस विचार को माननेवाला बदला लेने की भावना के बिना हर तरह की तकलीफों को सहन करने के लिए तैयार रहता है। वह अपने प्रतिपक्षी से, बिना बदले में चोट पहुँचाये ही, चोटें बरदाश्त करने की भी तैयारी रखता है। "इससे पहले कि हम स्वतन्त्रता प्राप्त करें, शायद खून की नदियाँ बह जायँगी। लेकिन वह खून हमारा अपना ही होना चाहिए।" गांधी ने अपने देशवासियों से इस तरह अपील की थी। अहिंसक प्रतिकार करनेवाला अपने प्रतिपक्षी की हिंसा को स्वीकार करने के लिए तैयार रहता है; परन्तु वह स्वयं बदले में हिंसा नहीं करता। वह जेल जाने से भी किनारा

करना नहीं चाहता। अगर उसके लिए जेल जाना आवश्यक हो, तो वह उसी तरह निस्संकोच चला जाता है, जैसे एक दूल्हा अपनी दुल्हिन के शयन-कक्ष में।

कोई यह पूछ सकता है कि "अहिंसक प्रतिकार करनेवाले के पास ऐसा कौन-सा समर्थनीय पक्ष है कि जिसके आधार पर वह एक गाल पर कोई थप्पड़ मारे तो दूसरा गाल सामने करने के प्राचीन धार्मिक सिद्धान्त को एक व्यापक राजनैतिक आन्दोलन के माध्यम से अग्नि-परीक्षा में उतारने की हिमाकत करे?" इसका उत्तर इस तरह प्राप्त किया जा सकता है कि सहजप्राप्त कष्ट मुक्ति को नजदीक लाते हैं। अहिंसक प्रतिकार करनेवाला यह समझता है कि कष्ट-सहिष्णुता में गजब की शैक्षणिक और क्रान्तिकारी सम्भावनाएँ छिपी हैं। "बुनियादी महत्त्व की चीजें केवल तर्क-वितर्क से प्राप्त नहीं की जा सकतीं, बल्कि वे अनेक कष्टों को सहन करने के माध्यम से ही खरीदी जा सकती हैं", ऐसा गांधी ने कहा है। उन्होंने आगे यह भी कहा है कि "कष्टों को सहन करना निश्चय ही, प्रतिपक्षी का हृदय बदलने के लिए वन्य-न्याय से ज्यादा शक्तिशाली उपाय है। इस तरीके से हम अपने प्रतिपक्षी के कानों को खोल सकते हैं, जो तर्क और न्यायपूर्ण बातों को सुनने के लिए अब तक बन्द हैं।"

अहिंसक प्रतिकार के सम्बन्ध में पाँचवाँ पहलू यह है कि इसके माध्यम से केवल शारीरिक और बाहरी हिंसा ही दूर नहीं की जाती, बल्कि आन्तरिक याने भावनात्मक हिंसा से भी बचने की चेष्टा की जाती है। अहिंसक प्रतिकार करनेवाला अपने प्रतिपक्षी को केवल पिस्तौल से मार देना ही गलत नहीं समझता, बल्कि वह अपने प्रतिपक्षी से घृणा करने तक को भी गलत समझता है। अहिंसा के दर्शन के केन्द्र में प्रेम का सिद्धान्त निहित है। वह मानवीय प्रतिष्ठा के संघर्ष के लिए आग्रहशील होता है। उसका यह भी आग्रह होता है कि विश्व के दमित और

शोषित लोग अपने संघर्ष में कटु अथवा अभद्र न बनें और अगर उनके आन्दोलन में कहीं घृणात्मक व्यवहार को स्थान मिलता हो तो उसे स्थान न करें। घृणा के बदले में घृणा करने से कोई लाभ नहीं होगा, बल्कि विश्व में इस दुर्भावना का विस्तार ही होगा। जीवन के मार्ग पर बढ़ते हुए हममें इतनी जागृति और नैतिकता होनी ही चाहिए कि हम घृणा की जंजीर को काट सकें। यह तभी सम्भव हो सकेगा, जब कि हम अपने जीवन के केन्द्र में प्रेम के सूत्र को स्थापित करें।

यहाँ हम प्रेम की चर्चा कर रहे हैं, तो हमारा आशय उस प्रेम से नहीं है, जो कि भावुकता और व्यक्तिगत समर्पण की अनुभूतियों से पैदा होता है। यह कहना व्यर्थ होगा कि हम अपने शोषक तथा दमनकर्ताओं से ऐसा प्रेम करें, जिसमें व्यक्तिगत समर्पण की भावुकतामयी अनुभूतियाँ निहित हों। यहाँ पर हम उस प्रेम की चर्चा कर रहे हैं, जो प्रेम आपस की गहरी समझ तथा सद्भावना पर आधारित हो। प्रेम के इस अर्थ को समझने के लिए हम ग्रीक भाषा की मदद ले सकते हैं। ग्रीक न्यू टेस्टामेंट में प्रेम के लिए तीन शब्द हैं। पहला शब्द है—'इरोस' ( Eros )। प्लेटोनिक दर्शन में 'इरोस' का अर्थ है, ईश्वरीय राज्य की प्राप्ति के लिए आत्मा की उत्कण्ठा। परन्तु अब इस शब्द का अर्थ सौन्दर्य अथवा रोमान्स के साथ जुड़ गया है। दूसरा शब्द है 'फिलिया' ( Philia ), जिसका अर्थ होता है, व्यक्तिगत मित्रों के बीच का गहरा स्नेह-सम्बन्ध। 'फिलिआ' शब्द एक तरह के पारस्परिक प्रेम का सूचक है। एक व्यक्ति प्रेम करता है, क्योंकि दूसरे ने उससे प्रेम किया है। जब हम अपने विरोधियों से प्रेम करने की बात करते हैं, तब हमारा आशय न तो 'इरोस' से है, न 'फिलिया' से। हम जिस प्रेम की बात करते हैं, वह ग्रीक शब्द 'अगेप' ( Agape ) से प्रकट होता है। 'अगेप' का अर्थ होता है, आदमी की समझ और समस्त मनुष्यों के लिए सद्भावपूर्ण व्यवहार। यह एक उमड़ता हुआ प्रेम है, जो पूर्णतः सहज है, निःस्वार्थ है, निरपेक्ष है और सर्जक है। यह प्रेम किसी उद्देश्य से किये

विशेष व्यक्ति के खास गुण के कारण नहीं किया जाता। यह एक ईश्वरीय प्रेम है, जो मानव-हृदय में सहज उत्पन्न होता है।

'अॅगेप' एक निःस्वार्थ प्रेम का नाम है। यह एक ऐसा प्रेम है, जिसमें व्यक्ति अपना नहीं, बल्कि अपने पड़ोसी का भला चाहता है। (कोरंथियों के नाम प्रथम पत्र १०:२४) 'अॅगेप' का प्रारम्भ योग्य और अयोग्य के भेदभाव के साथ नहीं होता। न वह मनुष्यों के गुण-अवगुण देखता है। यह दूसरों के लिए दूसरों से प्यार करने के रूप में ही जन्म लेता है। यह प्रेम पूरी तरह से दूसरों के प्रति सम्बन्ध और सद्भाव पैदा करनेवाला एक पड़ोसी धर्म है। यह प्रेम जिन-जिनसे मिलता है, उन सभी को अपने पड़ोसी के रूप में देखता है। इसलिए 'अॅगेप' मित्रों और दुश्मनों के बीच कोई भेद-रेखा नहीं खींचता। यह दोनों की ओर जाता है। अगर कोई किसीसे केवल मित्रता के लिए प्रेम करता है तो वह मित्रता से प्राप्त होनेवाले लाभों के लिए प्रेम कर रहा है, न कि उस मित्र के लिए। हमारा प्रेम निःस्वार्थ है या नहीं, इसकी कसौटी तभी हो सकती है, जब कि हम अपने उस दुश्मन पड़ोसी से भी प्रेम करें, जिसके बदले में हमें कोई लाभ होनेवाला नहीं है; बल्कि निर्दयता और अभद्र व्यवहार ही मिलनेवाला है।

'अॅगेप' का एक और बुनियादी पहलू यह है कि इसका जन्म हमारी अपनी नहीं, बल्कि दूसरों की जरूरतों से होता है—क्योंकि दूसरे लोग भी अच्छे-से-अच्छे मानव-परिवार में रहना चाहते हैं। (यह प्रेम ऐसा परिवार गढ़ने में मदद करता है।) जिस समारिटन ने जेरिको रोड पर यहूदियों की मदद की, वह 'अच्छा' था, क्योंकि उसने उन मानवीय आवश्यकताओं को पूरी करने का उत्तरदायित्व लिया, जो उस पर सहज आ पड़ी थीं। ईश्वर का प्रेम शाश्वत है और वह मनुष्यों को प्राप्त होता ही है। पर वह इसलिए प्राप्त नहीं होता कि मनुष्यों को ईश्वरीय प्रेम की जरूरत है। सन्त पॉल हमें यह विश्वास दिलाते हैं कि मुक्ति दिलानेवाला प्रेम हमें तभी प्राप्त हो गया था, 'जब कि हम पापी ही थे।' वह एक ऐसा बिन्दु था, जब

कि हमें उस ईश्वरीय प्रेम की निहायत जरूरत थी। क्योंकि गोरे लोगों का व्यक्तित्व भेद-भाव के कारण बुरी तरह क्षत-विक्षत है और उनकी आत्मा बुरी तरह से टूटी हुई है। उन्हें नीग्रो लोगों के प्रेम की बेहद जरूरत है। नीग्रो लोगों को गोरे लोगों से अवश्य प्रेम करना चाहिए, क्योंकि उन्हें ( गोरों को ) अपने आन्तरिक तनाव, असुरक्षा और भय को मिटाने के लिए नीग्रो लोगों के प्रेम की आवश्यकता है।

'अगेप' कोई कमजोर और उदासीन प्रेम नहीं है। यह एक सक्रिय प्रेम है। यह मनुष्यों में सामुदायिक भावना का निर्माण करना और उस भावना को सुरक्षित रखना अपना उत्तरदायित्व समझता है। यह एक ऐसा प्रेम है, जो समुदाय को उस समय भी संगठित रखना चाहता है, जब कि कुछ लोग उसे तोड़ने के प्रयत्न में लगे हों। 'अगेप' लोगों को अपनी लाभ के लिए त्याग और बलिदान की भावना सिखाता है। यह समुदाय हित के लिए अधिकतम सीमा तक जाने को तैयार रहता है। यह पहले मील पर ही रुक नहीं जाता, बल्कि समुदाय-हित को प्राप्त करने के लिए दूसरे मील तक भी जाता है। यह एक ऐसे प्रेम की भावना है, जो केवल सात बार ही नहीं, बल्कि सत्तर गुने सात बार क्षमा कर देनेवाली वृत्ति को बढ़ावा देती है। विघटित और विशृंखलित होते हुए समाज को बचाने के लिए सूली पर चढ़ जाने तक की जो भावना ईसा में प्राप्त होती है, वह इस 'अगेप' का ही आन्तरिक प्रकटीकरण है। इससे यह जाहिर हो जाता है कि समाज-हित के लिए प्राणों का बलिदान भी आवश्यक है। ईसामसीह का पुनरुत्थान समाज को तोड़नेवाली शक्तियों पर ईश्वर की विजय का प्रतीक है। यह पवित्र भावना, जो टूटते हुए समाज को बचाने के लिए प्रयत्नशील है, सम्पूर्ण इतिहास के पन्नों में भरी हुई है। जो सामाजिक जीवन के विनाश का प्रयास करता है, वह ईश्वरीय सत्ता का विरोधी है। इसलिए अगर मैं घृणा का जवाब घृणा से देता हूँ, तो मैं टूटे हुए समाज को और ज्यादा तोड़ने के सिवा और कुछ नहीं कर रहा हूँ। समाज में पड़ी हुई दरारें तभी पाटी जा सकती हैं, जब मैं घृणा का जवाब

प्रेम से दूँ। अगर मैं घृणा के बदले में घृणा करता हूँ तो उससे मेरा ही व्यक्तित्व खण्डित होता है; क्योंकि यह ईश्वरीय विश्व-सत्ता इस तरह से बनायी गयी है कि मेरा व्यक्तित्व तभी परिपूर्ण बन सकता है, जब कि मैं पूरे समाज का एक अंग बनकर रहूँ। श्री बुकर टी० वाशिंगटन ने ठीक ही कहा है : "किसी भी व्यक्ति को तुम ऐसा अवसर न दो कि वह तुम्हें इतना नीचे गिरा दे कि तुम उससे घृणा करने लगो।" जब कोई व्यक्ति हमें इतने नीचे स्तर पर ले आता है, तब वह हमें ऐसे बिन्दु पर पहुँचा देता है कि हम समाज-विरोधी अथवा समाज-विद्रोही बन जाते हैं। वह हमें उस बिन्दु पर खींच ले जाता है, जहाँ ईश्वरीय विश्व-सत्ता पर ही आक्रमण हो जाता है और इसलिए व्यक्तित्व के खण्डित होने का खतरा उपस्थित हो जाता है।

'अॅगेप' इस तथ्य का प्रतिपादन करता है कि सभी प्राणी एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं। पूरी मानवता एक ही प्रक्रिया में से गुजरती है और सारे मानव आपस में भाई-भाई हैं। मैं अपने भाई को नुकसान पहुँचा रहा हूँ, इसका अर्थ यह है कि मैं अपने को ही नुकसान पहुँचा रहा हूँ; फिर भले ही मेरा भाई मेरे प्रति कैसा भी व्यवहार क्यों न कर रहा हो! उदाहरण के तौर पर श्वेतांग-समुदाय प्रायः केन्द्रीय सरकार से प्राप्त होनेवाला शैक्षणिक अनुदान इसलिए अस्वीकार कर देता है कि उससे नीग्रो लोगों को भी मदद पहुँच जायगी। परन्तु क्योंकि सभी मानव आपस में भाई हैं, इसलिए वे अपने बच्चों के लिए नुकसान उठाये बिना नीग्रो बच्चों का नुकसान नहीं कर सकते। वे अपने को नुकसान पहुँचाकर ही नीग्रो बच्चों को प्राप्त होनेवाली सहायता को रुकवाते हैं। ऐसा क्यों होता है! इसलिए कि सभी मनुष्य एक ही परिवार के सदस्य हैं और भाई हैं। अगर आप मेरा नुकसान कर रहे हैं तो वह आपका ही नुकसान हो रहा है।

'अॅगेप', प्रेम ही एक ऐसा सीमेंट है, जो इस टूटते हुए समाजरूपी महल को जोड़कर रख सकता है। जब मुझे प्रेम करने के लिए ईश्वर से

आज्ञा मिली है, तो वह आज्ञा समाज को व्यवस्थित तथा शृंखलाबद्ध रखने की ही आज्ञा है। वह आज्ञा अन्याय का प्रतिकार करने की और मेरे भाइयों की जरूरतें पूरी करने की आज्ञा है।

अहिंसक प्रतिकार का विश्लेषण करने में जो छठा पहलू है, वह इस विश्वास पर आधारित है कि यह सम्पूर्ण सृष्टि न्याय के पक्ष में है। परिणामस्वरूप अहिंसा में विश्वास करनेवाला भविष्य के प्रति गहरी आस्था रखता है। यह आस्था ही इस बात का कारण है कि अहिंसक प्रतिकार करनेवाला अपने ऊपर पड़े हुए कष्टों को बिना बदला चुकाये सहन करने के लिए तैयार रहता है। वह जानता है कि न्याय के संघर्ष में सारा विश्व उसका साथी है। यह सच है कि ऐसे भी बहुत-से अहिंसावादी हैं, जिन्हें अहिंसा में पूरी निष्ठा एवं श्रद्धा है, परन्तु किसी साकार ईश्वर में विश्वास करना उन्हें कठिन प्रतीत होता है। लेकिन ऐसे लोग भी किसी ऐसी सक्रिय शक्ति के अस्तित्व में विश्वास करते हैं, जो सृष्टि की एकता को कायम रखती है; चाहे हम उसे अवचेतन प्रक्रिया कहें, या निराकार ब्रह्म या अतुलनीय शक्ति और अपरिमित प्रेमवाला कोई साकार पुरुष। पर कोई-न-कोई ऐसी सक्रिय शक्ति इस सृष्टि में अवश्य विद्यमान है, जो इस सृष्टि की बिखरी हुई वास्तविकताओं में सामंजस्य तथा एकता पैदा करती है।

# विरोध की पद्धति

## ७

यद्यपि बस-बहिष्कार-आन्दोलन को प्रारम्भ में ही खूब सफलता प्राप्त हो गयी थी, फिर भी नगरपिताओं और बस-अधिकारियों को ऐसा लगता था कि कुछ ही दिन मे यह आन्दोलन टाँय-टाँय फिस हो जायगा। वे अपने मन में यह निश्चित मान चुके थे कि बरसात का पहला दिन ही नीग्रो लोगों को वापस बसों में पहुँचा देगा। इसी उम्मीद के कारण उन्होंने बसों की हालत में सुधार करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया। परन्तु बरसात का पहला दिन आया और चला गया। बसें खाली की खाली रहीं!

इस दौरान में नगरपिताओं और बस-अधिकारियों ने पहली बार समझौता-वार्ता चलाने की इच्छा जाहिर की। बुधवार, ता० ७ दिसम्बर

की दोपहर को रेवरेंड रॉबर्ट ह्यूजेस ने, जो अलबामा मानवीय सम्बन्ध परिषद् के कार्यकारी संचालक थे, बताया कि वे और मानवीय सम्बन्ध परिषद् के दो अन्य सदस्य—एपिस्कोपल चर्च के स्थानीय पादरी रेवरेंड थॉमस पी॰ थ्रासर तथा अलबामा स्टेट कॉलेज के अध्यक्ष डॉ॰ एच॰ कौन्सिल ट्रेनहोम—नगरपिताओं और बस-अधिकारियों को बृहस्पतिवार की सुबह ११ बजे नीग्रो नेताओं के साथ वार्ता करने के लिए राज़ी करने में सफल हो गये हैं।

मॉण्टगोमरी विकास संगम की कार्यकारिणी समिति की एक विशेष बैठक में बारह व्यक्तियों की समझौता-वार्ता समिति नियुक्त की गयी और इस समिति का प्रवक्ता मुझे बनाया गया। यह तय किया गया कि हम लोग वे ही तीन प्रस्ताव उपस्थित करेंगे, जो कि सोमवार की रात को आम सभा में स्वीकार किये जा चुके हैं। संक्षेप में ये प्रस्ताव ये थे: (१) सद्भावपूर्ण व्यवहार का आश्वासन; (२) जो यात्री पहले आयें, वे पहले बैठें और नीग्रो यात्री बस में पीछे की ओर से बैठें; इस बात का आश्वासन; (३) नीग्रो-बस्तियों में चलनेवाली बसों में नीग्रो बस ड्राइवरों की नियुक्ति। इन तीनों प्रस्तावों का एक उद्देश्य, हमारे सामने जो समस्या मुँह बाये खड़ी थी, उसके तात्कालिक समाधान से अधिक कुछ नहीं था। हमने यह कभी नहीं माना कि पहले आनेवाले के पहले बैठने का नियम कोई अन्तिम समाधान हो सकेगा; क्योंकि आखिरकार यह नियम तभी लागू होगा, जब कि रंगभेद-कानून में परिवर्तन आयेगा। पर हम इस बात में निश्चित थे कि श्रीमती रोज़ा पार्क्स का मुकदमा, जो कि न्यायालय में चल रहा था, एक ऐसी कसौटी उपस्थित करेगा, जो बसों में चलनेवाले भेदभाव को समाप्त कर सकेगी।

हम लोग निश्चित समय से पन्द्रह मिनट पहले ही नगरपालिका के कार्यालय में पहुँच गये। वहाँ हमें कमिश्नर के कमरे में जाने के लिए कहा गया। वह काफी बड़ा कमरा था, जिसके एक छोर पर कमिश्नर का डेस्क था और उसके सामने बहुत-सी कुर्सियाँ लगायी हुई थीं। हम

लोग सामनेवाली कुर्सियों पर बैठ गये। थोड़ी देर में सर्वश्री आशर, ह्यूजेस और ट्रेनहोम भी आ गये। दो या तीन प्रेस-रिपोर्टर भी वहाँ आ गये। टेलीविजन कैमरे लगा दिये जाने से इस वार्ता के महत्त्व पर प्रकाश पड़ता था। ठीक ११ बजे तीनों कमिश्नर—मेयर श्री डब्ल्यू० एन्० गेल, कमिश्नर श्री क्लाइड सेलर्स तथा कमिश्नर श्री फ्रैंक ए० पार्क्स—भी कमरे में पहुँचे और हमारी तरफ मुँह करके टेबुल के उस ओर बैठ गये। बस-कम्पनी का प्रतिनिधित्व करनेवाले श्री जे० इ० बैगली और श्री जैक क्रेनशॉ भी आकर टेबुल के एक छोर पर बैठ गये। इस तरह हम लोगों की अलग-अलग पंक्तियाँ बैठक प्रारम्भ होने के पहले ही लग गयीं।

मेयर ने बैठक की कार्रवाई प्रारम्भ करते हुए श्री आशर से निवेदन किया कि वे प्रारम्भिक वक्तव्य दें। क्रिश्चियन भाईचारे के आदर्श में गहरी निष्ठा रखनेवाले श्री आशर सामने की ओर आये तथा संक्षेप में उन्होंने बताया कि मानवीय सम्बन्ध परिषद् ने इस बैठक का आयोजन किन कारणों से किया है। उन्होंने अपना विश्वास प्रकट किया कि दोनों पक्ष अपने-अपने पहलुओं को उपस्थित करने में भावुकतारहित होकर औचित्य और कुशलता का प्रदर्शन करेंगे।

मेयर महोदय नीग्रो शिष्ट-मण्डल की ओर घूमे और पूछा : "आप लोगों का प्रवक्ता कौन है ?" जब सबकी आँखों ने मेरी ओर इशारा किया, तब मेयर बोले : "अच्छा, आगे आइये और अपना वक्तव्य प्रस्तुत कीजिये।" टेलीविजन की फ्लैश बत्तियों की चमक में मैं धीरे-धीरे आगे आकर श्री बैगली और श्री क्रेनशॉ के ठीक सामने बैठ गया।

मैंने अपना वक्तव्य प्रारम्भ करते हुए संक्षेप में बताया कि हमारे लिए बसों का बहिष्कार करना क्यों आवश्यक हो गया था। मैंने यह स्पष्ट किया कि श्रीमती पार्क्स की गिरफ्तारी हमारे आन्दोलन का बुनियादी कारण नहीं था। यह तो हमारे अन्दर साहस पैदा करनेवाला अथवा हमारी गति में शीघ्रता लानेवाला एक तथ्यमात्र था। मैंने कहा :

"हमारा आन्दोलन तो उन मर्मान्तक अन्याय और अप्रतिष्ठापूर्ण घटनाओं से जुड़ा हुआ है, जो सालों से घटती आ रही हैं।" उसके बाद मैंने ऐसे बहुत-से उदाहरण पेश किये, जो बस-ड्राइवरों की अभद्रता के प्रमाण थे और उन अवसरों का भी बयान किया, जब बस में सीटें खाली रहते हुए भी नीग्रो यात्रियों को खड़े रहना पड़ा था। मैंने इस बात पर जोर दिया कि नीग्रो लोगों ने काफी धीरज का परिचय दिया है और इससे पहले भी अनेक बार समझौता-वार्ता के द्वारा समाधान निकालने की कोशिश की है, पर अब तक इसका कोई फल नहीं निकला।

इस तरह अपनी भूमिका स्पष्ट कर देने के बाद मैंने नीग्रो-समाज की ओर से पास किये हुए तीनों प्रस्ताव रखे और विस्तार से उनका विश्लेषण किया। इसके साथ ही मैंने यह भी स्पष्ट किया कि बस में जो पहले आयें, वे पहले बैठें तथा नीग्रो लोग पीछे की तरफ से एवं गोरे लोग आगे की तरफ से बैठना शुरू करें, यह इन्तजाम कोई नया प्रस्ताव नहीं है; क्योंकि दक्षिणी राज्यों के अनेक शहरों में, जैसे—नाशविल, अटलांटा और यहाँ तक कि अलबामा राज्य में ही मोबाइल जैसे नगरों में यह तरीका चलता है। इन शहरों की बसों में भी रंगभेद उतना ही बुरी तरह से फैला हुआ है, जितना कि मॉन्टगोमरी में। जहाँ तक ड्राइवरों की तरफ से भद्रतापूर्ण व्यवहार का हमारा निवेदन है, "हर व्यापार-कम्पनी को अपने ग्राहकों को कम-से-कम यह तो देना ही चाहिए।" मैंने इस पहलू की ओर भी इंगित किया कि बस-कम्पनी की तिजोरी में नीग्रो लोगों ने भारी पैसा भरा है, इसलिए नीग्रो-बस्तियों में चलनेवाली बसों में नीग्रो लोगों को ड्राइवर का काम देकर उस पैसे का कुछ लाभ वापस नीग्रो लोगों को पहुँचाया जाय, यह तो औचित्य का साधारण-सा तकाजा है। मैंने उन्हें याद दिलाया : "बस-कम्पनी इस बात से सहमत है कि उसके पचहत्तर प्रतिशत ग्राहक, जो कि किसी भी व्यापार के वास्तविक आश्रयदाता होते हैं, अश्वेत लोग ही हैं। इसलिए मैं समझता हूँ कि यह एक अच्छी व्यापारी बुद्धि मानी जायगी कि अपने

बड़े ग्राहक-समूह में से भी कुछ कर्मचारी रखे जायँ।" मैंने अपना वक्तव्य पूरा करते हुए कमिश्नरों को यह विश्वास दिलाया कि हम अपना आन्दोलन प्रतिष्ठा तथा संयम के ऊँचे स्तर पर चलायेंगे। हमारा यह उद्देश्य नहीं है कि बस-कम्पनी का व्यापार समाप्त कर दिया जाय। हमारा उद्देश्य तो इतना ही है कि हम अपने लिए और साथ-ही-साथ गोरे समुदाय के लिए न्याय हासिल करें।

ज्यों ही मैंने अपना वक्तव्य समाप्त किया, मेयर महोदय ने इस सम्बन्ध में खुली चर्चा प्रारम्भ करने का इशारा किया। नीग्रो शिष्ट-मण्डल के कई सदस्यों ने हमारे तीन प्रस्तावों पर कुछ और अधिक प्रकाश डाला। तब कमिश्नरों और बस-कम्पनी के कानून-विशेषज्ञों ने कुछ प्रश्न उठाये। हमने बसों में बैठने के प्रबन्ध के बारे में जो सुझाव उपस्थित किया था, उसके कानून-सम्मत होने में उन्होंने आशंका प्रकट की। उनका कहना था कि नीग्रो लोगों की माँगें कुछ इस तरह की हैं कि जिससे कानून भग होता है। हमने अपने पहले के तर्क फिर से उपस्थित करते हुए कहा कि रंगभेद-कानून के अन्तर्गत ही हम यह माँग करते हैं कि जो पहले आये वह पहले बैठे और केवल श्वेतांगों के लिए सुरक्षित सीटों को नीग्रो यात्री छोड़ दें। इस तरह की व्यवस्था दक्षिणी राज्यों के अनेक शहरों में चलती भी है।

बहुत शीघ्र ही यह स्पष्ट हो गया कि बस-कम्पनी के कानूनी सलाहकार श्री क्रनशॉ हमारे सबसे अड़ियल प्रतिपक्षी थे। उन्होंने बड़े हठ के साथ हमें यह समझाना चाहा कि प्रस्तावित सुझावों को मानकर बसों में बैठने का प्रबन्ध करना नगर के कानून को भंग किये बिना सम्भव नहीं है। श्री क्रेनशॉ अपना पक्ष उपस्थित करने में जितना बोले, नगर-पिताओं को अपनी तरफ मोड़ने में वे उतने ही अधिक सफल होते गये। मेयर श्री गेल और कमिश्नर श्री सेलर्स तो बड़ी दृढ़ता के साथ श्री क्रेनशॉ से सहमत हो गये। आखिरकार मैं यह समझ गया कि हमारी बैठक का कोई निष्कर्ष नहीं निकल रहा है। इसलिए मैंने सुझाया कि अब हम

समाप्त किया जाय। तब मेयर महोदय ने नीग्रो शिष्ट-मण्डल के कुछ सदस्यों से अनुरोध किया कि वे कप्फर नगर-कमरों के अधिकारियों से बातचीत कर लें, ताकि कुछ समझौते पर पहुँचा जा सके।

ज्यों ही दूसरे लोग उठकर गये, हम—नीग्रो शिष्ट-मण्डल के सदस्य—श्री वैगली, श्री मैनर्स तथा दो अन्य सहायक कमिश्नर, श्री मेकर्स तथा श्री पार्क्स के साथ मिलकर टेबुल के चारों ओर बैठ गये। इस छोटी गोष्ठी में, जब कि अखबारों के प्रतिनिधियों ने भी हमें घेर नहीं रखा था, बातचीत में थोड़ी-बहुत प्रगति कर पाना सम्भव प्रतीत हुआ। बसों में बैठने के इन्तजाम के बारे में हमने अपना विचार रखा, उसके कुछ बाद ही कमिश्नर श्री पार्क्स ने शान्त शब्दों में कहा :

"मैं यह समझ नहीं पा रहा हूँ कि बसों में बैठने के बारे में उपस्थित प्रस्ताव को क्यों स्वीकार नहीं किया जाता? हम इसका प्रबन्ध रंगभेद-कानून के ही अन्तर्गत कर सकते हैं।"

मेरे मन में कुछ आशा जाग्रत हुई, लेकिन श्री पार्क्स मुश्किल से अपनी बात समाप्त ही कर पाये थे कि उसके पहले ही श्री मैनर्स बीच में ही बोल उठे :

"लेकिन मैं यह समझ नहीं पा रहा हूँ कि किस तरह हम इस प्रस्ताव को कानून के अन्तर्गत स्वीकार कर सकते हैं? अगर यह प्रस्ताव कानून सम्मत होता, तो इसे स्वीकार करनेवालों में मैं पहला होता। परन्तु यह कानून-सम्मत है ही नहीं। इस प्रस्ताव को स्वीकार करने का एक ही रास्ता है कि आप रंगभेद-कानून में परिवर्तन करें।"

उसके इस कथन ने मेरे आशावाद पर पानी फेर दिया। श्री पार्क्स भी तुरन्त ही चुपचुप हो गये। आखिर में श्री मैनर्स ने भी अपने मन की असली बात कह दी :

"अगर हम नीग्रो लोगों की माँगें स्वीकार कर लेंगे, तो वे गोरे लोगों पर विजय प्राप्त करने के अभियान में डींगें मारेंगे। हम इसे सहन नहीं कर सकते।"

कम-से-कम अब श्री क्रेनशॉ का असली आशय सबके सामने आ गया था। हमने उन्हें समझाने की कोशिश की कि नीग्रो लोगों का ऐसा कोई इरादा नहीं है। हमने यह भी विश्वास दिलाया कि अगर हमारे प्रस्ताव स्वीकार कर लिये जायँ, तो हम अपने लोगों को विजय प्राप्त करने की शेखी बघारने से रोकना अपना पहला कर्तव्य समझेंगे। लेकिन हमारे किसी भी आश्वासन से श्री क्रेनशॉ के विचारों में परिवर्तन नहीं हुआ। इन चर्चाओं को चालू रखना व्यर्थ समझकर मैंने आखिरी तौर पर पूछा कि नीग्रो लोगों के लिए बस-कम्पनी की ओर से क्या प्रस्ताव है, यह वे बतायें। उनका उत्तर था: "निश्चय ही हम ड्राइवरों की तरफ से नम्र व्यवहार का आश्वासन दे सकते हैं, लेकिन हम बैठने के इन्तजाम में कोई परिवर्तन नहीं कर सकते; क्योंकि उससे कानून-भंग होता है और जहाँ तक बस-ड्राइवरों का सम्बन्ध है, हमारा इरादा अभी या भविष्य में भी हब्शी ड्राइवरों को रखने का नहीं है।"

चार घण्टे की यह बातचीत बिना किसी समझौते के ही समाप्त हुई।

जब मैं मीटिंग से उठा तो मुझे काफी उद्विग्नता महसूस हो रही थी। पर मुझे शीघ्र ही ध्यान आया कि यह गहरी निराशा इसीलिए है कि मैं जरूरत से ज्यादा आशा लेकर आया था। मैं इस मीटिंग में एक भ्रम के असर में गया था। मेरा ख्याल था कि हमारी माँगें बहुत सरल हैं और थोड़ी-बहुत चर्चा के बाद वे स्वीकार कर ली जायँगी। मैंने यह विश्वास किया था कि विशेष अधिकारयुक्त लोग हमारी प्रार्थना पर अपने अधिकार छोड़ देंगे। परन्तु इस अनुभव ने मुझे एक सबक सिखाया। मैंने यह सीख लिया कि कोई भी बिना संघर्ष किये अपने विशिष्ट अधिकार नहीं छोड़ता। मैंने यह भी अच्छी तरह से जान लिया कि रंग-भेद का असली उद्देश्य अश्वेत लोगों को केवल अलग रखना ही नहीं है, बल्कि उनका दमन और शोषण करना है। यहाँ तक कि जब हमने रंगभेद-कानून के अन्तर्गत ही न्याय की माँग की, तब भी वे लोग हमें न्याय देना नहीं चाहते थे। मुझे विश्वास हो गया कि न्याय और

समानता तब तक नहीं आ सकती, जब तक रंग-भेद कायम रहेगा; क्योंकि रंग-भेद का उद्देश्य अन्याय और असमानता को कायम रखना ही है।

इस समझौता-वार्ता के थोड़े समय बाद ही मैंने बैठक के परिणामों की रिपोर्ट देने के लिए मॉण्टगोमरी विकास संगम की कार्यकारिणी की बैठक बुलायी। कार्यकारिणी के सदस्य बैठक के परिणाम सुनकर निराश हुए; परन्तु इस बात में सहमत भी हुए कि हमें अपने तीनों प्रस्तावों पर मजबूती के साथ डटे रहना चाहिए। इसी बीच किसीने यह भी खोज निकाला कि मॉण्टगोमरी नगर की बसों पर जिस कम्पनी का स्वामित्व है, उसका प्रधान कार्यालय शिकागो में है। यह 'नेशनल सिटी लाइन्स' नाम की बस-कम्पनी ३५ से भी ज्यादा शहरों में बसें चलाती है। हमने यह तय किया कि इस बस-कम्पनी के अध्यक्ष को सारे कष्ट देनेवाली असुविधाओं का विवरण दिया जाय और उनसे निवेदन किया जाय कि वे आगे समझौता-वार्ता चलाने के लिए या तो तुरन्त ही स्वयं आयें या अपना कोई प्रतिनिधि भेजें। दो दिन के बाद बस-कम्पनी के अध्यक्ष का जवाब मिला कि कम्पनी के एक उपाध्यक्ष दो-तीन दिनों में ही मॉण्टगोमरी पहुँचेंगे।

यह अनुकूल उत्तर पाकर हमारे मन में कुछ आशा पैदा हुई और हमने धीरज के साथ शिकागो से आनेवाले प्रतिनिधि की प्रतीक्षा आरम्भ की। कई दिन बीत गये, पर हमें प्रतिनिधि के आने का कोई समाचार नहीं मिला। मैं इस सोच में पड़ गया कि कहीं बस कम्पनी ने प्रतिनिधि भेजने का विचार वापस तो नहीं ले लिया! इसी अनिश्चित मनोदशा में मैं पड़ा था कि १५ दिसम्बर को सुबह मेरे एक श्वेतांग मित्र ने मुझे टेलीफोन पर बताया कि बस-कम्पनी के प्रतिनिधि श्री सी० के० टोटन शहर में आये हुए हैं, पर उन्हें विरवण सूची में शामिल हुआ है। मैंने इस मित्र से यह भी पूछा : "क्या आपने श्री टोटन से बातचीत की है?" जब उन्होंने निषेधात्मक उत्तर दिया, तो उस मित्र ने कहा : "मैं इस बात का पुख्ता पता लगाकर आपको बताऊँगा।" उन्होंने ऐसा ही किया और दो घण्टे के बाद फिर से मुझे बताया : "श्री टोटन मॉण्टगोमरी में ही हैं

और पिछले दो दिनों से इधर आये हुए हैं।" मुझे यह बड़ा आश्चर्यजनक प्रतीत हुआ कि बस-अधिकारी एक लम्बे समय से शहर में हैं और उन्होंने मॉण्टगोमरी विकास संगम के किसी व्यक्ति से बात करने की कोशिश तक नहीं की। लेकिन फिर भी मैंने प्रतीक्षा चालू रखी। यह प्रतीक्षा व्यर्थ थी। मुझे श्री टोटन से कोई संवाद नहीं मिला।

इसी बीच मेयर महोदय ने सूचना भिजवायी कि वे गोरे नागरिकों की समिति तथा नीग्रो नेताओं को बस-अधिकारियों के साथ बात करने के लिए १७ दिसम्बर की सुबह बुला रहे हैं। हमारी पहली समझौता-वार्तावाली बैठक के बाद एक सप्ताह से अधिक समय बीत गया था और अभी भी हमारे आन्दोलन के ठंडे पड़ने का कोई आसार नजर नहीं आ रहा था।

मॉण्टगोमरी विकास संगम की कार्यकारिणी के सदस्य अपने आन्दोलन पर विचार करने के लिए एक बार फिर से मिले और अपने तीनों प्रस्तावों पर दृढ़ता के साथ डटे रहने के लिए सहमत हुए। हालाँकि तीसरे प्रस्ताव के सम्बन्ध में हमने थोड़ी-सी ढील छोड़ना उचित समझा, क्योंकि बस-ड्राइवरों के स्थान ज्यादा खाली नहीं थे और मजदूर यूनियन के कुछ नियम भी ऐसे थे, जिनके कारण कुछ पुराने लोगों को थोड़ी प्राथमिकता देना उचित था। इसलिए हमने यह तय किया कि नीग्रो ड्राइवरों को तुरन्त नियुक्त किये जाने का आग्रह हम न करें। तथापि हम इस बात का आग्रह करेंगे कि बस-कम्पनी नीग्रो लोगों के आवेदन-पत्र स्वीकार करे और जल्दी-से-जल्दी जब भी स्थान खाली हो, तभी नीग्रो ड्राइवरों की नियुक्ति की जाय।

शनिवार, १७ दिसम्बर की सुबह जब हम समझौता-वार्ता के लिए पहुँचे तो बहुत थोड़े लोग ही सभागृह में उपस्थित थे। पर जो भी वहाँ थे, वे असाधारण रूप से नम्र प्रतीत हुए। उनमें से जो सबसे पहले हमारा अभिवादन करने के लिए आगे आये, वे थे रेवरेंड हेनरी ई० रसेल। श्री रसेल मॉण्टगोमरी में ही ट्रिनिटी प्रेस्बिटेरियन चर्च के

पादरी हैं और कोलंबिया के मिनिस्टर ( गस्ट-मशा-सदस्य ) श्री रिचर्ड रील के भाई हैं। उनकी मुस्कान में भरी हुई हार्दिकता और उनके अभिवादन की गर्मजोशी मुझे अभी भी याद है। इसी तरह दूसरे लोगों ने भी मित्रतापूर्ण अभिवादन किया। हमने यह आशा की कि इस दूसरी बैठक में कुछ बेहतर परिणाम सामने आयेंगे।

बैठक प्रारम्भ होने के कुछ ही पहले मैंने देखा कि श्री बैरो और श्री मैनदों के साथ किसी अपरिचित-से व्यक्ति ने प्रवेश किया। बाद में उनका परिचय कराते हुए बताया गया कि ये शिकागो के श्री सी० के० स्टील हैं। उन्होंने हममें से प्रत्येक का अभिवादन बड़ी हार्दिकता के साथ किया; परन्तु उन्होंने इस बारे में कुछ भी नहीं बताया कि अब तक वे हम लोगों के साथ सम्पर्क क्यों नहीं कर सके। मैंने ऐसे नीग्रो नागरिकों को भी देखा, जो नीग्रो-समाज का प्रतिनिधित्व करने के लिए नियुक्त नहीं किये गये थे। मैंने शीघ्र ही इस बात का पता लगा लिया कि ये मेयर की ओर से विशिष्ट तौर पर आमन्त्रित किये गये हैं। इस बात ने मेरे मन में आशंका-सी पैदा कर दी।

आखिर में मेयर महोदय और उनके दो सहायक कमिश्नर भी आ गये। इस समय तक बैठक में भाग लेनेवाले सभी व्यक्ति उपस्थित हो चुके थे। तीन कमिश्नर, बस-कम्पनी के चार प्रतिनिधि, नीग्रो समुदाय का प्रतिनिधित्व करनेवाला शिष्ट-मण्डल, मेयर द्वारा खास तौर से आमन्त्रित दो नीग्रो नागरिक और मेयर द्वारा नियुक्त गोरे नागरिकों की कमेटी के सदस्य इस बैठक में भाग ले रहे थे। मेयर ने गोरे नागरिकों की जो कमेटी बनायी थी, उसमें फर्स्ट बैप्टिस्ट चर्च के लोकप्रिय पादरी रेवरेण्ड हेनरी पार्कर और सेण्ट जेम्स मेथोडिस्ट चर्च के लोकप्रिय पादरी रेवरेण्ड जी० स्टेनली फ्रेजियर भी थे और श्री हेनरी [illegible] उपस्थित थे ही।

परिस्थिति का संक्षेप में वर्णन करने के बाद मेयर महोदय ने नीग्रो-प्रवक्ताओं को विचार व्यक्त करने के लिए कहा। अब मैंने कठिनाई और

से सारी बातें स्पष्ट रूप से रख दीं, तब मेयर ने बस कम्पनी के प्रतिनिधि से अपना पक्ष उपस्थित करने का निवेदन किया और तब श्री सी० के० टोटन बोलने के लिए खड़े हुए। ज्यों ही श्री टोटन हमारे सामने खड़े हुए, मैं बड़ी उत्सुकता के साथ उनकी बात सुनने के लिए मुखातिब हुआ, क्योंकि वे बाहर के व्यक्ति थे और इसलिए इस बात की मुझे आशा थी कि वे इस समस्या को अपने स्थानीय सहायकों की अपेक्षा कुछ भिन्न तरह से देखेंगे। धीरे-धीरे और विचारपूर्ण तरीके से उन्होंने हमारे प्रत्येक प्रस्ताव पर अपने विचार रखे। हमारे एक-एक प्रस्ताव की चर्चा करते हुए आखिर में वे भी उसी नतीजे पर पहुँचे, जिस पर कि हमारी पहली बैठक में नगर के कमिश्नर और श्री ग्रेनशॉ पहुँच चुके थे। अगर श्री टोटन किसी चमत्कार से अपनी भाषा में दक्षिण के लोगों की तरह का स्वर ला पाते और अगर परदे के पीछे से बोल रहे होते तो मैं यही समझता कि वे श्री जैक ग्रेनशॉ ही हैं। तब मैं यह समझ गया कि नगर के अधिकारियों तथा बस-कंपनी के अधिकारियों ने उनको अच्छी तरह से पटा लिया है।

ज्यों-ज्यों श्री टोटन बोलते गये, त्यों-त्यों मेरे मन में उनके प्रति अश्रद्धा पैदा होती गयी। मैंने अपने मन में कटुता के साथ यह सोचा कि हमने उनको मॉण्टगोमरी में बुलाया है, इस तथ्य के बावजूद उन्होंने इस बैठक के पहले हमसे मिलने और हमारी बात सुनने तक का कष्ट गवारा नहीं किया। यह एक कठिन क्षण था। क्या मैं उनके एकतरफा और पक्षपातपूर्ण विचारों को चुनौती दूँ ? या मैं उन्हें यों ही बोलते रहने दूँ ! यह सवाल मेरे दिमाग में बार-बार घूमता रहा। जब उन्होंने अपना वक्तव्य समाप्त किया तो एक क्षण के लिए शान्ति-सी दिखाई पड़ी। तब मैं अपने-आपको रोक नहीं सका और झपटकर सामने खड़ा हो गया। मैंने अपने असन्तोष को शब्दों का रूप देते हुए कहा : "श्री टोटन अपने विश्लेषण में न्याय का साथ नहीं दे रहे हैं। उन्होंने जो वक्तव्य दिया है, वह पूरी तरह पक्षपातपूर्ण है। इस तथ्य के बावजूद कि मॉण्टगोमरी

का यह पवित्र उत्तरदायित्व है कि वे अपने लोगों को क्रिसमस के महिमामय अनुभव तथा आनन्द की ओर ले जायँ।

फिर से मुझे जवाब देने की जरूरत महसूस हुई। मैंने कहा : "अभी-अभी पादरी महोदय ने जिन प्रभु ईसामसीह के बारे में कहा, उन्हें हम भी जानते हैं। हमें उस प्रभु के आत्मिक सान्निध्य का अनुभव है। प्रभु ईसामसीह के द्वारा ईश्वर ने जो आदेश दिये हैं, उनमें हम मजबूती के साथ आस्था रखते हैं। हमारे वर्तमान आन्दोलन में और हमारी प्रभु ईसामसीह में निहित श्रद्धा में कोई अन्तर्विरोध नहीं है। वास्तविकता तो यह है कि ये दोनों एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं। अगर कोई सचमुच में प्रभु ईसामसीह के धर्म में निष्ठा रखता है, तो वह अवश्य ही इस धरती को सामाजिक बुराइयों से मुक्त करने की चेष्टा करेगा। धार्मिक उपदेश का जितना सम्बन्ध व्यक्ति से है, उतना ही सम्बन्ध पूरे समाज से भी है। हम तो यहाँ केवल थोड़ा-सा प्रयत्न कर रहे हैं। भारत में गांधी ने तो इस दिशा में बहुत बड़ा कदम उठाया है। निश्चय ही किसीने भी गांधी को पापी कहकर नहीं पुकारा; बल्कि उन्हें तो एक सन्त की ही प्रतिष्ठा दी गयी है।"

अन्त में मैंने कहा : "आज हम लोगों ने अपनी परम्पराओं के बारे में बहुत ज्यादा बहस की है। यह बार-बार जोर देकर कहा गया है कि अगर हम वर्तमान परिस्थितियों में कोई परिवर्तन करेंगे तो वह हमारे समाज की 'प्रिय परम्पराओं' के विरुद्ध होगा। किन्तु मैं यह कहना चाहता हूँ कि अगर हमारी परम्पराएँ अनुचित हैं तो हमें उन्हें बदलने का पूरा अधिकार है। आज हमें यह निर्णय लेना ही होगा कि हम अन्यायपूर्ण तथा असामाजिक परम्पराओं के साथ अपना सम्बन्ध बनाये रखेंगे अथवा इस सृष्टि की नैतिकतापूर्ण माँगों को स्वीकार करेंगे। क्रिश्चियन होने के नाते हम अपना अन्तिम सम्बन्ध मनुष्य और उसके लौकिक रिवाजों के साथ नहीं, बल्कि ईश्वर और ईश्वरीय प्रेरणा के साथ ही मानते हैं।"

कुछ श्वेतांग प्रतिनिधियों ने यह भी सुझाया कि फिलहाल बस-बहिष्कार को स्थगित कर दिया जाय और क्रिसमस की छुट्टियों के बाद इस प्रश्न को फिर से उठाकर समझौते की कोई सूरत निकाली जाय। उन्होंने विश्वास दिलाया कि अगर नीग्रो-समुदाय अपना आंदोलन स्थगित कर देता है तो गोरे समुदाय के लोग हमारे निवेदन को अधिक सहानुभूति के साथ सुनने के लिए तैयार होंगे। हमने इस सुझाव को भी स्वीकार नहीं किया। हमने ऐसा महसूस किया कि बाद में परिस्थिति को सुधारने के आश्वासन को लेकर अगर हम अपना आन्दोलन बन्द कर देंगे, तो हमारे सारे प्रयत्न व्यर्थ ही जानेवाले हैं। इन सारी चर्चाओं में काफी समय बीत गया था और सभी को बहुत देर हो रही थी, इसलिए अध्यक्ष ने बैठक सोमवार की सुबह १० बजे तक के लिए स्थगित कर दी।

बैठक समाप्त होने के बाद श्री टोटन के साथ रूबरू बातचीत करने का मुझे पहला अवसर मिला। बड़ी झेंप के साथ उन्होंने यह स्वीकार किया कि बसों में बैठने के प्रबन्ध के बारे में नीग्रो-शिष्टमंडल का जो सुझाव है, उसी तरह का प्रबन्ध नेशनल सिटी लाइन्स द्वारा ही चलायी जानेवाली मोबाइल सिटी लाइन नाम की बस-कम्पनी में भी है। श्री टोटन ने यह भी कहा : "जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैं यह मानता हूँ कि मॉण्टगोमरी में भी वैसी व्यवस्था अच्छी तरह चल सकती है। परन्तु सिटी कमीशन के लोग ऐसा महसूस करते हैं कि उस तरह की व्यवस्था उन्हें स्वीकार्य नहीं हो सकेगी।" एक बार तो मेरी यह पूछने की इच्छा हुई कि अगर ऐसी ही बात है तो उन्होंने खुली बैठक में, जहाँ कि सभी कमिश्नर उपस्थित थे, यह स्पष्ट कहने की हिम्मत क्यों नहीं की। परन्तु बाद में मैंने ऐसा सवाल पूछने से अपने-आपको रोक लिया तथा हमारी बातचीत मित्रतापूर्ण वातावरण में ही समाप्त हुई।

जब मैं घर की ओर अपनी कार दौड़ा रहा था, तब मेरा दिमाग श्री क्रेंशियर के भाषण की ओर गया। मुझे अचरज हो रहा था कि

जब तक कि हमारी समिति में ऐसे लोग रहेंगे, जिनके विचार खुले तौर पर नीग्रो-विरोधी हैं।"

तब डॉ० पार्कर ने क्रोधित होकर जवाब दिया : "श्री इंगल्स को इस बैठक में शामिल होने का उतना ही हक है, जितना कि आपको। उनकी तरह आपका भी तो अपना एक निश्चित मत है और आप उस पर दृढ़ हैं।"

उसके बाद दूसरे श्वेतांग सदस्यों ने भी मेरे खिलाफ कटूक्तियाँ आरम्भ कर दीं। उन्होंने यह जाहिर किया कि समस्या के वास्तविक समाधान तक पहुँचने में मैं ही रोड़े अटका रहा हूँ। श्रीमती हिप नाम की एक श्वेतांग महिला ने मुझ पर आरोप लगाते हुए कहा कि मैंने उसका तथा अन्य श्वेतांग सदस्यों का यह कहकर अपमान किया है कि वे लोग अपने दिमाग की खिड़कियाँ बन्द किये हुए हैं। मैंने यह स्पष्ट करने की कोशिश की कि मेरा कथन केवल उन लोगों पर लागू होता है, जो खुले तौर पर नीग्रो-विरोधी घोषणाएँ करते रहे हैं, न कि यहाँ उपस्थित सब लोगों पर। परन्तु मेरे इस स्पष्टीकरण का कोई लाभ नहीं हुआ। वे यही मानते रहे कि मैं ही सारी गड़बड़ी का कारण हूँ।

क्षणभर के लिए ऐसा लगा कि मैं अकेला पड़ गया हूँ। कोई भी मेरे पक्ष में नहीं बोल रहा था। इतने ही में श्री राल्फ एबरनाथी खड़े हुए और मेरे समर्थन में बोलने लगे। उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि मैंने जो कुछ कहा है, वह पूरे नीग्रो-शिष्टमंडल की ओर से कहा है। श्री राल्फ ने इस बात की ओर सबका ध्यान आकृष्ट किया कि पूरे शिष्टमंडल का प्रवक्ता होने के नाते स्वाभाविक रूप से ही मुझे शिष्टमंडल की ओर से ज्यादा बोलना पड़ता है। किन्तु इसका मतलब यह नहीं है कि मुझे नीग्रो-शिष्टमंडल का समर्थन प्राप्त नहीं है। जब श्री राल्फ बोल रहे थे, तब कोई भी श्वेतांग सदस्यों के चेहरों पर एक तरह का असन्तोष देख सकता था। नीग्रो लोगों को यह समझाने की कोशिश करके कि किसी भी समाधान तक पहुँचने में मैं ही मुख्य बाधा हूँ, श्वेतांग प्रति-

किस तरह उन्हें अपनी बातों में दृढ़ विश्वास था। वे शायद अब अपने विचार कभी भी नहीं बदल सकेंगे। लम्बे काल से चले आनेवाले रीति-रिवाजों ने उनकी आत्मा को पूरी तरह से ढँक दिया है। समाज में जो रंगभेद 'है', वह उनके लिए 'होना ही चाहिए' के रूप में एक नैतिक कानून बन गया है। यद्यपि मैं उनके विचारों से शत प्रतिशत असहमत था, और जानता था कि ऐतिहासिक एवं धार्मिक दृष्टि से उनके विचार गलत हैं; तथापि मुझे उनके हृदय की सचाई तथा निष्ठा पसन्द आयी। मैंने अपने-आपसे पूछा कि जो गोरे लोग रंग-समन्वय में विश्वास करते हैं, वे प्रायः विधायक और सजग निदर्शन में रंगभेद में विश्वास करनेवालों की अपेक्षा उदासीन और शिथिल क्यों होते हैं ? यह भी मानव-इतिहास का एक दुःखद अध्याय है कि 'अन्धकार के पुत्र' 'प्रकाश के पुत्रों' की अपेक्षा ज्यादा दृढ़प्रतिज्ञ तथा निष्ठावान् दीख पड़ते हैं।

रविवार १८ दिसम्बर का दिन भी बीत गया। सोमवार को सुबह दस बजे हम लोग फिर से एकत्रित हुए। बैठक में भाग लेनेवाले सभी लोग उपस्थित थे और श्री पार्कर बैठक की अध्यक्षता कर रहे थे। बैठक की कार्यवाही प्रारम्भ ही हुई थी कि मैंने एक ऐसे व्यक्ति को देखा, जो हमारी शनिवार की बैठक में उपस्थित नहीं था और जो मेयर की ओर से नियुक्त आठ श्वेतांग नागरिकों में भी नहीं था। मेरे पास ही बैठे हुए किसी व्यक्ति ने मेरे कानों में फुसफुसाकर कहा कि यह, मॉण्ट-गोमरी श्वेतांग नागरिक परिषद् के मन्त्री, श्री लूथर इंगल्स हैं।

ज्यों ही हमारी चर्चाएँ प्रारम्भ हुईं, श्री इंगल्स अपना वक्तव्य देने के लिए खड़े हुए। मैं तुरन्त ही उचककर आगे आया और मैंने श्री इंगल्स के बोलने के अधिकार को चुनौती दी, क्योंकि वे मेयर द्वारा नियुक्त समझौता-वार्ता समिति के सदस्य नहीं थे। मैंने कहा : "सबसे बड़ी बात तो यह है कि हम लोग अपने प्रश्नों को तब तक नहीं सुलझा सकेंगे,

जब तक कि हमारी समिति में ऐसे लोग रहेंगे, जिनके विचार खुले तौर पर नीग्रो-विरोधी हैं।"

तब डॉ० पार्कर ने क्रोधित होकर जवाब दिया : "श्री इंगल्स को इस बैठक में शामिल होने का उतना ही हक है, जितना कि आपको। उनकी तरह आपका भी तो अपना एक निश्चित मत है और आप उस पर दृढ़ हैं।"

उसके बाद दूसरे श्वेतांग सदस्यों ने भी मेरे खिलाफ कटूक्तियाँ आरम्भ कर दीं। उन्होंने यह जाहिर किया कि समस्या के वास्तविक समाधान तक पहुँचने में मैं ही रोड़े अटका रहा हूँ। श्रीमती हिप नाम की एक श्वेतांग महिला ने मुझ पर आरोप लगाते हुए कहा कि मैंने उसका तथा अन्य श्वेतांग सदस्यों का यह कहकर अपमान किया है कि वे लोग अपने दिमाग की खिड़कियाँ बन्द किये हुए हैं। मैंने यह स्पष्ट करने की कोशिश की कि मेरा कथन केवल उन लोगों पर लागू होता है, जो खुले तौर पर नीग्रो-विरोधी घोषणाएँ करते रहे हैं, न कि यहाँ उपस्थित सब लोगों पर। परन्तु मेरे इस स्पष्टीकरण का कोई लाभ नहीं हुआ। वे यही मानते रहे कि मैं ही सारी गड़बड़ी का कारण हूँ।

क्षणभर के लिए ऐसा लगा कि मैं अकेला पड़ गया हूँ। कोई भी मेरे पक्ष में नहीं बोल रहा था। इतने ही में श्री राल्फ एबरनाथी खड़े हुए और मेरे समर्थन में बोलने लगे। उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि मैंने जो कुछ कहा है, वह पूरे नीग्रो-शिष्टमंडल की ओर से कहा है। श्री राल्फ ने इस बात की ओर सबका ध्यान आकृष्ट किया कि पूरे शिष्टमंडल का प्रवक्ता होने के नाते स्वाभाविक रूप से ही मुझे शिष्टमंडल की ओर से ज्यादा बोलना पड़ता है। किन्तु इसका मतलब यह नहीं है कि मुझे नीग्रो-शिष्टमंडल का समर्थन प्राप्त नहीं है। जब श्री राल्फ बोल रहे थे, तब कोई भी श्वेतांग सदस्यों के चेहरों पर एक तरह का असन्तोष देख सकता था। नीग्रो लोगों को यह समझाने की कोशिश करके कि किसी भी समाधान तक पहुँचने में मैं ही मुख्य बाधा हूँ, श्वेतांग प्रति-

निधि हमारे बीच फूट डालने की कोशिश कर रहे थे। परन्तु श्री राल्फ के वक्तव्य ने सब सन्देहों को मिटा दिया। इसी क्षण से श्वेतांग प्रतिनिधियों ने हमको झुकाने के लिए की जानेवाली चेष्टा की व्यर्थता को समझ लिया। उसके बाद थोड़े-से और सवाल हुए, थोड़े-से और सुझाव आये तथा उसके बाद श्री पार्कर ने बैठक को बरखास्त करते हुए आश्वासन दिया कि वे फिर किसी दिन बैठक बुलायेंगे। परन्तु उनका आश्वासन कभी पूरा नहीं हुआ। फिर से कभी बैठक नहीं बुलायी गयी।

उस सोमवार को मैं बड़ा भारी दिल लेकर घर लौटा। मैं अपने-आपको दोषी महसूस कर रहा था। क्योंकि मैंने दो-तीन बार क्रोध और अभद्रतापूर्ण व्यवहार किया था। मैंने जल्दबाजी में कठोरतापूर्वक और प्रतिकार की भावना से भरे हुए वक्तव्य दिये थे। अपने बोलने के तरीके पर मुझे अफसोस था। मैं अब भी यही सोचता था कि इस तरह से हमारी समस्याएँ हल होनेवाली नहीं थीं। मैंने फिर अपने-आपसे कहा : "तुम अपने-आपको क्रोधित और उत्तेजित मत करो। तुम्हें प्रतिपक्षियों का क्रोध सहन करने को तैयार होना चाहिए और प्रतिपक्षियों द्वारा क्रोध करने पर भी तुम्हें कटु नहीं बनना चाहिए। तुम्हारे प्रतिपक्षी भले ही उत्तेजित हो उठें, पर तुम्हें तो शांत ही रहना चाहिए।"

ऐसे मूड में ही मैंने श्री पार्कर को टेलीफोन किया। मेरी इस तरह की आवाज सुनकर वे साफ ही चकित हुए। मैंने उनसे कहा कि बैठक में हमारे बीच जो गलतफहमी पैदा हुई, उसके लिए मुझे अफसोस है। अगर मैं किसी भी तरह से इस गलतफहमी के लिए जिम्मेदार हूँ तो उसके लिए क्षमा चाहता हूँ। उन्होंने उत्तर में यह समझाने की चेष्टा की कि उन्होंने बैठक में जिस तरह का पक्ष उपस्थित किया था, वह ज्यादा न्यायोचित था। और फिर उन्होंने रंगभेद के प्रश्न पर आम तौर से तथा बसों की परिस्थिति पर खास तौर से चर्चा की। वे बड़े निश्चयपूर्वक बोले कि नीग्रो-समुदाय द्वारा बसों का बहिष्कार पुनिश्चयात्मक रूप से न्यायोचित नहीं कहा जा सकता। उन्होंने कहा कि जिस तरह नीग्रो लोगों के

साथ अभद्र व्यवहार होता है, उसी तरह से उन्हीं बसों में गोरे लोगों के साथ भी अभद्र व्यवहार होता है। उनके मत में नीग्रो लोग अपने अधिकारों की माँगें उपस्थित करने में जरूरत से ज्यादा तेजी और जल्दबाजी बरत रहे थे। इसलिए इस जल्दबाजी का परिणाम अनेक दिक्कतें पैदा होने के अलावा कुछ नहीं निकलेगा। मैंने श्री पार्कर को इस बात के लिए धन्यवाद दिया कि उन्होंने मेरे साथ बातचीत की और हमारी टेलीफोन-वार्ता समाप्त हुई।

समझौता-वार्ता फिर से चलाने के लिए एक और प्रयत्न किया गया। इस प्रयत्न के लिए श्वेतांग नागरिकों के एक दूसरे समूह को धन्यवाद देना चाहिए। ये लोग 'मॉण्टगोमरी नागरिक समाज' नाम की संस्था के सदस्य थे और शहर के बहुत ही प्रभावशाली व्यापारी थे। उन्होंने यह महसूस किया कि बस-बहिष्कार के कारण उनके व्यापार पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है और अगर यह संघर्ष लम्बे समय तक चलता रहा तो उनके व्यापार के लिए बहुत ही नुकसानदायक होगा। इससे बड़ी बात यह थी कि इस संस्था के नेतागण सद्भावनापूर्ण व्यक्ति थे और अपने चारों ओर फैले हुए तनावपूर्ण वातावरण से उन्हें नफरत थी। इसका आशय यह नहीं है कि वे रंग-समन्वय में विश्वास करते थे। वे रंग-समन्वयवादी नहीं थे। उनमें से कुछ तो रंगभेद में बहुत ही मजबूती के साथ विश्वास करते थे और जो लोग रंगभेद को कट्टरता की तरह नहीं मानते थे, वे भी शायद श्री पार्कर की तरह यह मानते थे कि नीग्रो लोग अपने अधिकारों की माँगें पेश करने में जरूरत से ज्यादा जल्दबाजी कर रहे हैं। परन्तु ये लोग दूसरों के विचारों के लिए भी अपने दिमाग को खुला रखे हुए थे। साथ ही ये लोग रंग-समन्वय के प्रश्न पर खुलकर चर्चा करने के लिए भी तैयार थे। 'मॉण्टगोमरी नागरिक समाज' तथा 'मॉण्टगोमरी विकास संगम' के छह-छह प्रतिनिधि दो बार मिले और उन्होंने बड़ी सजगता के साथ बस-बहिष्कार की समस्या को सुलझाने की कोशिश की। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि ये कोई-

न-कोई समाधान निकाल ही लेते, अगर हमारे बीच सिटी कमीशन के लोग न कूद पड़े होते। उनके व्यवधान ने हमारे सम्मिलित प्रयत्न को निष्फल कर दिया।

जब हमारे प्रतिपक्षी समुदाय के लोग हमें फुसलाकर किसी समझौते पर पहुँचने में असफल रहे तो उन्होंने हमारे आन्दोलन को समाप्त करने के धूर्ततापूर्ण हथकण्डे अपनाने शुरू किये। उन्होंने हमारे बीच भेद डाल-कर हम पर विजय पाने की कोशिश की। उन्होंने आन्दोलन के नेताओं के सम्बन्ध में गलत-सलत बातों का प्रचार करना शुरू किया। बहुत-से श्वेतांग मालिकों ने अपने नीग्रो कर्मचारियों से कहा कि उनके नेतागण इस आन्दोलन के द्वारा केवल पैसा बनाना चाहते हैं। कुछ लोगों ने यह भी कहा कि आन्दोलन के नेतागण तो बड़ी और आरामदेह कारों में चलते हैं, जब कि साधारण नीग्रो नागरिकों को पैदल चलना पड़ता है। अफवाहों के इस दौरान में यह बात भी फैला दी गयी कि मैंने अपने लिए एक बिलकुल नयी कैडिलक कार तथा अपनी पत्नी के लिए एक ब्यूक स्टेशन वैगन कार खरीदी है। ये सारी अफवाहें एकदम झूठी थीं।

न केवल जनता में ही नीग्रो नेताओं की ईमानदारी पर सन्देह फैलाने की कोशिश की गयी, बल्कि स्वयं नेताओं में भी आपस में फूट डालने की जोरदार चेष्टा की गयी। बहुत-से प्रमुख श्वेतांग नागरिक वृद्ध नीग्रो पादरियों के पास गये और बोले: "अगर इस तरह का कोई आन्दोलन चलाना ही हो तो उसका नेतृत्व आप लोगों के हाथों में होना चाहिए। आप लोगों के लिए यह बड़ी शर्म की बात है कि इन नीग्रो लोगों ने आप लोगों की उपेक्षा करके इन कल के छोकरों को अपना नेता चुना है, जब कि आप बहुत पहले से इस समाज की सेवा कर रहे हैं।" कुछ श्वेतांग नागरिकों ने हमारे आन्दोलन के अनेक नेताओं को यह भी समझाने की कोशिश की कि अगर इस आन्दोलन का नेतृत्व मेरे हाथों में न रहता तो समस्या का समाधान आसानी से हो सकता था। उन्होंने

कहा : "अगर आप लोगों में से कोई नेतृत्व का जुआ अपने कन्धों पर ले ले तो रातोंरात परिस्थिति बदल सकती है।"

इस तर्क की निरन्तर मार ने मुझे लगभग तोड़ डाला और मैं सोचने लगा कि शायद इस तर्क में कहीं सत्य हो। मुझे यह भी भय हुआ कि शायद कुछ लोग इस तर्क से प्रभावित भी हो रहे हैं। दो-तीन कष्टपूर्ण दिनों और निद्राहीन रातों के बाद मैंने हमारे आन्दोलन की कार्यकारिणी समिति की बैठक बुलायी तथा उसमें अपना त्यागपत्र उपस्थित कर दिया। मैंने कहा कि हमारे समाज के ऊपर मँडरायी हुई इस समस्या के हल तक पहुँचने में बाधा देनेवाला मैं आखिरी व्यक्ति हूँगा; और सम्भव है कि मुझसे योग्य कोई व्यक्ति आन्दोलन का नेतृत्व सँभालकर इसे शीघ्रता-पूर्वक किसी समाधान तक पहुँचा सके। मैंने ऐसे दो व्यक्तियों के नाम भी सुझाये, जो मेरे नजदीक रहकर काम कर चुके थे और जिनकी योग्यता पर कोई अँगुली नहीं उठा सकता था। इसके साथ ही मैंने कार्यकारिणी समिति को यह भी विश्वास दिलाया कि मैं आज इस आन्दोलन का प्रवक्ता होकर जितना सक्रिय हूँ, उतना ही सक्रिय प्रवक्ता के पद पर रहे बिना भी रहूँगा। लेकिन मैं अपनी बात समाप्त भी नहीं कर पाया था कि कार्यकारिणी के सदस्यों ने चारों ओर से मुझसे यह आग्रह करना प्रारम्भ कर दिया कि मैं त्यागपत्र का विचार भी छोड़ दूँ। सर्वसम्मति से मेरे प्रति जब विश्वास का प्रस्ताव पास किया गया, तो यह स्पष्ट हो गया कि सभी सदस्यगण मेरे काम करने के तरीकों से सन्तुष्ट थे और वे मेरे नेतृत्व को अन्त तक स्वीकार करेंगे। इस बैठक के बाद अपनी कार में अपने घर की ओर जाते समय मैं जैसी शान्ति महसूस कर रहा था, वैसी शान्ति मैंने कई दिनों से महसूस नहीं की थी। हमारे बैठक घर की खिड़की में से कोरेटा का मुक्तकण्ठ से गाया हुआ गीत सुनाई दे रहा था। पिछले शयन-कक्ष में मेरी नन्हीं-सी चिड़िया 'योकी' जागी हुई थी और अपनी अँगुलियों से खेल रही थी। मैंने उसे उठा लिया और कोरेटा के गीत की ताल पर उसे उछालते हुए

सामने के कमरे में आया। साथ बिताने को ऐसे मधुर क्षण मुझे कदाचित् ही प्राप्त होते थे। हम ऐसे क्षणों को प्राप्त करने के लिए कोई पूर्वयोजना नहीं बना सकते थे। क्योंकि यह जान पाना मेरे लिए बहुत कठिन था कि मैं कब घर पहुँचूँगा। कई बार कोरेटा अच्छा खाना बनाकर तैयार रखती थी और वह खाना पड़ा-पड़ा ही ठण्डा हो जाता था, क्योंकि मैं किसी अत्यन्त आवश्यक काम में बाहर उलझा रहता था। फिर भी उसने कभी शिकायत नहीं की और वह हर समय मेरी मदद को तैयार रहती थी। वह मुझसे कहती कि 'योकी' और 'बीथोवन' उसके अकेलेपन के अच्छे साथी थे। शान्त और भद्र स्वभाववाली कोरेटा घर के प्रत्येक काम को बहुत अच्छी तरह चलाकर मुझे निश्चिन्त रखती थी। इसके अलावा मुझे अगर कोई बात कहनी होती तो वह हमेशा सुनने के लिए तैयार रहती थी। अगर मुझे किसी सलाह की जरूरत होती तो वह भी मुझे कोरेटा से प्राप्त होती थी। परेशानी के बीच वह जिस तरह से मुझे धीरज बँधाती थी, उससे मुझे बहुत ताकत मिलती थी। मुझ पर किसी तरह की आपत्ति न आ जाय, इस भय को भी वह मेरे सामने प्रकट नहीं करती थी। क्योंकि हमारे आन्दोलन को बाधा पहुँचे, ऐसी कोई भी चिन्ता वह मेरे मन में पैदा करना नहीं चाहती थी। उसे अपने लिए तो कोई भय था ही नहीं। मैंने उसे तथा 'योकी' को कई बार अटलांटा भेजा, ताकि वह मेरे घर पर माता पिता के साथ निश्चिन्तता से रह सके। कई बार उसे मारियों भी भेजा, ताकि वह अपने माता-पिता के साथ रह सके; परन्तु वह कभी भी ज्यादा दिनों तक मॉण्टगोमरी से बाहर नहीं रही। उसने एक पत्र-प्रतिनिधि को बताया : "जब मैं मॉण्टगोमरी के आन्दोलन से दूर रहती हूँ, तो अपने मन में बहुत निराशा और अलगावपन महसूस करती हूँ।" इसीलिए वह हमेशा अपने निश्चित कार्यक्रम से पहले ही मॉण्टगोमरी वापस आ जाती थी।

शनिवार २२ जनवरी को तो भेद खुलकर विजय प्राप्त करने की चेष्टा अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गयी, जब नगर के कमिश्नरों ने दैनिक

समाचार-पत्रों में यह समाचार छपवाया कि उन्होंने प्रमुख नीग्रो पादरियों के एक शिष्टमण्डल से मिलकर इस समस्या के सम्बन्ध में एक समझौता कर लिया है। न केवल हम लोग, बल्कि पूरा नीग्रो-समुदाय अवाक् रह गया। तथाकथित समझौते की जो बातें प्रकाशित की गयी थीं, उनमें यह लिखा गया था कि (१) बस-ड्राइवरों द्वारा नम्र व्यवहार का आश्वासन। (२) बस में आगे की कुछ सीटें गोरे यात्रियों के लिए तथा पीछे की कुछ सीटें नीग्रो यात्रियों के लिए सुरक्षित रहेंगी और बस के बीच की कुछ सीटें किसीके भी लिए सुरक्षित नहीं रहेंगी। उन सीटों पर जो यात्री पहले चढ़ेंगे, वे ही पहले बैठ सकेंगे। (३) नीग्रो यात्रियों की विशेष सुविधा के लिए सुबह और शाम की भीड़ के समय ऐसी विशेष बसें चलायी जायँगी, जो पूरी की पूरी नीग्रो यात्रियों के लिए ही सुरक्षित रहेंगी। इन तीनों आश्वासनों में पहले को छोड़कर बाकी दो में कोई नवीनता नहीं थी। यह समझौता एक तरह से प्रगति की अपेक्षा पीछे की ओर कदम रखने जैसा था। फिर भी बहुत से लोग यही समझे कि बस-बहिष्कार-आन्दोलन समाप्त कर दिया गया है।

जल्दी ही यह स्पष्ट हो गया कि यह घोषणा नीग्रो यात्रियों को वापस बसों की ओर खींचने के लिए ही की गयी थी। सिटी कमीशन के लोगों ने ऐसा निश्चित मान लिया था कि एक बार अगर बड़ी संख्या में नीग्रो लोग बसों में यात्रा करना शुरू कर देंगे तो बस-बहिष्कार अपने-आप समाप्त हो जायगा।

कुछ दिलचस्प परिस्थितियों के कारण हम इस घोषणा के दुष्परिणामों पर काबू पाने में सफल हो गये। हालाँकि 'मॉण्टगोमरी एडवरटाइज़र' ने रविवार की सुबह तक इस समाचार को रोककर रखना तय किया था, परन्तु 'एसोसियेटेड प्रेस' (समाचार एजेंसी) ने इस समाचार को शनिवार की शाम को ही प्रसारित कर दिया। 'मिनिआपोलिस ट्रिब्यून' के सम्पादकीय लिखनेवाले एक नीग्रो सज्जन श्री कार्ल टी० रोवान—Carl T. Rowan—ने जब इस समाचार को पकड़ा तो वे इस बात

पर अचरज करने लगे कि नीग्रो लोगों ने किस तरह इस 'आधी रोटी' पर ही सन्तोष कर लिया! श्री रोवान बस-बहिष्कार के समाचारों के लिए कुछ सप्ताह पहले ही मॉन्टगोमरी आ चुके थे और मॉन्टगोमरी विकास संगम के नेताओं के साथ उन्होंने निकट सम्बन्ध स्थापित कर लिया था। शनिवार की शाम को करीब आठ बजे उन्होंने मुझे 'ट्रंक-कॉल' करके इस समाचार की सचाई के बारे में पूछा। जब उन्होंने समझौते का समाचार मुझे दिया तो मैं चकित रह गया और जब उन्होंने बताया कि इस समझौता-बैठक में तीन प्रमुख नीग्रो पादरी उपस्थित थे, तब तो मैं और अधिक झुँझला उठा। मैंने उनसे कहा कि इस समझौते के सम्बन्ध में मुझे कुछ भी मालूम नहीं और मुझे मन ही मन यह भी आशंका होने लगी कि कहीं मेरे साथियों ने मेरे साथ धोखा करके मेरी अनुपस्थिति में तो कोई समझौता नहीं कर लिया! फिर भी मैंने श्री रोवान को कहा: "यह सच नहीं हो सकता, क्योंकि आज सुबह ही हमारे आन्दोलन की नीति-निर्धारक समिति की बैठक में मैं उपस्थित था और वहाँ पर सभी 'प्रमुख नीग्रो पादरी' भी मौजूद थे।"

श्री रोवान ने कमिश्नर श्री सेलर्स से 'ट्रंक' पर बात करके विस्तृत समाचार जान लेने की बात कहकर टेलीफोन रख दिया। करीब बीस मिनट के बाद ही उन्होंने फिर से मुझे 'ट्रंक' किया और बताया कि श्री सेलर्स ने इस समाचार को सत्य बताया है, परन्तु यह समझौता जिन नीग्रो पादरियों के साथ हुआ है, उनके नाम बताने से इनकार कर दिया है। परन्तु श्री रोवान ने किसी तरह यह जानकारी भी सेलर्स से प्राप्त कर ली कि समझौता करनेवाले नीग्रो पादरी किस सम्प्रदाय के थे। इसी सूत्र से मेरा काम बन गया।

मैंने अपने कई सहयोगियों को टेलीफोन करके तुरन्त मेरे घर पर आने के लिए कहा और आधे घण्टे के अन्दर-अन्दर वे मेरे पास पहुँच गये। मैंने उनको सारा किस्सा बताया और हम लोगों ने यह तय किया कि इस समाचार की जड़ का पता आधीरात के पहले-पहले लगा

लेना चाहिए। सबसे पहले हमें यह पता लगाने की जरूरत थी कि आखिर कोई नीग्रो पादरी सिटी कमीशन के अधिकारियों के साथ सचमुच मिले भी हैं या नहीं! श्री रोवान ने उन पादरियों के जिस सम्प्रदाय के होने की चर्चा की थी, उसको याद करते हुए हमने इधर-उधर पता लगाना शुरू किया और लगभग एक घण्टे के बाद हम उन तथाकथित प्रमुख नीग्रो पादरियों का पता लगा सकने में सफल हो गये। वे न तो 'प्रमुख' थे और न मॉण्टगोमरी विकास संगम के सदस्य ही थे!

शनिवार की रात के लगभग ग्यारह बज रहे थे। हमें कुछ न कुछ तो ऐसा करना ही था, जिससे लोगों को यह मालूम पड़ जाय कि वे कल सुबह जो पढ़ेंगे, वह समाचार एक 'झूठ' है! मैंने अपने कुछ साथियों पर यह जिम्मेवारी डाली कि वे शहर के सभी नीग्रो पादरियों को टेलीफोन करके यह बतायें कि वे रविवार की सुबह अपने-अपने चर्च में धर्म परिषद् के सामने बस-बहिष्कार-आन्दोलन को समाप्त करने के समाचार को असत्य घोषित करें। मैं अपने कुछ दूसरे सहयोगियों के साथ शहर के प्रमुख नीग्रो रात्रि-क्लबों और मदिरालयों का चक्कर लगाने के लिए निकला, ताकि उन स्थानों में उपस्थित नीग्रो लोगों को समझौते के गलत समाचार से अवगत कराया जा सके। यह मेरे लिए पहला ही अवसर था कि मॉण्टगोमरी के रात्रि-मनोरंजन-केन्द्रों को मैंने अन्दर से देखा। एक बजे रात तक हम इन क्लबों में घूम-घूमकर अपनी घोषणा करते रहे। हमारी इस तीव्रता ने समझौते के गलत समाचार को इतना नाकामयाब बना दिया कि रविवार की सुबह बसें उसी तरह खाली थीं, जिस तरह वे आजकल हमेशा रहती थीं!

शीघ्र ही उन तथाकथित तीन प्रमुख नीग्रो पादरियों से बात करने का भी मुझे अवसर मिला। उन्होंने यह कहा कि वे किसी भी समझौते पर राजी नहीं हुए हैं। उन्होंने स्पष्ट किया कि उनके साथ धोखा हुआ है। शहर के सम्बन्ध में कुछ नये तरह के आश्वासनों पर विचार करने के लिए उन्हें टेलीफोन पर निमन्त्रण देकर कॉन्फरेंस में बुला लिया गया था।

परन्तु उनके बीच कोई समझौता सम्भव नहीं हुआ है। इन तीनों ने सिटी कमीशन की घोषणा का सार्वजनिक तौर पर प्रतिवाद किया।

इस कल्पना-महल के ढह जाने के बाद नगर के कमिश्नर मुँह दिखाने योग्य भी नहीं रह गये! न केवल उनकी बात ऊपर की ऊपर उड़ गयी, बल्कि उनकी सचाई पर से भी लोगों का विश्वास उठ गया। प्रतिक्रियास्वरूप उनमें कुछ निराशा और कुछ उद्दण्डता व्याप्त हुई। उन्होंने नीग्रो-समुदाय के प्रति और अधिक सख्ती बरतने की नीति अपनायी। उसी नीति के क्रम में मेयर महोदय ने टेलीविज़न पर बस-बहिष्कार-आन्दोलन की तीव्र निन्दा की। उन्होंने धमकी देते हुए कहा कि नगर के अधिकारीगण बहिष्कार के नाम पर चलनेवाली बेवकूफियों को बरदाश्त नहीं करेंगे तथा उन्हें समाप्त करके रहेंगे। उन्होंने यह भी घोषणा की कि मॉण्टगोमरी का श्वेतांग बहुमत इस बात की परवाह नहीं करता कि नीग्रो लोग कभी भी बस में चढ़ें या न चढ़ें! उन्होंने श्वेतांग मालिकों से यह भी अपील की कि वे अपने नीग्रो कर्मचारियों को लाने-ले जाने के लिए कार की सुविधा देना बन्द करें। इस दौरान में शहर के तीनों कमिश्नरों ने यह प्रकट कर दिया कि वे गोरे नागरिकों की परिषद् में शामिल हो गये हैं।

सख्ती बरतने की इस नीति के परिणामस्वरूप अनेक नीग्रो लोगों को छोटी-मोटी ट्राफिक सम्बन्धी गलतियों के लिए गिरफ्तार किया जाने लगा। ऐसे लोग, जिन्हें ट्राफिक के नियमों को लेकर कभी किसी चेतावनी का सामना नहीं करना पड़ा था, उन्हें भी इस दौरान में जेल की यात्रा करनी पड़ी। हमारी अपनी जो यातायात-व्यवस्था थी, उसके अन्तर्गत चलनेवाली कारों को शहरभर में रोका जाने लगा और उनके ड्राइवरों से लाइसेंस, बीमे, काम आदि के बारे में सवाल उठाये जाने लगे। पुलिस ने बड़ी सावधानी के साथ इन ड्राइवरों की गलतियाँ नोट कर लीं, ताकि उन पर अच्छी तरह मुकदमा चल सके। हमारे यातायात के स्टेशनों पर कारों के आने की प्रतीक्षा में खड़े लोगों से कहा गया कि

परन्तु उनके बीच कोई समझौता सम्भव नहीं हुआ है। इन तीनों ने सिटी कमीशन की घोषणा का सार्वजनिक तौर पर प्रतिवाद किया।

इस कल्पना-महल के ढह जाने के बाद नगर के कमिश्नर मुँह दिखाने योग्य भी नहीं रह गये! न केवल उनकी बात ऊपर की ऊपर उड़ गयी, बल्कि उनकी सचाई पर से भी लोगों का विश्वास उठ गया। प्रतिक्रियास्वरूप उनमें कुछ निराशा और कुछ उद्दण्डता व्याप्त हुई। उन्होंने नीग्रो-समुदाय के प्रति और अधिक सख्ती बरतने की नीति अपनायी। उसी नीति के क्रम में मेयर महोदय ने टेलीविज़न पर बस-बहिष्कार-आन्दोलन की तीव्र निन्दा की। उन्होंने धमकी देते हुए कहा कि नगर के अधिकारीगण बहिष्कार के नाम पर चलनेवाली बेवकूफ़ियों को बरदाश्त नहीं करेंगे तथा उन्हें समाप्त करके रहेंगे। उन्होंने यह भी घोषणा की कि मॉण्टगोमरी का श्वेतांग बहुमत इस बात की परवाह नहीं करता कि नीग्रो लोग कभी भी बस में चढ़ें या न चढ़ें! उन्होंने श्वेतांग मालिकों से यह भी अपील की कि वे अपने नीग्रो कर्मचारियों को लाने-ले जाने के लिए कार की सुविधा देना बन्द करें। इस दौरान में नगर के तीनों कमिश्नरों ने यह प्रकट कर दिया कि वे गोरे नागरिकों की परिषद् में शामिल हो गये हैं।

सख्ती बरतने की इस नीति के परिणामस्वरूप अनेक नीग्रो लोगों को छोटी-मोटी ट्रैफिक सम्बन्धी गल्तियों के लिए गिरफ्तार किया जाने लगा। ऐसे लोग, जिन्हें ट्रैफिक के नियमों को लेकर कभी किसी परेशानी का सामना नहीं करना पड़ा था, उन्हें भी इस दौरान में जेल की यात्रा करनी पड़ी। हमारी अपनी जो यातायात-व्यवस्था थी, उसके अन्तर्गत चलनेवाली कारों को शहरभर में रोका जाने लगा और उनके ड्राइवरों से लाइसेंस, बीमे, नाम आदि के बारे में सवाल उठाये जाने लगे। पुलिस ने बड़ी सावधानी के साथ इन ड्राइवरों की गल्तियाँ नोट कर लीं, ताकि उन पर अच्छी तरह मुकदमा चल सके। हमारे यातायात के स्टेशनों पर कारों के आने की प्रतीक्षा में खड़े लोगों से कहा गया कि

## आन्दोलन का प्रारम्भ

ऊपर : श्रीमती रोज पार्क्स पुलिस चौकी में अपने अंगूठे का निशान देते हुए। श्रीमती रोज द्वारा बस की सीट छोड़ने से इनकार करने पर हुई उनकी गिरफ्तारी ने ही मॉण्टगोमरी के बस-बहिष्कार आन्दोलन के बीज बोये।

बायें : न्याय के लिए संघर्ष करनेवाले प्रमुख योद्धा श्री ई० डी० निक्सन, जिन्होंने बस-बहिष्कार का सुझाव दिया।

## आम सभाएँ

इन चित्रों में प्रदर्शित अपार जन-समूह प्रति सप्ताह आम सभाओं में एकत्र होने लगा। वे साथ मिलकर गाते थे, प्रार्थना करते थे, आन्दोलन के लिए साहस बटोरते थे। वे अपने नेताओं के सुझावों पर विचार करते थे।

नीचे : समागम के तीन दृश्य।
बायें : एक समर्थक महिला से हाथ मिलाते हुए डॉ० मा० लू० किंग।
बीच में : जनता का आवाहन करते हुए राल्फ अबरनाथी।
दायें : प्रार्थना करते हुए डॉ० मा० लू० किंग, रॉबर्ट ग्रेस्ज व रा० अबरनाथी।

## समाप्ति, पर सफलता के साथ

ऊपर : मॉण्टगोमरी के राजपथों पर चलनेवाली पहली बस, जो काले-गोरे के भेद-भाव से मुक्त है। दक्षिण के एक श्वेतांग नागरिक श्री [illegible] के साथ मा० लू० किंग बैठे हैं और अगली सीटों पर श्री राल्फ अबरनाथी एक अन्य यात्री के साथ सालभर तक चलने वाले आंदोलन के पुरस्कार से सम्मानित हो रहे हैं।

नीचे : किंग के पिता, माता, पत्नी कोरेटा व 'योकी' का पारिवारिक चित्र।

इस तरह 'हिचहाइकिंग' कानूनन जुर्म है ! कुछ लोगों से यह भी कहा गया कि अगर वे श्वेतांग बस्तियों में इधर-उधर घूमते हुए पाये जायेंगे, तो आवारापन के आरोप में गिरफ्तार कर लिये जायेंगे।

इन सारी कठिनाइयों के सामने आने से हमारी कारें चलानेवाले स्वयंसेवकगण कमजोर पड़ने लगे ! कुछ ड्राइवरों को यह भी भय हुआ कि उनके लाइसेंस रोक दिये जायेंगे या उनके बीमे रद्द कर दिये जायेंगे। कुछ लोगों को यह भी महसूस हुआ कि ऐसी परिस्थिति में अहिंसा काम देनेवाली नहीं है। बहुत-से ड्राइवरों ने चुपचाप इस काम को छोड़ दिया। इसलिए काम पर जाने-आनेवाले यात्रियों के लिए दिक्कत पैदा होने लगी और हमारे पास बहुत-सी शिकायतें आने लगीं। सुबह से लेकर बहुत रात बीते तक मेरा टेलीफोन बजता रहता था और मेरे दरवाजे पर लगी हुई 'कॉलबेल' तो शायद ही कभी चुप रहती थी। मेरे मन में यह आशंका होने लगी कि नीग्रो-समुदाय इस संघर्ष को आगे चालू रख पायेगा या नहीं।

सारे आन्दोलन को व्यवस्थित रखने के लिए नीग्रो पादरियों ने सार्वजनिक सभाओं में लोगों से यह अपील की कि वे मजबूती के साथ इस आन्दोलन में डटे रहें। हम लोगों ने ड्राइवरों को इस बात का भी आश्वासन दिया कि उनके सामने आनेवाली प्रत्येक कठिनाई का सामना हम लोग साथ मिलकर करेंगे। "हम सब संगठित रहें। अच्छा हो या बुरा, जब तक इस समस्या का हल न निकल जाय, हम दृढ़ता के साथ डटे रहें।" इस बात को हम बार-बार दोहराते रहे।

मुझे इस बात का कोई सन्देह नहीं था कि सख्ती बरतने की नीति के कारण मुझे स्वयं भी गिरफ्तारी का सामना करना होगा। जनवरी महीने के मध्य के एक दिन अपने चर्च के आफिस में कई घण्टों तक काम करने के बाद मैं अपने मित्र श्री रॉबर्ट विलियम्स तथा चर्च की सदस्या श्रीमती लिली थॉमस के साथ कार से घर जा रहा था। शहर के बीच में से गुजरते हुए मैंने सोचा कि हमारे यातायात-प्रबन्ध का शहर

उमसभरी अँधेरी कोठरी में पहुँचा दिया गया। ज्यों ही मैं कोठरी के भीतर पहुँचा कि जेलर ने मुझसे कहा : "अच्छा, और सबके साथ यहाँ पड़े रहो!" एक क्षण के लिए तो भावना की एक लहर-सी मेरे अन्दर दौड़ गयी! मुझे ऐसा लगा, मानो मैं खुले मैदान में ठण्डी हवा के झोंके खा रहा था। मेरे जीवन में यह पहला ही मौका था कि मुझे जेल के सींखचों के पीछे बन्द कर दिया गया था।

ज्यों ही मैं जेल की भीड़भरी कोठरी के अन्दर पहुँचा, मैंने वहाँ अपने दो परिचित व्यक्तियों को भी पाया। उनमें से एक तो ऐसा अध्यापक था, जिसे हमारे आन्दोलन में भाग लेने के कारण ही गिरफ्तार किया गया था। जेल की इस जनतन्त्र-प्रशासक (!) व्यवस्था में हम लोग आवारों, गिरहकटों और कानून तोड़नेवाले गम्भीर अपराधियों के साथ ही बन्द कर दिये गये थे। हमारी कोठरी में जो लोग थे, उनमें हत्या और चोरबाजारी के अपराधी भी शामिल थे। एक व्यक्ति ऐसा भी था, जिसे बड़े कामों से चन्दा एकत्रित करने के अपराध में पकड़ा गया था। परन्तु यह जन-तन्त्र भी रंगभेदजन्य पृथकता को मिटाने की सीमा तक नहीं पहुँचा था। यहाँ पर गोरे और काले अपराधी अलग-अलग रखे गये थे।

जब मैंने आसपास देखना शुरू किया, तब वहाँ की हालत देखकर मैं इतना हैरान हो गया कि जल्दी ही अपने पर आयी आफत को भी भूल गया। मैंने देखा कि लोग लकड़ी के सख्त तख्तों पर सो रहे थे। कुछ लोग चटाइयों पर पड़े हुए फटे-पुराने बिस्तरों पर सो रहे थे। उसी कोठरी के एक कोने में शौचालय भी था, जो बहुत ही बुरी हालत में था। यहाँ तक कि उसके चारों ओर आड़ तक नहीं थी। मैंने अपने-आपसे कहा कि भले ही इन लोगों ने कुछ भी क्यों न किया हो, परन्तु इनके साथ इस तरह का व्यवहार तो नहीं किया जाना चाहिए।

जेल के सभी बन्दी मेरे चारों ओर यह जानने के लिए इकट्ठे हो गये कि मुझे क्यों गिरफ्तार किया गया है। उन लोगों को इस बात पर बहुत आश्चर्य हुआ कि नगर के अधिकारीगण इतनी दूर तक चले गये हैं कि

इन्होंने मुझे भी गिरफ्तार कर लिया ! उसके बाद एक के बाद दूसरे व्यक्ति ने मुझे अपनी-अपनी गिरफ्तारी के कारण बताने शुरू किये और मुझसे निवेदन किया कि मैं उनको जेल से छुड़ाने में मदद करूँ। मैंने सभी लोगों की तरफ मुखातिब होकर कहा : "साथियो, इसके पहले कि मैं आप लोगों को जेल से छुड़ाने में मदद करूँ, खुद मुझे भी तो इस जेल से मुक्त होना पड़ेगा।" मेरे ऐसा कहने पर सभी लोग हँस पड़े।

थोड़ी देर बाद ही जेलर मुझे लेने के लिए आये। ज्यों ही मैं इस कोठरी से यह सोचता हुआ रवाना होने लगा कि मुझे न जाने कहाँ ले जाया जा रहा है, त्यों ही कोठरी में से किसीने पुकारा : "जब आप जेल से छूट जायँ, तब हमें मत भूल जाइयेगा।" मैंने उसे विश्वास दिलाया कि मैं उन लोगों को नहीं भूलूँगा। जेलर महोदय मुझे एक लम्बे बरामदे में से जेल के आगे की तरफ के एक छोटे कमरे में ले गये। एक क्षण के लिए तो मुझे लगा कि शायद मैं जमानत पर मुक्त किया जा रहा हूँ, लेकिन थोड़ी ही देर में मुझे पता चल गया कि मेरा यह अन्दाज गलत था। जेलर ने मुझे बैठ जाने का आदेश दिया और मेरी अँगुलियों को स्याही के 'पैड' पर रगड़ना शुरू किया। मेरी अँगुलियों के निशान वैसे ही लिये गये, जैसे किसी अपराधी के लिये जाते हैं।

अब तक मेरी गिरफ्तारी का समाचार पूरे शहर में फैल चुका था और बहुत-से लोग सिटी जेल पहुँचने लगे थे। सबसे पहले जेल पहुँचनेवालों में मेरे घनिष्ठ मित्र श्री राल्फ एबरनाथी थे। तुरन्त ही उन्होंने जमानत भरने की चेष्टा की, परन्तु अधिकारियों ने उन्हें बताया कि जमानत भरने जितनी सम्पत्ति पर सचमुच उनका स्वामित्व है या नहीं, इसकी साक्षी देनेवाला कोई लिखित पत्र न्यायालय की ओर से उपस्थित किये जाने पर ही उनसे जमानत ली जा सकती है। श्री राल्फ ने बताया कि तब साढ़े छह बज चुके थे और न्यायालय भी बन्द हो चुके थे।

अधिकारी ने उपेक्षाभरे शब्दों में उत्तर देते हुए कहा : "ठीक है, तब आपको कल सुबह तक प्रतीक्षा करनी होगी।"

तब श्री शाल्क ने पूछा : "क्या मैं श्री किंग से मिल सकता हूं?" तब जेलर ने कहा : "नहीं, आप उनसे कल दस बजे तक नहीं मिल सकते।"

"अच्छा, क्या जमानत के रुपये नकद भरना सम्भव है?"—श्री शाल्क ने पूछा। जेलर ने बड़ी अनिच्छा के साथ कहा : "हां, यह सम्भव है।" श्री शाल्क जल्दी से अपने चर्च के आफिस पहुंचे और यह पता लगाना शुरू किया कि मेरी जमानत भरने के लिए कितने नकद रुपये प्राप्त हो सकते हैं।

इसी बीच और भी बहुत-से लोग जेल के सामने एकत्रित हो गये थे। मेरे चर्च के छोटे पादरी और ट्रस्टीगण भी चारों ओर से पहुंचने लगे थे। जल्दी ही जेल के सामने इतनी बड़ी भीड़ जमा हो गयी कि जेलर महोदय घबरा उठे और उन्होंने मेरे पास आकर कहा : "किंग, अब तुम जा सकते हो!" और इसके पहले कि मैं अपना कोट भी पहन पाता, जेलर ने मुझे मेरी अपनी ही जमानत के आधार पर मुक्त कर दिया! उसने मेरा जमा किया हुआ सामान लौटाते हुए सूचित किया कि सोमवार की सुबह साढ़े आठ बजे न्यायालय में मेरे मुकदमे की सुनवाई होगी।

ज्यों ही मैं जेल से बाहर आया, त्यों ही मैंने अपने मित्रों और शुभचिन्तकों की एक बड़ी भीड़ को वहां उपस्थित पाया। थोड़ी देर पहले मेरा जो साहस टूट रहा था, वह मुझमें फिर से लौट आया। मैं जान गया कि मैं अकेला नहीं था। मैंने उपस्थित लोगों के सामने दो शब्द कहे और इसके बाद मेरे चर्च के एक छोटे पादरी ने मुझे घर पहुंचा दिया। ज्यों ही मैंने घर में प्रवेश किया, मेरी पत्नी ने एक चुम्बन देकर मेरा स्वागत किया। घर के अन्दर मेरे चर्च के बहुत-से सदस्य और मित्रगण बहुत उत्सुकता के साथ इस घटना के परिणामों को सुनने की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनके उत्साहवर्द्धक शब्दों ने मुझे फिर से यह विश्वास दिलाया कि मैं अकेला नहीं हूं।

इस रात के बाद आन्दोलन के प्रति मेरा लगाव और भी मजबूत

हो गया। इस आन्दोलन के साथ इतनी दृढ़ता से मैं पहले कभी नहीं जुड़ा था। सोने के पहले मैंने कोरेटा के साथ बातें कीं और उसने सदा की भाँति मुझे आश्वस्त किया। ऐसा आश्वासन सचमुच वही व्यक्ति दे सकता है, जो आपके उतना ही निकट हो, जितनी कि आपके हृदय की धड़कनें। हाँ, अन्याय की वह रात्रि अंधकारपूर्ण थी। श्वेतांग अधिकारियों की सख्ती बरतने की नीति अपने जोर पर थी। परन्तु इस अन्धकार में भी मैं एकता का एक चमकता हुआ सितारा देख रहा था। ●

हस्ताक्षर रहते थे। बहुत-से पत्र गलत और बुरी तरह से लिखे हुए आते थे, जिनमें धर्म के नाम पर इस अर्ध सत्य को सिद्ध करने की कोशिश की जाती थी कि "गोरे और नीग्रो लोगों को ईश्वर एक साथ रखना नहीं चाहता। अगर वह हमें मिलाना चाहेगा, तो हम स्वयं एक-दूसरे से मिलकर रहने लगेंगे।" कुछ पत्रों के साथ कुछ साइक्लोस्टाइल किये हुए ऐसे पत्रक भी रहते थे, जिनमें रंगसमन्वय तथा नीग्रो-समुदाय के विरोध में बहुत-सी भावुक बातें लिखी होती थीं। एक बार हम लोगों को हाथ से लिखा हुआ एक पत्र मिला, जिसमें लिखा था कि "तुम निगर. बड़ी गलती कर रहे हो। बाइबिल ने रंगभेद को दृढ़ता के साथ प्रतिपादित किया है। यहूदियों और अन्य वंशों के बारे में भी ऐसा ही है। यहाँ तक कि बाइबिल ने इजराइल के बारह अलग-अलग वंशों में भी पृथकता-वाद को मान्यता दी है। अपने देशवासियों को सीधा करने के लिए हमें एक हिटलर की जरूरत है और वह जरूर पैदा होगा।" बहुत-से पत्र तो प्रकाशित करने के योग्य भी नहीं हैं। ये बहुत ही भद्दे और अश्लील होते थे।

इस बीच टेलीफोन की घण्टी भी दिनभर और लगभग पूरी रात बजती ही रहती थी। जब यह टेलीफोन आते थे, तब कोरेटा प्रायः घर में अकेली ही होती थी। परन्तु वे लोग उसका अपमान करने से भी नहीं चूकते थे। बहुत बार तो लोग टेलीफोन की घण्टी बजाते, परन्तु ज्यों ही हमारी तरफ से 'हॅलो' कहा जाता, बिना कोई बातचीत किये ही वे टेलीफोन वापस रख देते थे। इन टेलीफोनों में अधिकतर लोग कामुकतापूर्ण बातें कहते रहते थे। एक महिला, जिसकी आवाज मैं शीघ्र ही पहचानने लगा था, लगातार कई दिनों तक टेलीफोन पर नीग्रो लोगों द्वारा बलात्कार किये जाने का आरोप लगाती रही। जब भी मैं किसीके प्रश्न का उत्तर देने की चेष्टा किया करता, जैसा कि मैं अपने आन्दोलन को समझाने के लिए बराबर किया करता था, वह टेलीफोन की लाइन काट दिया करता था। कभी-कभी हम लोग टेलीफोन या 'रिसीवर' भी

जब श्री राल्फ मुझे घर पहुँचाने के लिए आये तो मार्ग में कार में मुझसे कहा :

"कुछ-न-कुछ गड़बड़ है। तुम किसी बात से परेशान जरूर हो।"

जिस तरह मैंने चर्च की सभा के बाद इस तरह के सवाल पूछने-वालों को उत्तर दे दिया था, उसी तरह श्री राल्फ के सामने भी इस प्रसंग को टालने की कोशिश की। परन्तु उसने जोर देकर कहा : "मार्टिन, तुम केवल सैद्धान्तिक बात ही नहीं कह रहे थे। तुम्हारे दिमाग में जरूर कोई निश्चित बात थी।"

अब मेरे लिए इस बात को टालना सम्भव नहीं रह गया था, इस-लिए मैंने सत्य को स्वीकार कर लिया। यह पहला ही अवसर था, जब कि मैंने श्री राल्फ को उन धमकियों के बारे में बताया, जिन्होंने मेरे परिवार को परेशान कर रखा था। मैंने अपने श्वेतांग मित्र के साथ हुई बात-चीत का भी जिक्र किया। मेरी आत्मा पर जो भय चुपके से छाया जा रहा था, वह भी मैंने श्री राल्फ को बताया। श्री राल्फ ने मुझे आश्वस्त करने का प्रयत्न किया, फिर भी मैं भय-ग्रस्त था।

धमकियाँ उसी तरह चलती रहीं। करीब-करीब प्रतिदिन मुझे कोई न कोई इस बात से सावधान करता था कि श्वेतांग लोग मेरा सफाया करने की योजनाएँ बना रहे हैं। जब मैं रात को सोता था तो मेरे सामने एक तरह की अनिश्चितता रहती थी कि न जाने अगले क्षण क्या होगा! जब सवेरे उठकर मैं कोरेटा और 'योकी' को देखता तो मन ही मन कहता : "वे मुझसे किसी भी क्षण अलग किये जा सकते हैं। या मैं ही उनसे किसी भी क्षण दूर किया जा सकता हूँ।" अपना यह विचार तो मैंने कोरेटा के साथ भी नहीं बाँटा।

जनवरी महीने के अन्तिम दिनों की एक रात को मैं देर से सोया। उस दिन मैं काम से काफी थका हुआ था। कोरेटा सो चुकी थी। मैं सोने की तैयारी में ही था कि टेलीफोन की घंटी बजी। क्रोधभरी आवाज में किसीने कहा : "ऐ निगर! सुनो, तुमसे जितना हम ले सकते थे,

यह हम से चुके हैं। अगले सप्ताह के पहले ही मॉन्टगोमरी आने के लिए तुम पछताओगे।" मैंने टेलीफोन रख दिया, लेकिन सो नहीं सका। मुझे ऐसा लगा, मानो मेरा सारा भय एक साथ ही मुझ पर आक्रमण कर बैठा है। मैं मन में गहरे तक टूट चुका था।

मैं बिस्तर से उठा और इधर-उधर टहलने लगा। आखिर मैं रसोई-घर की ओर गया और कॉफी गरम की। मैं सब कुछ छोड़ देने के लिए तैयार था। मैं बैठा था और मेरे सामने अनछुआ कॉफी का प्याला पड़ा था। मैं किसी ऐसे मार्ग की तलाश में था, जिससे मैं एक कायर कहलाये बिना इस सारे वातावरण से अलग हट पाऊँ। ऐसी निर्बल अवस्था में, जब कि मेरा साहस पूरी तरह चूर-चूर हो चुका था, मैंने अपनी समस्या को ईश्वर के सामने प्रस्तुत करने का निश्चय किया। अपने सिर को हाथों में थामकर मैं रसोई की टेबुल पर झुक गया और ऊँचे स्वर से प्रार्थना की। मैंने ईश्वर से उस अर्धरात्रि में जो शब्द कहे, वे अभी भी मेरे मस्तिष्क में स्पष्ट रूप से अंकित हैं : "मैं यहाँ एक ऐसे पक्ष पर खड़ा हूँ, जिसे मैं सही समझता हूँ। लेकिन इस समय मैं भयभीत हूँ। लोग मुझसे नेतृत्व की अपेक्षा करते हैं। अगर मैं उनके सामने बिना शक्ति और साहस के खड़ा रहूँ तो वे भी निर्बल हो जायेंगे। मैं अपनी शक्ति खो चुका हूँ। अब मेरे पास कुछ नहीं है। मैं एक ऐसे बिंदु पर पहुँच गया हूँ, जहाँ मैं अकेला रहकर इन परिस्थितियों का सामना नहीं कर सकता।"

उस क्षण मैंने ईश्वरीय शक्ति का ऐसा स्पष्ट अनुभव किया, जैसा इसके पहले मैंने कभी अनुभव नहीं किया था। ऐसा लगा, मानो मेरी अंतरात्मा ने एक आश्वासन प्रस्तुत किया हो, जैसे मेरे अन्दर से यह आवाज उठ रही हो कि "न्याय के लिए खड़े हो जाओ। सत्य के लिए खड़े हो जाओ। ईश्वर सदैव तुम्हारे पक्ष में होंगे।" धीरे-धीरे मेरा भय दूर होने लगा। मेरे मन की अनिश्चितता मिटने लगी और किसी भी परिस्थिति का सामना करने के लिए मैं तैयार हो गया।

तीन दिन के बाद, ३० जनवरी को मैं घर से बाहर निकला। शाम के ७ बजने में थोड़ी देर थी। 'फर्स्ट बैप्टिस्ट चर्च' में आयोजित आम सभा में भाग लेने के लिए मुझे जाना था। मेरे चर्च की धर्म परिषद् की एक सदस्या श्रीमती मेरी लूसी विलियम्स मेरे घर आयी हुई थी, ताकि मेरी अनुपस्थिति में मेरी पत्नी को अकेलापन महसूस न हो। बेबी को सुला देने के बाद कोरेटा और श्रीमती विलियम्स टेलीविजन देखते हुए बैठी थीं। लगभग साढ़े नौ बजे उन्होंने एक धमाके की आवाज सुनी। ऐसा लगता था, मानो किसीने पत्थर फेंका हो। कुछ पलों में ही एक और धमाके ने सारे घर को हिला दिया। घर के ओसारे पर एक बम फेंका गया था।

इस धमाके की आवाज कई चौराहों के पार तक सुनायी पड़ी। मेरे घर पर बम फेंके जाने की खबर हमारी सार्वजनिक सभा में भी हवा के साथ ही पहुँच गयी। सभा के अन्त में जब मैं प्लेटफार्म पर खड़ा होकर लोगों द्वारा दी जानेवाली धन-राशि एकत्रित करने में सभा के संयोजकों की मदद करने में लगा हुआ था कि सभा के एक स्वयंसेवक को जल्दी-जल्दी आगे आते हुए मैंने देखा। यह स्वयंसेवक श्री राल्फ एबरनाथी को कुछ सूचना दे गया। श्री एबरनाथी तुरन्त नीचे गये और जब वापस ऊपर आये तो उनके चेहरे पर बहुत चिन्ता व्याप्त थी। और भी कई लोग इसी तरह से चर्च के बाहर-भीतर आये-गये। लोगों ने मेरी तरफ देखा और फिर मुँह दूसरी ओर मोड़ लिया। एक या दो व्यक्तियों ने मुझसे कुछ कहना चाहा, पर बाद में उन्होंने अपना विचार बदल लिया और कुछ भी नहीं कहा। सभा के एक स्वयंसेवक ने मुझे 'प्लेटफार्म' से एक तरफ बुलाया। सम्भवतः वह मुझे कोई सूचना देना चाहता था। परन्तु इसके पहले कि मैं उसके पास पहुँच पाता, श्री एस० एम० सी ने उसे कहीं और भेज दिया। इन सब बातों से मैं यह समझ गया कि जो कुछ भी हुआ है, उसका सम्बन्ध मुझसे है। मैंने श्री राल्फ एबरनाथी, श्री एस० एम० सी और श्री ई० एन० फ्रेंच को बुलाकर कहा कि जो कुछ

है ही। मेरे पास भी मेरी अपनी पिस्तौल है। आ जाओ मैदान में, देख क्या होता है।" ज्यों ही मैं ओसारे के सामने गया, मैंने यह देखा कि बहुत-से लोग हथियारों से लैस थे। अहिंसा हिंसा के रूप में परिवर्तित हो जाने के छोर पर थी।

मैं जल्दी-जल्दी घर के अन्दर यह देखने के लिए गया कि कोरेटा और योकी सुरक्षित हैं या नहीं। जब मैं शयन-घर में गया और पत्नी तथा बेबी को सुरक्षित पाया तो न जाने कितने मिनटों के बाद अब मैंने आराम की साँस ली। मुझे मालूम हुआ कि जब कोरेटा तथा श्रीमती विलियम्स ने ओसारे पर धमाके की आवाज सुनी तो सौभाग्य से वे लपककर घर के पिछवाड़े में चली गयी थीं। अगर वे धमाके का पता लगाने के लिए ओसारे की तरफ चली जातीं तो उसका परिणाम कुछ दूसरा ही होता। कोरेटा के मन में इस घटना के कारण न तो कटुता पैदा हुई और न वह भयग्रस्त ही हुई। उसने इस सारी घटना के समय जो शान्ति और धैर्य रखा, उस पर मुझे विश्वास नहीं हो रहा था। जब मैंने उसे शान्त देखा तो मैं भी और अधिक शान्त हो गया।

मेयर गेल, कमिश्नर सेलर्स तथा बहुत-से श्वेत पत्र-प्रतिनिधि मेरे घर पहुँचने के पहले ही वहाँ आ चुके थे और हमारे भोजन करने के कमरे में खड़े परिस्थिति का मुआयना कर रहे थे। अपने परिवार की सुरक्षा से आश्वस्त होकर मैं इन लोगों से बात करने गया। श्री गेल और श्री सेलर्स दोनों ने खेद प्रकट करते हुए कहा : "अपने शहर में ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना हुई है, यह दुःख की बात है।" इसी समय पास में ही हमारे चर्च के एक ट्रस्टी भी खड़े थे, जो कि मॉण्टगोमरी सार्वजनिक स्कूल-संगठन में काम करते हैं। हालाँकि वे जो बात कहने जा रहे थे, उससे उनके वैयक्तिक जीवन में क्षति पहुँचने का भय था, फिर भी उन्होंने साहस के साथ मेयर तथा कमिश्नर की तरफ मुखातिब होकर कहा : "आप लोग खेद भले ही प्रकट करें, परन्तु इस तथ्य से आप इनकार नहीं कर सकते कि आपके सार्वजनिक वक्तव्यों ने ही बम-विस्फोट की इस घटना के

लिए वातावरण बनाया है। आप लोगों की गलती बरतने की नीति का ही यह एक परिणाम है।" इस बात का उत्तर न तो मेयर जैल दे सके और न कमिश्नर मेन्स।

बाहर की भीड़ निरन्तर बढ़ती जा रही थी। पुलिस के लोग भीड़ को तितर-बितर करने में असफल हो रहे थे। इसके अलावा लोगों की संख्या निरन्तर बढ़ती ही जा रही थी। घर के अन्दर खड़े हुए स्थानीय प्रेस-प्रतिनिधि जल्दी से जल्दी इस समाचार को प्रकाशित करने के लिए बाहर जाना चाहते थे, पर इस क्रुद्ध भीड़ के बीच से जाने की उनको हिम्मत नहीं हो रही थी। वे भयभीत थे। मेयर और पुलिस कमिश्नर भी, भले ही वे स्वीकार न करें, पीले पड़ गये थे।

ऐसे वातावरण में मैं ओसारे के बाहर आया और उपस्थित भीड़ को शान्तचित्त हो जाने का निवेदन किया। क्षणभर में सब लोग शान्त हो गये। चारों तरफ एक गहरी चुप्पी छा गयी। मैंने शान्त स्वर में उन लोगों को बताया कि मैं किसी तरह से आहत नहीं हुआ हूँ और मेरी पत्नी तथा बेटी भी सुरक्षित हैं। मैंने कहा: "अब हमें किसी भी तरह चिन्तित होने की जरूरत नहीं है। अगर आपके पास शस्त्र हैं तो आप उन्हें वापस घर ले जाइये। अगर आपके पास शस्त्र नहीं हैं तो कृपया उन्हें प्राप्त करने की कोशिश मत कीजिये। हिंसा के बदले में हिंसा करके हम इस समस्या का हल नहीं कर सकते। हम हिंसा का जवाब अहिंसा से दें। प्रभु ईसा के वे शब्द आप याद रखें कि 'जो तलवार के बल पर रहता है, वह तलवार के द्वारा ही समाप्त हो जायेगा।'" इसके बाद मैंने लोगों से शान्तिपूर्वक अपने-अपने घर जाने की अपील करते हुए कहा: "हमें अपने दुश्मनों से प्रेम करना चाहिए। भले ही वे हमारे साथ कैसा भी व्यवहार क्यों न करें। गोरे लोगों को हम बता दें कि हम उनसे प्रेम करते हैं। प्रभु ईसामसीह के वे शब्द शताब्दियों से प्रतिध्वनित होते आ रहे हैं कि 'अपने दुश्मन से भी प्यार करो। जो तुम्हें शाप देते हैं, उनको भी आशीर्वाद दो। जो तुम्हारे साथ बुरा

व्यवहार करें, उनके लिए भी प्रार्थना करो।' यही वह सिद्धान्त है, जिसके आधार पर हमें रहना है। हमें घृणा का जवाब प्रेम से देना है। अगर मैं समाप्त भी कर दिया जाऊँ तो भी यह आन्दोलन समाप्त नहीं किया जा सकता, क्योंकि ईश्वर इस आन्दोलन के साथ है। इस महान् विश्वास और तेजस्वी आश्वासन के साथ आप सब लोग घर जायँ।"
जनता इस भाषण से बहुत ही प्रभावित हुई।

मेरे बोलने के बाद पुलिस कमिश्नर ने कुछ वक्तव्य देना चाहा। लेकिन तुरन्त ही भीड़ ने उनकी खिल्ली उड़ायी। पुलिस के अन्य अधिकारियों ने नीग्रो लोगों से यह कहकर शान्त होने की अपील की कि "शान्त रहिये! पुलिस कमिश्नर बोल रहे हैं।" इस पर तो लोगों ने और भी ज्यादा जोर से खिल्ली उड़ायी। मैं ओसारे पर फिर से आया और अपने हाथ ऊपर उठाकर लोगों से शान्त होने का निवेदन किया: "अभी-अभी मैंने जो बातें आपसे कही थीं, उनको आप याद रखें। पुलिस कमिश्नर की बात हमें सुननी चाहिए।" मेरी अपील पर लोगों के शान्त हो जाने से पुलिस कमिश्नर ने कुछ कहा और उन व्यक्तियों को पुरस्कार देने की घोषणा की, जो बम-विस्फोट करनेवालों के बारे में पुलिस को किसी तरह की जानकारी देंगे। तब भीड़ छटने लगी।

रातभर तनाव का वातावरण रहा। नीग्रो लोगों पर बहुत बीत चुकी थी। अब उनके धैर्य का बाँध टूटने लगा था। वे ईंट का जवाब पत्थर से देने को तैयार थे। हिंसा के बदले में हिंसा पर उतारू होने को उद्यत थे। एक सिपाही ने बाद में मुझसे कहा कि अगर उस समय कोई नीग्रो पत्थर से ठोकर खाकर भी गिर पड़ता तो भयंकर रूप से जातीय दंगा फूट पड़ता। क्योंकि तब नीग्रो लोग यही समझते कि गोरे लोगों ने उसे धक्का दिया है। वह रात्रि मॉण्टगोमरी के इतिहास की शायद सबसे अधिक अन्धकारपूर्ण रात्रि हो सकती थी। लेकिन किसी अज्ञात शक्ति ने हमें बचा लिया। ईश्वरीय चेतना हमारे दिलों में बह रही थी। वह रात, जो किसी विप्लवकारी परिस्थिति का निर्माण करने जा रही थी,

अचानक अहिंसा की देदीप्यमान शक्ति के सामूहिक प्रदर्शन की जगह बन गयी।

उस शाम, हमारे बहुत-से मित्र जब अपने-अपने घर चले गये थे, तब मैं, कोरेटा और योकी हमारे चर्च के ही एक सदस्य के घर रात में सोने के लिए आमंत्रित किये गये। हम सब वहीं सोये। लेकिन मुझे नींद बिल्कुल नहीं आयी। मैं शहर की तरफ के शयन-कक्ष में लेटा हुआ था। चारों तरफ नीरवता छायी हुई थी। काफी दूर सड़क पर चमकनेवाली बिजली का प्रकाश खिड़की के परदे में से छन-छनकर आ रहा था और यह प्रकाश मेरे मन को आशाजनक ज्योति प्रदान कर रहा था। मेरा मस्तिष्क बम-विस्फोट करनेवाले व्यक्तियों की दुष्टता पर विचार करने में उलझा हुआ था। जब मुझे यह ख्याल आता कि मेरी पत्नी और बेबी इस बम-विस्फोट के कारण मर भी सकते थे, तब मुझे गोरों पर गुस्सा आने लगा। मैं गोरे व्यक्तियों के बारे में तथा मुझसे और नीग्रो-समुदाय से सम्बद्ध उनके मामलों के बारे में सोचता रहा। इन सब बातों पर सोचते सोचते मैं फिर एक बार उन लोगों के प्रति घृणा करने के किनारे तक पहुँच गया। लेकिन मैंने फिर एक बार अपने-आपको सँभाला। घृणा की तरफ बढ़ते हुए अपने विचारों को रोकते हुए मैंने अपने-आपसे कहा: "तुम स्वयं अपने को कटु मत बनने दो।"

मैंने अपने-आपको गोरे व्यक्तियों के स्थान पर रखकर सोचने का प्रयत्न किया कि अगर मैं उनकी जगह होता तो मेरी क्या स्थिति होती। मैं यह समझ रहा था कि वे किंकर्तव्यविमूढ़ हैं। वैसे वे बुरे आदमी नहीं हैं। शहर में उनकी बहुत अच्छी प्रतिष्ठा है। नीग्रो-समुदाय के साथ व्यवहार करने में उन्होंने सज्जनता का परिचय दिया है और उन्होंने समाज का आदर भी प्राप्त किया है। वे शायद सोचते हैं कि नीग्रो समुदाय के साथ वे जिस तरीके से पेश आ रहे हैं, वही न्यायोचित मार्ग है। वे हमारे बारे में जिस तरह सोचते हैं, बातें करते हैं और व्यवहार

करते हैं, उसका कारण यह है कि उन्हें ये बातें इसी तरह से सिखायी गयी हैं। बचपन में झूले में खेलने के समय से लेकर कब्र में जाने तक क्रम से उनके मन में यही बैठाया गया है कि नीग्रो जाति के लोग हीन तथा अछूत हैं। उनके माता-पिता ने भी यही सिखाया है। जिस स्कूल में वे पढ़े हैं, वहाँ भी यही सिखाया गया है। जो पुस्तकें वे पढ़ते रहे हैं, उनमें भी यही बताया गया है। यहाँ तक कि उनके चर्चों में भी, उनके पादरी गुरुओं ने भी उनको अक्सर यही शिक्षा दी है। इससे भी बड़ी बात यह है कि रंगभेद का वातावरण और उसकी सम्पूर्ण पृष्ठभूमि ही उन्हें यह बात सिखा देती है। जिस संस्कृति और परम्परा में वे पले हैं, उसीने उन्हें यह सिखा दिया है कि नीग्रो लोग अमुक बातों के लिए योग्य ही नहीं हैं। यह वह परम्परा है, जो ढाई सौ वर्षों से अधिक समय से दास-प्रथा और नब्बे वर्षों से अधिक समय से रंग-भेद प्रथा को अपने में समेटकर प्रगति को रोकती रही है। ये लोग तो बेचारे अपनी उस परम्परा की सन्तानें मात्र हैं। रंग-भेद की परम्पराओं को सुरक्षित रखने की चेष्टा करके वे उसीकी रक्षा कर रहे हैं, जिसे उनकी रूढ़ परम्पराओं तथा लौकिक रीति-रिवाजों ने न्याय-मार्ग कहकर सिखाया है।

अर्धरात्रि को बीते काफी समय हो गया था। फोरेटा और बेबी गहरी नींद में सो रहे थे। मेरे लिए भी यह आवश्यक था कि कुछ आराम करता। करीब ढाई बजे मैंने करवट बदली और मुझे घबराहट-भरी तन्द्रा-सी आने लगी। फिर भी रात्रि अभी व्यतीत नहीं हुई थी। थोड़ी देर बाद ही किसीके धीरे-धीरे, पर लगातार दरवाजा खटखटाने पर फोरेटा की और मेरी नींद टूट गयी। हम दोनों ने कमरे की मद्धिम रोशनी में चुपचाप एक दूसरे की ओर देखा। दरवाजे पर दुबारा दस्तक हुई। बिना हिले-डुले हम ज्यों के त्यों लेटे रहे। खिड़की में से सामने के ओसारे में एक काली छाया भी हमें दिखायी पड़ रही थी। हमारे मेजबान पीछे की तरफ के कमरे में गहरी नींद में सो रहे थे; और हम लोग आगे की तरफ के कमरे में जड़वत्, निष्क्रिय लेटे हुए थे। थोड़ी

देर बाद खड़खड़ाहट बन्द हो गयी और यह भारी छाया लिपटी हुई अँधेरे के पार सड़क की तरफ बढ़ी। मैं उत्सुक होकर खिड़की के बाहर निकला। पर्दे को हटाकर बाहर झाँका और यह देखकर दंग रह गया कि वे कोरेटा के पिताजी थे।

श्री ओबी स्कॉट ने बम-विस्फोट का समाचार मेरियन में रेडियो पर सुना था, इसलिए वे तुरन्त ही कार से मॉण्टगोमरी आ गये थे। उन्होंने सोचा था कि जब तक यह वातावरण शान्त न हो, तब तक के लिए कोरेटा और योकी को वे अपने साथ ले जायेंगे। हमने आपस में मिलकर इस पर थोड़ी देर बातचीत की। हालाँकि कोरेटा ने अपने पिताजी के विचारों को बड़े सम्मान के साथ सुना, पर उसने मुझे छोड़कर उनके साथ जाने के विचार को पसन्द नहीं किया : "पिताजी, मुझे खेद है कि मैं आपके साथ नहीं चल सकूँगी। मेरी जगह मार्टिन के साथ यहीं पर है।" और तब श्री स्कॉट को अकेले ही वापस मेरियन जाना पड़ा।

दो दिन के बाद ही श्री ई० डी० निक्सन के घर के लॉन में किसीने डाइनामाइट-शाकेट का विस्फोट किया। परन्तु इस बार भी सौभाग्य से किसीको कोई चोट नहीं पहुँची। एक बार फिर नीग्रो लोगों की एक भारी भीड़ श्री निक्सन के घर के सामने एकत्रित हो गयी, परन्तु यह भीड़ नियन्त्रण से बाहर नहीं हुई। अहिंसा अपनी पहली और दूसरी परीक्षा में उत्तीर्ण हुई।

इन बम-विस्फोटों के बाद मेरे चर्च के अनेक अधिकारियों और विश्वस्त मित्रों ने मुझसे इस बात का आग्रह किया कि मैं अपने लिए अंगरक्षक रखूँ, तथा घर के द्वार पर सशस्त्र पहरे का प्रबन्ध करूँ। मैंने उन्हें यह समझाने की कोशिश की कि अब मेरे मन में किसी तरह का डर नहीं है। इसलिए मुझे किसी तरह की सुरक्षा की भी जरूरत नहीं है। परन्तु मित्रगण अपने आग्रह पर निरन्तर जोर देते रहे। इसलिए मैंने उनके सुझाव पर विचार करने का आश्वासन दिया। मैंने मित्र-

धिकारी के कार्यालय में जाकर अपनी कार में एक बन्दूक रखने के लिए आवेदन भी दिया। पर यह आवेदन अस्वीकार कर दिया गया।

इसी दौरान में मैंने इस प्रश्न पर फिर से थोड़ा चिन्तन किया। मैंने सोचा कि किस तरह मैं एक ही समय में, एक अहिंसात्मक आन्दोलन का नेतृत्व भी कर सकता हूँ और अपनी रक्षा के लिए हिंसक शस्त्रों का उपयोग भी कर सकता हूँ। कोरेटा ने और मैंने इस प्रश्न पर कई दिनों तक विचार-विमर्श किया और अन्त में हम इसी निर्णय पर पहुँचे कि शस्त्रों से इस समस्या का हल नहीं निकाला जा सकता। तब हम लोगों ने उस एक शस्त्र का भी परित्याग कर देने का निश्चय किया, जो कि अब तक हमारे पास था। पर हमारे मित्रों को सन्तुष्ट करने की बात भी तो बहुत आवश्यक थी। इसलिए मध्यम मार्ग के रूप में हमने यह स्वीकार कर लिया कि घर के चारों तरफ बिजली की रोशनी ( Flood Light ) का पूरा प्रबन्ध रहे तथा एक निःशस्त्र चौकीदार भी दिन-रात पर पर रहे। मित्रों के आग्रह पर मैंने यह वचन भी दिया कि मैं शहर में अकेले नहीं घूमा करूँगा।

मैं शहर में अकेले न घूमने का अपना यह वचन आसानी से निभा सका। इसके लिए मैं अपने मित्र श्री बॉब ( रॉबर्ट ) विलियम्स का कृतज्ञ हूँ। श्री विलियम्स अलबामा राजकीय कॉलेज में संगीत के प्राध्यापक हैं और मोरहाउस कॉलेज में मेरे सहपाठी रह चुके हैं। जब मैं मॉण्टगोमरी आया तो संयोग से हम मिल गये। और जब से हमारा बस-आन्दोलन चला, तब से तो वे मुझसे और कोरेटा से शायद ही कभी दूर रहे हों। मॉण्टगोमरी शहर में कहीं भी जाने की जरूरत पड़ने पर वे मेरी कार चलाते थे। अनेक बार तो जब शहर से बाहर भी मुझे जाना पड़ा, तब भी उन्होंने मेरा साथ दिया। जब भी कोरेटा और 'योकी' अटलांटा अथवा मारिओं जाते थे, तब श्री विलियम्स उन्हें कार से वहाँ छोड़ आते थे और वापस भी ले आते थे। लगभग अनजान में ही वे मेरे स्वेच्छया स्वीकृत 'अंगरक्षक' बन गये थे, जब कि उन्होंने कभी भी

देर बाद खटखटाहट बन्द हो गयी और वह काली छाया हिलती हुई ओसारे के पार सड़क की तरफ बढ़ी। मैं उत्सुक होकर बिस्तर से बाहर निकला। पर्दे को हटाकर बाहर झाँका और यह देखकर दंग रह गया कि वे कोरेटा के पिताजी थे।

श्री ओबी स्कॉट ने बम-विस्फोट का समाचार मारिओं में रेडियो पर सुना था, इसलिए वे तुरन्त ही कार से मॉण्टगोमरी आ गये थे। उन्होंने सोचा था कि जब तक यह वातावरण शान्त न हो, तब तक के लिए कोरेटा और योकी को वे अपने साथ ले जायेंगे। हमने आपस में मिलकर इस पर थोड़ी देर बातचीत की। हालाँकि कोरेटा ने अपने पिताजी के विचारों को बड़े सम्मान के साथ सुना, पर उसने मुझे छोड़कर जाने के विचार को पसन्द नहीं किया: "पिताजी, मुझे खेद है कि मैं आपके साथ नहीं चल सकूँगी। मेरी जगह मार्टिन के साथ यहीं पर है।" और तब श्री स्कॉट को अकेले ही वापस मारिओं जाना पड़ा।

दो दिन के बाद ही श्री ई० डी० निक्सन के घर के लॉन में किसीने डाइनामाइट-बारूद का विस्फोट किया। परन्तु इस बार भी सौभाग्य से किसीको कोई चोट नहीं पहुँची। एक बार फिर नीग्रो लोगों की एक भारी भीड़ श्री निक्सन के घर के सामने एकत्रित हो गयी, परन्तु वह भीड़ नियन्त्रण से बाहर नहीं हुई। अहिंसा अपनी पहली और दूसरी परीक्षा में उत्तीर्ण हुई।

इन बम विस्फोटों के बाद मेरे चर्च के अनेक अधिकारियों और विश्वासपात्र मित्रों ने मुझसे इस बात का आग्रह किया कि मैं अपने लिए अंगरक्षक रखूँ तथा घर के ऊपर सशस्त्र पहरे का प्रबन्ध करूँ। मैंने उन्हें यह समझाने की कोशिश की कि अब मेरे मन में किसी तरह का डर नहीं है। इसलिए मुझे किसी तरह की सुरक्षा की भी जरूरत नहीं है। परन्तु मित्रगण अपने आग्रह पर निरन्तर जोर देते रहे। इसलिए मैंने उनके सुझाव पर विचार करने का आश्वासन दिया। मैंने फिर

धिकारी के कार्यालय में जाकर अपनी कार में एक बन्दूक रखने के लिए आवेदन भी दिया। पर यह आवेदन अस्वीकार कर दिया गया।

इसी दौरान में मैंने इस प्रश्न पर फिर से थोड़ा चिन्तन किया। मैंने सोचा कि किस तरह मैं एक ही समय में, एक अहिंसात्मक आन्दोलन का नेतृत्व भी कर सकता हूँ और अपनी रक्षा के लिए हिंसक शस्त्रों का उपयोग भी कर सकता हूँ। कोरेटा ने और मैंने इस प्रश्न पर कई दिनों तक विचार-विमर्श किया और अन्त में हम इसी निर्णय पर पहुँचे कि शस्त्रों से इस समस्या का हल नहीं निकाला जा सकता। तब हम लोगों ने उस एक शस्त्र का भी परित्याग कर देने का निश्चय किया, जो कि अब तक हमारे पास था। पर हमारे मित्रों को सन्तुष्ट करने की बात भी तो बहुत आवश्यक थी। इसलिए मध्यम मार्ग के रूप में हमने यह स्वीकार कर लिया कि घर के चारों तरफ बिजली की रोशनी ( Flood Light ) का पूरा प्रबन्ध रहे तथा एक निःशस्त्र चौकीदार भी दिन-रात घर पर रहे। मित्रों के आग्रह पर मैंने यह वचन भी दिया कि मैं शहर में अकेले नहीं घूमा करूँगा।

मैं शहर में अकेले न घूमने का अपना यह वचन आसानी से निभा सका। इसके लिए मैं अपने मित्र श्री बॉब ( रॉबर्ट ) विलियम्स का कृतज्ञ हूँ। श्री विलियम्स अल्बामा राजकीय कॉलेज में संगीत के प्राध्यापक हैं और मोरहाउस कॉलेज में मेरे सहपाठी रह चुके हैं। जब मैं मॉण्ट-गोमरी आया तो संयोग से हम मिल गये। और जब से हमारा बस-आन्दोलन चला, तब से तो वे मुझसे और कोरेटा से शायद ही कभी दूर रहे हों। मॉण्टगोमरी शहर में कहीं भी जाने की जरूरत पड़ने पर वे मेरी कार चलाते थे। अनेक बार तो जब शहर से बाहर भी मुझे जाना पड़ा, तब भी उन्होंने मेरा साथ दिया। जब भी कोरेटा और 'योकी' अटलांटा अथवा मारिओं जाते थे, तब श्री विलियम्स उन्हें कार से वहाँ छोड़ आते थे और वापस भी ले आते थे। लगभग अनजान में ही वे मेरे स्वेच्छया स्वीकृत 'अंगरक्षक' बन गये थे, जब कि उन्होंने कभी भी

अपने साथ किसी तरह का शस्त्र नहीं रखा और अंगरक्षक के नाम में जिस तरह की कठोरता का बोध होता है, वह कठोरता तो उनमें हो ही नहीं सकती थी।

इस कठिन समय में मेरे चर्च के अधिकारी और सदस्यगण अपना सक्रिय सहयोग, समर्थन और उत्साह प्रदान करने के लिए सदैव प्रस्तुत रहते थे। कई कई घण्टों और कभी-कभी कई-कई दिनों घर से बाहर रहकर एक पति तथा पिता के उत्तरदायित्वों के प्रति न्याय करने में मैं ज्यों-ज्यों असमर्थ रहने लगा, त्यों-त्यों मेरे चर्च की अनेक महिला सदस्यों ने कोरेटा को अकेलेपन से बचाने के लिए मेरे घर आना अपना कर्तव्य ही समझ लिया। अनेक बार ये महिलाएँ भोजन पकाने में और घर की सफाई करने में कोरेटा की स्वेच्छा से सहायता करती थीं तथा बेबी को भी सँभाल लेती थीं। बहुत-से व्यक्तियों ने स्वेच्छा से मेरे घर पर पहरा देने का भी काम किया और जब भी बॉब विलियम्स उपलब्ध नहीं रहते थे, तब मेरी कार चलाने का जिम्मा भी उठाया। मेरे चर्च की धर्म परिषद् ने भी कोई शिकायत नहीं की, जब कि इन नयी जिम्मेदारियों के कारण चर्च के कामों में व्यवधान भी पड़ता था। मेरे धर्मानुयायियों के साथ रोजमर्रा का जो सम्बन्ध तथा सम्पर्क रहता था, वह करीब-करीब बंद-सा हो गया था और मैं केवल रविवार का उपदेशक मात्र बनकर रह गया था। परन्तु मेरे चर्च के अधिकारियों तथा सदस्यों ने बड़ी खुशी के साथ इस परिस्थिति को स्वीकार किया और नीग्रो-समुदाय की सेवा करने का मुझे अवसर दिया। मेरे चर्च के अनेक लोगों ने अपना समय और धन भी इस आन्दोलन के लिए दिया।

हमारे स्थानीय श्वेतांग मित्र भी इस आन्दोलन का समर्थन करने के लिए आगे आये। ये लोग अक्सर कोरेटा को टेलीफोन करके उत्साह बढ़ानेवाली बातें करते थे। जब हमारे घर पर बम-विस्फोट हुआ था, तब बहुत-से परिचित और अपरिचित श्वेतांग मित्र इस घटना पर खेद

प्रकट करने के लिए घर पर आये थे। कभी-कभी डाक से भी मॉण्ट-गोमरी के श्वेतांग नागरिकों के पत्र मिलते थे, जिनमें लिखा रहता था : "बढ़ते चलिये, हम शत प्रतिशत आपके साथ हैं।" इन पत्रों पर अक्सर हस्ताक्षर की जगह लिखा रहता था—"एक श्वेतांग मित्र।"

हमारे घर पर बम-विस्फोट किये जाने के बाद यह भी एक बड़ी दिलचस्पी की बात हुई कि टेलीफोन पर दी जानेवाली धमकियाँ बहुत कम हो गयीं। परन्तु यह तूफान के बाद की एक क्षणिक शान्ति मात्र साबित हुई। कुछ महीनों के बाद इन धमकियों का आना अपने पूरे जोर के साथ प्रारम्भ हो गया। हमारा रात को सो सकना भी कठिन हो गया था। आखिरकार हमने टेलीफोन कम्पनी को आवेदन दिया कि हमारे टेलीफोन का नम्बर 'डाइरेक्टरी' में प्रकाशित न करें। जब हमारा आवेदन स्वीकार हो गया तो हमने अपना टेलीफोन नंबर चर्च के सदस्यों, मॉण्टगोमरी विकास संगम के कार्यकर्ताओं और देशभर में फैले हुए अपने मित्रों को भेज दिया। यद्यपि कुछ लोगों का कहना था कि उक्त धमकियों के लिए हमारे परिचित लोग ही जिम्मेदार थे, तथापि टेलीफोन डाइरेक्टरी में से अपना नम्बर हटवा देने के बाद हमें उस तरह की शत्रुतापूर्ण बातें फिर से सुनने को नहीं मिलीं। उस तरह के पत्र तो अवश्य ही लगातार आते रहे, परन्तु मेरे सचिव उन पत्रों को मेरे सामने ही नहीं आने देते थे।

जब हमारे विरोधियों ने यह समझ लिया कि हिंसात्मक तरीकों से हमारे आन्दोलन को बन्द नहीं किया जा सकता तो उन्होंने व्यापक पैमाने पर नीग्रो लोगों की गिरफ्तारियाँ शुरू कर दीं। ९ जनवरी को ही मॉण्टगोमरी के एक वकील ने अखबारों में पत्र लिखकर एक पुराने कानून की याद लोगों को दिलायी, जिसके अनुसार किसी भी प्रकार का बहिष्कार गैरकानूनी था। उसने परिच्छेद १४, विभाग ५४ की धारा का सन्दर्भ दिया था, जिसमें यह हिदायत दी गयी है कि अगर दो या उससे अधिक व्यक्ति किसी कानून-सम्मत व्यापार को बन्द करवाने का या

उसमें बाधा पहुँचाने का षड्यंत्र करेंगे तो वे दुर्व्यवहार करने के अपराधी होंगे। १३ फरवरी को मॉण्टगोमरी जिले के 'ज्यूरी' इस बात का निर्णय करने के लिए बुलाये गये कि जो नीग्रो बसों का बहिष्कार कर रहे हैं, उन पर उक्त कानून तोड़ने का आरोप लगाया जा सकता है या नहीं। एक सप्ताह तक न्यायालय में बहस चलने के बाद 'ज्यूरी' ने, जिसमें १७ श्वेतांग और १ नीग्रो व्यक्ति थे, यह निर्णय दिया कि बस-बहिष्कार गैरकानूनी है और १०० से भी अधिक व्यक्तियों पर इस कानून को तोड़ने का अभियोग लगाया गया। मेरा नाम तो इस सूची में आना ही था।

जब नीग्रो आन्दोलनकारियों पर अभियोग लगाया जा रहा था, उस समय मैं एक व्याख्यानमाला के सिलसिले में नाशविल नगर में स्थित फिस्क विश्वविद्यालय गया हुआ था। उन दिनों मैं प्रतिदिन तीन बार टेलीफोन पर मॉण्टगोमरी से बात करता था, ताकि वहाँ पर चलनेवाली समस्त गतिविधियों से पूरी तरह परिचित रह सकूँ। मैंने इन अभियोगों के बारे में पहली बार २१ फरवरी को श्री राल्फ एबरनाथी से टेलीफोन पर जाना। उन्होंने कहा कि २२ फरवरी की सुबह से गिरफ्तारियाँ होनी प्रारम्भ हो जायेंगी। मुझे यह पता ही था कि सबसे पहली गिरफ्तारी राल्फ की ही होनेवाली है। मैंने उनको कहा कि मैं भी उस समय तुम्हारे साथ रहूँगा। वे सदा की भाँति ही निर्द्वन्द्व थे। मैंने उनसे कहा कि मैं अपने नाशविल के कार्यक्रम को स्थगित करके अगले दिन मॉण्टगोमरी पहुँच रहा हूँ।

मैंने सुबह सबसे पहले उड़नेवाले विमान में स्थान सुरक्षित करवा लिया। रातभर मैं मॉण्टगोमरी के लोगों के बारे में सोचता रहा। क्या ये व्यापक गिरफ्तारियाँ इतनी भयावनी होंगी कि हमारे आन्दोलनकारी उनसे डरकर आन्दोलन को वापस लेने की बात सोचेंगे? मैं जानता था कि हमारे आन्दोलनकारियों को कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था। पिछले ११ सप्ताह से वे लोग पैदल चल रहे थे। अपनी सुख-सुविधाओं से वंचित रह रहे थे और अपनी कारों को दूसरों की

सुविधा के लिए दौड़ा रहे थे। वे जगह-जगह पर धमकाये और डराये जा रहे थे। अब इन सबसे भी ऊपर वे गिरफ्तार किये जा रहे थे! क्या वे इस संघर्ष में हार जायेंगे? मुझे इस बात की चिन्ता होने लगी। क्या वे निराशा के वश में होकर पस्त हो जायेंगे? क्या ये गिरफ्तारियाँ हमारे आन्दोलन को समाप्त कर देंगी?

मैं सवेरे जल्दी उठा। मैंने फिस्क विश्वविद्यालय के अधिकारियों को सूचित किया कि मॉण्टगोमरी की परिस्थितियों को देखते हुए मुझे अपने कार्यक्रम में परिवर्तन करना पड़ेगा और तुरन्त वहाँ पहुँचना होगा। उसके बाद मैं विमान से अपनी पत्नी और पुत्री को लेने के लिए अटलाण्टा गया। मैंने उनको अपने माता-पिता के घर उतने समय के लिए छोड़ दिया था, जब तक कि मैं नाशविल में रहता। मेरी पत्नी और मेरे माता-पिता मुझे हवाई अड्डे पर मिले। मैंने उनको टेलीफोन पर मॉण्टगोमरी के आन्दोलनकारियों पर लगाये गये अभियोगों की जानकारी दे दी थी और उन्होंने रेडियो पर भी यह समाचार सुन लिया था। कोरेटा सदा की भाँति निरुद्विग्न थी। परन्तु मेरी माँ और पिताजी के चेहरों पर गहरी घबराहट छायी हुई थी।

मेरे पिताजी को अपने-आपके बारे में तो कभी कोई भय नहीं रहता था। परन्तु मेरे और मेरे परिवार के बारे में वे बहुत डर रहे थे। जब से आन्दोलन प्रारम्भ हुआ, तब से उन्होंने अटलाण्टा और मॉण्टगोमरी के बीच का रास्ता अच्छी तरह रौंद डाला था, ताकि वे हमारे पास ज्यादा-से-ज्यादा समय तक रह सकें। कई बार वे हमारे आन्दोलन की कार्य-कारिणी समिति की सभाओं में भी उपस्थित रहे थे तथा उन्हें हमारे आन्दोलन के औचित्य में कोई सन्देह नहीं था। फिर भी यह दृढ़ और साहसी व्यक्ति अब ऐसे एक बिन्दु पर पहुँच गया था, जहाँ कि उसके लिए अपने आँसुओं को रोक सकना कठिन हो गया था। मेरी माँ भी बहुत परेशान हो गयी थी। बम-विस्फोट की घटना के बाद तो उसके मन पर इतना दबाव पड़ा कि वह बीमार हो गयी और डॉक्टरों की

सलाह से उसे लम्बे समय तक बिस्तर में रहना पड़ा। उसके बाद से ही यह अक्सर बीमार रहने लगी। मेरी माँ और पिता के हावभाव देखकर मुझे यह समझने में देर नहीं लगी कि वे इस सारी परिस्थिति के कारण बहुत तनाव महसूस कर रहे हैं। जब वे हवाई अड्डे पर मेरी तरफ आ रहे थे, उसी समय उनकी चाल को देखकर मैंने उनकी घबराहट को भाँप लिया था।

जब हम लोग घर की तरफ जा रहे थे, तब कार में पिताजी ने कहा: "तुम्हारे लिए यह बुद्धिमानी की बात नहीं होगी कि तुम इस समय मॉन्टगोमरी जाओ। यद्यपि बहुत-से अन्य लोगों पर अभियोग लगाये गये हैं, तथापि उन लोगों का मुख्य ध्येय तुम्हें गिरफ्तार करने का है। सम्भव है कि वे तुम्हें जेल में बन्द कर दें और ज़मानत तक स्वीकार न करें।" उन्होंने अपनी बात को जारी रखते हुए आगे बताया कि मॉन्टगोमरी के कुछ अधिकारी मेरे बारे में किसी ऐसे सुराग का पता लगाने के लिए अटलान्टा भी आये थे कि जिसके आधार पर मुझे अलबामा राज्य से देश-निकाला दिया जा सके। मॉन्टगोमरी के ये अधिकारी जब अटलान्टा के पुलिस अधिकारियों से पूछताछ करने आये तो पुलिस के उच्च अधिकारी, श्री जेन्किन्स ने उन्हें बताया कि अटलान्टा की पुलिस के पास मार्टिन के सम्बन्ध में किसी भी तरह के कागज़ात नहीं हैं। मेरे पिताजी ने फिर से चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा: "इन सब घटनाओं से साफ़ मालूम देता है कि वे तुम्हें पकड़ना चाहते हैं।"

मैंने पिताजी की बात ध्यानपूर्वक सुनी, हालाँकि मैं उनके सुझावों को स्वीकार करके अटलान्टा में ही रुकने की बात किसी भी तरह नहीं मान सकता था। मैं अपने माता-पिता की भावनाओं का पूरी तरह आदर कर रहा था। उनकी घबराहट को देखकर मुझे चिन्ता हो रही थी। मुझे ऐसा महसूस हो रहा था कि अगर मैं इस आन्दोलन में इसी तरह जुटा रहूँगा तो मेरे माता-पिता मानसिक कष्टों के शिकार होंगे। लेकिन अगर मैं इस आन्दोलन से हट जाता हूँ तो मैं अपनी अंतरात्मा की पुकार

के विरुद्ध जाऊँगा। मेरे मन में सदैव इस बात का दुःख बना रहेगा कि किसी आन्दोलन की जिम्मेदारी को अंत तक निभाने का नैतिक साहस मैं नहीं दिखा सका। मेरे मन के इस अंतर्द्वंद्व को वह नहीं समझ सकता, जिसने अपने प्रियजनों की उन स्नेहभरी आँखों को नहीं देखा है, यह जानते हुए कि उसके सामने एक खतरनाक कदम उठाने के अलावा कोई विकल्प भी नहीं है; भले ही यह कदम उन स्नेहमयी आँखों को संताप पहुँचानेवाला होगा।

मेरे पिताजी ने मुझे बताया कि उन्होंने कुछ निकटस्थ मित्रों को इस सम्बन्ध में चर्चा करने के लिए दोपहर के समय घर पर बुलाया है। मुझे भी ऐसा लगा कि इस तरह के विचार-विमर्श से पिताजी की चिन्ताओं को कम करने में मदद मिलेगी। इसलिए मैंने दोपहर तक अटलाण्टा में ही ठहरकर हमारे परिवार के मित्रों से बातचीत करने का निर्णय किया। दोपहर को जो लोग घर पर आये, उनमें से प्रसिद्ध वकील श्री ए० टी० वाल्डन; दो प्रसिद्ध व्यापारी—श्री सी० आर० येट्स और श्री टी० एम० एलेक्जेंडर; 'अटलाण्टा डेली वर्ल्ड' के संपादक, श्री सी० ए० स्कॉट; ए० एम० ई० चर्च के बिशप, श्री शर्मन एल० ग्रीन; मोरहाउस कॉलेज के अध्यक्ष श्री बेंजामिन ई० मेज और अटलाण्टा विश्वविद्यालय के अध्यक्ष, श्री रुफुस ई० क्लीमेंट के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इस चर्चा में कोरेटा और मेरी माँ भी उपस्थित थीं।

पिताजी ने उपस्थित मित्रों को अपनी बात बताते हुए कहा : "मैं आप लोगों की सलाह का आदर करता हूँ और इसीलिए मैंने आप लोगों को यहाँ बुलाया है। इस समय जो परिस्थिति है, उसे देखते हुए मार्टिन को मॉण्टगोमरी लौटना चाहिए या नहीं, इस सम्बन्ध में मैं आप लोगों की राय जानना चाहता हूँ।" पिताजी ने संक्षेप में पिछला इतिहास बताते हुए बताया कि मुझे मॉण्टगोमरी से बाहर निकालने के कई प्रयत्न किये जा चुके हैं। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि मेरे साथ मॉण्टगोमरी में कुछ भी गुजर सकता है, इस भय के

जेल के आसपास लोगों को देखकर ऐसा लगता था, मानो आज कोई छुट्टी का दिन है। रास्ते में श्री रास्टन ने मुझे बताया कि किस तरह पिछले दिन गिरफ्तार होने के लिए लोगों की भीड़ लग गयी थी। ऐसा लग रहा था, मानो किसीको भी गिरफ्तारी का डर नहीं है। किसीने भी अपनी गिरफ्तारी को टालने की कोशिश नहीं की। बहुत-से नीग्रो नागरिक जिलाधिकारी के दफ्तर में इस बात की पूछताछ करने के लिए गये थे कि गिरफ्तार किये जानेवालों की सूची में उनका भी नाम है या नहीं और जब उनका नाम सूची में नहीं मिला तो वे बहुत निराश भी हुए। डरपोक लोग भी उस दिन साहसी बन गये थे। जो लोग कानून के सामने अब तक काँपा करते थे, वे भी उस दिन आजादी के आदर्श के लिए गिरफ्तार होने में गर्व महसूस कर रहे थे। चारों तरफ इस तरह के एकता के वातावरण के कारण उत्साहित होकर मैं बड़े दृढ़ कदमों के साथ जेल की ओर गया। जब मुझे कैदी होने का नम्बर मिल गया और मेरा फोटो तथा अँगूठे का निशान ले लिया गया, तब मेरे चर्च के एक सदस्य ने मेरी जमानत भरी और मैं वापस घर आ गया।

हम लोगों के मुकदमे की सुनवाई की तारीख १९ मार्च थी। देश-भर से हमारे मित्र उस दिन मॉन्टगोमरी पहुँचे, ताकि वे मुकदमे की सुनवाई के समय हमारे साथ रह सकें। न्यूयार्क जितने दूर के स्थानों से पादरी भी आ गये थे। नीग्रो संसद्-सदस्य श्री चार्ल्स सी० डिग्स भी यहीं थे। अमेरिका, भारत, फ्रान्स और ग्रेट ब्रिटेन के अनेक पत्र-प्रति-निधि इस मुकदमे की रिपोर्ट लेने के लिए यहाँ उपस्थित हो गये थे। उस छोटे-से न्यायालय के हॉल में तथा आसपास पाँच सौ से भी अधिक नीग्रो मुकदमे की कार्रवाई सुनने के लिए खड़े थे। बहुत-से लोगों ने अपने कोट के कॉलर में 'क्रॉस' लगा रखा था, जिस पर लिखा था—'हे ईश्वर, उन्हें क्षमा करो!'

न्यायाधीश श्री यूजीन कार्टर ने न्यायालय में व्यवस्था कायम की और प्रारम्भिक कार्रवाई के बाद मुझे पहला प्रतिवादी चुना गया। चार

दिनों तक मैं न्यायालय की बहस सुनता रहा और फैसले की प्रतीक्षा करता रहा। राज्य की ओर के वकील श्री विलियम एफ० थेटफोर्ड ने यह सिद्ध करने की कोशिश की कि मैंने गैरकानूनी रूप से बस-बहिष्कार आन्दोलन को संगठित किया है और इस तरह कानून-भंग करने का अपराधी हूँ। हमारी ओर के वकीलों—श्री आर्थर शोर्स, श्री पीटर हॉल, श्री ओज़ेल बिलिंग्सले, श्री फ्रेड ग्रे, श्री चार्ल्स लैंगफोर्ड और श्री रॉबर्ट कार्टर—ने यह साबित करने की कोशिश की कि मेरे विरुद्ध दिये गये प्रमाण इस बात को सिद्ध करने के लिए अपर्याप्त हैं कि मैंने अलबामा राज्य के बहिष्कार-विरोधी कानून का भंग किया है। अगर यह सिद्ध हो भी जाय तो भी इस बात के तो प्रमाण हैं ही नहीं कि नीग्रो लोगों ने जो बस-बहिष्कार किया, उसके पीछे कोई न्यायपूर्ण उद्देश्य अथवा कानून-सम्मत साधन नहीं है।

मुकदमे की पूरी कार्रवाई में हमारी ओर से २८ गवाहों को उपस्थित किया गया। मैंने इन गवाहों की बातों को कुछ दुःख और कुछ आदर की मिश्रित प्रतिक्रिया के साथ सुना। गवाही देनेवाले, जिनमें कि अधिकतर अशिक्षित थे, बहुत ही सीधे-सादे लोग थे। वे लोग गवाही देने के कटघरे में बिना किसी भय के खड़े थे और अपनी बात कह रहे थे। वे सरकारी वकील और न्यायाधीश की आँखों में एक अनुपम साहस और प्रतिष्ठा की भावना के साथ झाँक रहे थे।

दिल को सबसे अधिक छूनेवाली गवाही शायद श्रीमती स्टेला ब्रुक्स की थी। उसके पति एक बस में चढ़े। किराया देने के बाद बस के ड्राइवर ने आदेश दिया कि बस से वापस उतरकर वे पीछेवाले दरवाजे से चढ़ें। उसके पति ने भीड़ से भरी हुई बस की ओर देखा और पीछे की तरफ कोई जगह नहीं है, यह देख लेने के बाद उसने कहा कि अगर ड्राइवर उसके पैसे वापस कर दे तो वह बस से उतरकर पैदल ही चला जायगा। ड्राइवर ने पैसे वापस करने से इनकार कर दिया। इस पर उन दोनों के बीच बहस छिड़ गयी। ड्राइवर ने पुलिस को बुला

लिया। पुलिस ने श्री ब्रुक्स को समझाया। परन्तु श्री ब्रुक्स ने कहा कि जब तक उनके पैसे वापस नहीं मिलेंगे, तब तक वह बस से नहीं उतरेंगे। पुलिस ने श्री ब्रुक्स पर गोली चला दी। यह सब कुछ इतना अचानक हुआ कि सभी लोग दंग रह गये! श्री ब्रुक्स इतने जख्मी हुए कि उनकी मौत हो गयी।

श्रीमती मार्था वाकर ने गवाही देते हुए उस दिन की घटना बतायी, जब वह अपने अन्धे पति को बस से उतार रही थी। श्रीमती मार्था बस की सीढ़ियों से उतर चुकी थी और उनके पति उतर ही रहे थे कि बस-ड्राइवर ने बस के दरवाजे को बन्द करनेवाला बटन दबा दिया और बस चालू हो गयी, श्रीमती मार्था के पति का पाँव दरवाजे में ही फँस गया। श्रीमती मार्था ने चिल्लाकर बस को रोकने का निवेदन किया, पर बस नहीं रुकी। जब तक श्रीमती मार्था के पति अपने पैर को बस के दरवाजे से बाहर नहीं निकाल पाये, तब तक वे बस के साथ ही घिसटते चले गये। श्रीमती मार्था ने इस दुर्घटना की शिकायत बस-कम्पनी के अधिकारियों तक पहुँचायी, किन्तु उस पर कोई ध्यान नहीं दिया गया।

इस तरह की कहानियाँ सामने आती ही गईं। श्रीमती बेसी ब्रुक्स ने अपनी गवाही में कहा कि उसने एक नीग्रो यात्री को बस-ड्राइवर द्वारा धमकाये जाते हुए देखा; क्योंकि उसके पास बस का किराया देने के लिए खुदरा पैसे नहीं थे। श्रीमती बेसी ने बताया कि उस नीग्रो यात्री को बस से नीचे उतार देने के लिए ड्राइवर ने पिस्तौल तान ली थी। श्रीमती डेला पर्किन्स ने अपनी गवाही में बताया कि एक ड्राइवर ने उन्हें 'सड़ा काला बन्दर' कहकर पुकारा था।

मैं अपनी उस प्रसन्नता को सदैव याद रखूँगा, जब कि एक अनपढ़, लेकिन असाधारण रूप से बुद्धिमान् महिला श्रीमती जॉर्जिया गिल्मोर ने न्यायालय को बताया कि किस तरह एक बस-ड्राइवर ने उनसे कहा कि किराये का पैसा देने के बाद वह वापस उतरकर पिछले दरवाजे से बस में चढ़ें। परन्तु इससे पहले कि श्रीमती गिल्मोर पिछले दरवाजे से

बस में चढ पाती, ड्राइवर ने बस को रवाना कर दिया। उसने न्यायाधीश श्री कार्टर की ओर मुखातिब होकर कहा : "जब वे लोग पैसे गिनते हैं, तब तो नीग्रो लोगों के और गोरे लोगों के पैसों में कोई भेदभाव नहीं बरतते !"

२२ मार्च, बृहस्पतिवार की दोपहर को दोनों पक्षों की गवाहियाँ समाप्त हुईं और सबकी आँखें न्यायाधीश श्री कार्टर की ओर लगी हुई थीं। मेरे मुकदमे पर अपना फैसला देते हुए बिना रुके वे बोल गये : "मैं यह घोषणा करता हूँ कि अभियुक्त हमारे राज्य के बहिष्कार-विरोधी कानून तोड़ने का अपराधी है।" सजा के रूप में अभियुक्त या तो न्यायालय के खर्च के अलावा पाँच सौ डालर का जुर्माना भरे या तीन सौ छियासी दिनों के सश्रम कारावास की सजा भुगते। न्यायाधीश श्री कार्टर ने घोषणा की कि वे अभियुक्त से न्यूनतम जुर्माना वसूल करने का आदेश दे रहे हैं, क्योंकि अभियुक्त ने हिंसात्मक कार्रवाइयों को रोकने का प्रयत्न किया है। अन्य नीग्रो अभियुक्तों के मुकदमे की सुनवाई भी जारी रही। इन अभियुक्तों पर भी वही आरोप था, जो कि मुझ पर लगाया गया था। इनकी संख्या नवासी रह गयी थी।

कुछ ही मिनट में अनेक मित्रों ने मेरी जमानत भरने के लिए इच्छा प्रकट की और वकीलों ने न्यायाधीश को बताया कि इस मुकदमे की अपील की जायगी। न्यायालय के चारों ओर खड़े हुए लोगों की आँखें आँसुओं से भर गयी थीं। बहुत-से लोग सिर झुकाये हुए जा रहे थे। मेरे मुकदमे के अन्त में मैं न्यायाधीश श्री कार्टर के धर्म-संकट पर सहानुभूति का अनुभव कर रहा था। मुझे दंडित करने के कारण उनको पूरे राष्ट्र और विश्व के जनमत की ओर से धिक्कार का सामना करना होगा। अगर मुझे दण्डित न करते तो उन्हें स्थानीय समुदाय और जिन मतदाताओं ने उनको चुना है, उनकी तरफ से धिक्कार का सामना करना होता। मुकदमे की कार्रवाई के दौरान में उनका व्यवहार मेरे प्रति बहुत भद्रतापूर्ण था। उन्होंने जो फैसला दिया, वह शायद उनके ख्याल से

एकमात्र उत्तम रास्ता था। इस मुकदमे के बाद वे आराम लेने के लिए शहर से कहीं बाहर चले गये।

मैं जब न्यायालय से निकला, तब मेरे साथ मेरी पत्नी थी और मेरे मित्र मुझे घेरे हुए चल रहे थे। न्यायालय के सामने ही सैकड़ों नीग्रो और श्वेतांग नागरिक मेरी प्रतीक्षा में खड़े थे। प्रतीक्षा करनेवालों में टेलीविजनवाले तथा प्रेस-फोटोग्राफर भी थे। ज्यों ही मैंने अपना हाथ ऊपर उठाकर लोगों का अभिवादन किया, त्यों ही सब लोगों ने एक स्वर से पुकारते हुए कहा : "ईश्वर आपकी रक्षा करें!" उसके बाद सब लोगों ने पास-बहिष्कार आन्दोलन-सम्बन्धी गीत गाना शुरू कर दिया, जिसका आशय था— "हमारा पास-बहिष्कार चालू रहेगा तथा हम पासों से यात्रा नहीं करेंगे।"

साधारण तौर पर सजा प्राप्त करनेवाला कोई भी व्यक्ति न्यायालय से उदास चेहरा लेकर ही निकलता है, परन्तु मेरे चेहरे पर मुसकान खिली हुई थी। मैं जानता था कि मैं एक घोषित अपराधी हूँ, परन्तु मुझे अपने अपराध पर गर्व था। मैंने अपने लोगों के साथ मिलकर अन्याय के विरुद्ध एक अहिंसक आन्दोलन में भाग लिया, यही मेरा अपराध था। अपने लोगों के साथ मिलकर मैंने प्रतिष्ठा तथा स्वाभिमान को प्राप्त करने के लिए संघर्ष किया, यही मेरा अपराध था। अपने लोगों के लिए जीवन के अनिवार्य अधिकारों की माँग करने के लिए मैं उद्यत हुआ, यही मेरा अपराध था। स्वतंत्रता और प्रसन्नता के साथ रहने और जीने का अधिकार अनिवार्य रूप से और समान रूप से सभी को प्राप्त होना चाहिए। मैं अपने लोगों को यह समझाना चाहता था कि न्याय के साथ सहयोग करना जिस तरह हमारा नैतिक कर्तव्य है, उसी तरह अन्याय के साथ असहयोग करना भी हमारा नैतिक कर्तव्य है। और यही मेरा सबसे बड़ा अपराध था।

इस तरह हमारे आन्दोलन को रोकने का यह प्रयत्न भी व्यर्थ साबित हुआ। विरोधियों की इन चालों से हमारे आन्दोलन की समाप्ति होने के

बजाय उसको और अधिक गति तथा प्रचार मिला और नीग्रो-समुदाय में और ज्यादा एकता पैदा हुई। हमारे विरोधी लोग यह समझने में असफल रहे कि नीग्रो-समुदाय की आपस की तकलीफों ने उन्हें नियति की एक चादर से ढँक दिया था। अब हमारे लिए ऐसी परिस्थिति बन गयी थी कि किसी एक नीग्रो भाई का कष्ट पूरे समुदाय का कष्ट माना जाता था।

मार्च महीने की उस बादलभरी दोपहरी मे न्यायाधीश श्री कार्टर ने केवल मार्टिन लूथर किंग, केस नं० ७३९९ को ही दण्डित नहीं किया था; बल्कि मानो मॉण्टगोमरी के प्रत्येक नीग्रो को दण्डित कर दिया था। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि आन्दोलन को अब रोका नहीं जा सकता था। उसने इतना बृहद् आकार धारण कर लिया था कि उसे बन्द करना असम्भव हो गया था। आन्दोलन के सूत्र इतनी मजबूती के साथ जुड़े हुए थे कि उन्हें तोड़ना मुमकिन नहीं था। एकता में अद्भुत शक्ति होती है। अगर कहीं सचमुच एकता हो तो उस एकता को तोड़ने का हर प्रयत्न उसे मजबूत ही बनाता है। पर हमारे विरोधियों ने इस तथ्य को समझा ही नहीं।

हमारे विरोधी पक्ष के लोगों ने यह भी जाहिर कर दिया कि वे जिन नीग्रो लोगों के साथ व्यवहार कर रहे थे, उन्हें वे अच्छी तरह जानते भी नहीं हैं। उन्होंने केवल इतना ही सोचा कि वे लोगों के एक ऐसे झुण्ड के साथ व्यवहार कर रहे हैं, जिन्हें फुसलाया जा सकता है और जो कुछ भी श्वेतांग नागरिक चाहें, वैसा करवाने के लिए मजबूर किया जा सकता है। विरोधियों को यह मालूम नहीं था कि वे ऐसे नीग्रो लोगों के साथ व्यवहार कर रहे हैं, जो पूरी तरह निर्भीक हैं। इसलिए इन विरोधी पक्ष के लोगों की प्रत्येक चाल आखिरकार एक गलती साबित हुई। इसके अलावा और कुछ हो भी नहीं सकता था, क्योंकि उन्होंने 'पुराने नीग्रो' के साथ जिस तरह व्यवहार किया जाता था, उन तरीकों को अपनाया, जब कि वे 'नये नीग्रो' के साथ व्यवहार कर रहे थे।

# आखिर रंग-समन्वय

## ६

बस-बहिष्कार आन्दोलन के प्रारम्भ से ही अधिकांश नीग्रो नेताओं को ऐसा भरोसा था कि कोई-न-कोई समझौता शीघ्र ही हो जायगा। हमारी माँगें बहुत सीमित थीं। वे इतनी लचीली थीं कि रंगभेद-कानून के अन्तर्गत ही उन्हें स्वीकार किया जा सकता था। हम लोगों ने यह समझा था कि अत्यन्त अनुदार श्वेतांग नागरिक भी इन माँगों पर किसी तरह का एतराज नहीं करेंगे। परन्तु ज्यों-ज्यों दिन, सप्ताह और महीने गुजरते गये, त्यों-त्यों हमें यह समझ में आता गया कि हमारा आशावाद गलत आधार पर खड़ा था। सिटी कमीशन के लोगों का अड़ियल रुख, सत्ता बरतने की निर्दय नीति और बम विस्फोट जैसी दुर्घटनाओं ने हमें यह निर्णय करने के लिए बाध्य कर दिया था कि वहाँ से चलनेवाले

रंगभेद को पूरी तरह समाप्त करने के लिए हमें उस पर हमला करना ही होगा। इसलिए इस सवाल पर हमने अपने जिले के संयुक्त राज्य अमेरिका के संघीय न्यायालय में एक मुकदमा दायर करते हुए यह अपील की कि हमारे देश के कानून के चौदहवें संशोधन का बसों में चलनेवाला रंगभेद उल्लंघन करता है। न्यायालय में हमने यह भी अपील की कि वह पैदल चलनेवाले तथा कारों से जाने-आनेवाले नीग्रो लोगों के नागरिक अधिकारों को समाप्त करने की सिटी कमिश्नरों की हरकतों को बन्द करवाये।

हमारी अपील की सुनवाई ११ मई १९५६ को संघीय न्यायालय के तीन न्यायाधीशों के सामने होनी निश्चित हुई। संघीय न्यायालय के सामने उपस्थित होने से हमें अत्यन्त सुविधा का अनुभव हो रहा था। यहाँ पर हमें न्यायपूर्ण वातावरण होने की प्रतीति हो रही थी। दक्षिण के नीग्रो के हृदय में संघीय न्यायालय में उपस्थित होने पर जो आनन्द की भावना रहती है, उसे वह नहीं समझ सकता, जिसने दक्षिणी राज्यों के न्यायालयों में चलनेवाले दुःखद षड्यंत्रों को अपनी आँखों से न देखा हो और अपनी अनुभूतियों से महसूस न किया हो। दक्षिणी राज्यों के न्यायालयों में जानेवाला नीग्रो यह जानता है कि बाजी निश्चित रूप से उसके खिलाफ रहेगी। वह यह भी निश्चित रूप से जानता है कि उसे ऐसे ज्यूरी का सामना करना होगा, जिसका दिमाग पूर्वाग्रह के कारण बँधा हुआ है और वह ऐसे न्यायाधीश के सामने उपस्थित किया जायगा, जो प्रत्यक्ष रूप से पक्षपात करता है। उन न्यायालयों में नीग्रो लोगों पर खुले अत्याचार होते हैं और न्याय पाने की आशा अत्यन्त क्षीण रहती है; परन्तु दक्षिण में बसनेवाला एक नीग्रो जब संघीय न्यायालय में जाता है तो उसे यह उम्मीद रहती है कि कानून के सामने न्याय प्राप्त करने का उसे एक उचित अवसर मिलेगा।

हमारा मुकदमा उन्हीं वकीलों द्वारा दायर किया गया, जिन्होंने न्यायाधीश श्री कार्टर के सामने बस-बहिष्कार के मुकदमें में हमारी ओर

से पेश की थी। इस अवसर पर तीन वकीलों ने पूरी रंगभेद-व्यवस्था के ही कानून-भंग होने के खिलाफ प्रभावशाली तर्क उपस्थित किये। अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था के कानूनी सलाहकार श्री रॉबर्ट कार्टर ने प्राचीन 'प्लेसी'-सिद्धान्त के औचित्य को चुनौती देते हुए उसके विरुद्ध तर्क उपस्थित किये। यह 'प्लेसी'-सिद्धान्त ई० सन् १८९६ में संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय की ओर से घोषित हुआ था, जिसके अनुसार दक्षिणी राज्यों में नीग्रो और गोरे लोगों के लिए अलग-अलग, परन्तु समान सुविधाओं का विधान किया गया था। लेकिन शिक्षा के क्षेत्र में सर्वोच्च न्यायालय ने मई १९५४ में उपर्युक्त सिद्धान्त को बदल दिया था। इसके अलावा अन्य मामलों में 'प्लेसी'-सिद्धान्त रंगभेद की उत्पत्ति था। रंगभेद के कानून में चलनेवाले इस अन्याय और अनिश्चितता पर जबरदस्त हमला करना ही श्री रॉबर्ट कार्टर का उद्देश्य था। इस बीच मॉण्टगोमरी नगर की ओर से बहस करनेवाले वकील यही राग अलापते रहे कि अगर मॉण्टगोमरी की बसों में रंगभेद समाप्त हो जायगा तो यह हिंसा तथा रक्तपात की रणभूमि बन जायगी।

कई घण्टों तक वकीलों की बहस सुनने के बाद न्यायाधीश श्री रीव्स ने मॉण्टगोमरी नगर की ओर से बहस करनेवाले वकीलों की तरफ मुखातिब होकर पूछा : "क्या यह ठीक होगा कि एक आदमी से यह कहा जाय कि तुम अपने कानून-संगत अधिकारों को, अगर वे कानून-संगत अधिकार हों तो, इसलिए छोड़ दो, ताकि दूसरा आदमी कानून भंग न करे ?" जब मैंने न्यायाधीश का यह वाक्य सुना तो मैंने अपने बगल में बैठे हुए श्री राल्फ एबरनाथी तथा दूसरी ओर बैठे हुए श्री [illegible] को कहा : "ऐसा लगता है कि फैसला हमारे अनुकूल ही होने की सम्भावना है।"

तीन सप्ताह तक मुकदमा चलता रहा। ४ जून, १९५६ को फैसला सुनाया गया। दो जज हमारे पक्ष में थे, एक विपक्ष में। बर्मिंघम के न्यायाधीश श्री लिन को छोड़कर बाकी दोनों जजों ने कहा कि बसयात्रा

राज्य का सिटी बसों में रंगभेद-सम्बन्धी कानून अवैधानिक है। इस फैसले पर मॉन्टगोमरी नगर की ओर से बहस करनेवाले वकीलों ने घोषणा की कि वे इस मुकदमे की अपील सर्वोच्च न्यायालय में करेंगे।

अभी तक हमें अपने संघर्ष में पूरी विजय नहीं मिली थी। अभी भी हमें और कई महीनों तक पैदल चलना और कठिनाइयाँ सहना जरूरी था, जब तक कि सर्वोच्च न्यायालय में इस बात का फैसला न हो जाय। परन्तु अब हमारे सामने एक नयी आशा थी। अब केवल थोड़ा समय और गुजारने का ही सवाल था।

हम लोग इसी तरह से सोच रहे थे। परन्तु न्यायालय के फैसले के तुरन्त बाद ही हमारे आन्दोलन पर एक नयी दिशा से खतरनाक मुसीबत आ पड़ी। ११ जून को रेवरेंड यू० जे० फील्ड्स ने अखबारों में यह वक्तव्य प्रकाशित करवाया कि वे मॉण्टगोमरी विकास संगम के मंत्री के पद से त्याग-पत्र दे रहे हैं। श्री फील्ड्स बेल स्ट्रीट बैप्टिस्ट चर्च के पादरी हैं और अत्यन्त युवा हृदय के व्यक्ति हैं। आन्दोलन के प्रारम्भ से ही वे हमारी संस्था के अधिकारी रहे हैं। उन्होंने मॉण्टगोमरी विकास संगम के सदस्यों पर यह आरोप लगाया : "देशभर से बस-बहिष्कार आन्दोलन के लिए आनेवाले धन का दुरुपयोग किया जा रहा है और सदस्यगण उसका उपयोग निजी स्वार्थ के लिए कर रहे हैं। आन्दोलन के नेतागण बड़प्पन के अहंकार से ग्रस्त हैं और आत्म-विज्ञापन में लगे हुए हैं।" उन्होंने यह भी कहा कि जिन उद्देश्यों के लिए मॉण्टगोमरी विकास संगम में वे आये थे, अब यह संस्था उन उद्देश्यों का प्रतिनिधित्व नहीं करती। अब इस आन्दोलन पर थोड़े-से लोग छाये हुए हैं और वे अन्य कार्यकर्ताओं को अपनी प्रसिद्धि के लिए हथियार बना रहे हैं।

जब श्री फील्ड्स ने यह वक्तव्य प्रसारित किया, तब मैं शहर से बाहर गया हुआ था। मैं और कोरेटा एक सम्मेलन में भाग लेने के लिए कैलीफोर्निया गये हुए थे। साथ ही हम यह भी चाहते थे कि आन्दोलन के रोजमर्रा के तनाव से दूर जाकर हम दोनों कुछ दिन साथ रहें

और छुट्टी मनायें। हमारे साथ श्री राल्फ और श्रीमती जुआनिता एबरनाथी भी थे। हमें उक्त समाचार की सूचना रेवरेंड आर० जे० ग्लास्को ने टेलीफोन पर दी। श्री ग्लास्को हमारी संस्था के कार्यालय में सहकारी व्यवस्थापक थे। उन्होंने बताया कि श्री फील्ड्स अपना वक्तव्य देने के पहले जब सायंकालीन आम सभा में आये थे, तब बहुत ही कुपित थे, क्योंकि कार्यकारिणी समिति ने उनको मन्त्रीपद के लिए दुबारा निर्वाचित नहीं किया था। जब श्री फील्ड्स ने अपनी बात आम सभा में रखी तो, उपस्थित लोगों ने सर्वसम्मति से कार्यकारिणी समिति के निर्णय को ही उचित बताया। इस पर तो वे और भी क्रुद्ध हो गये। वे अविलम्ब सभा-त्याग करके अपने त्यागपत्र की घोषणा एवं मॉन्टगोमरी विकास संगम की गतिविधियों पर आक्रमण करने की तैयारी करने चले गये।

यद्यपि यह समाचार सुनकर मुझे विशेष आश्चर्य नहीं हुआ, तथापि इस त्यागपत्र के सम्भाव्य गम्भीर परिणामों पर मेरा ध्यान गया। मैं निश्चित रूप से जानता था कि श्री फील्ड्स के आरोपों में कोई सार नहीं है। फिर भी कुछ लोग उन पर विश्वास कर भी सकते हैं और उसके कारण कुछ लोगों में गलतफहमियाँ भी पैदा हो सकती हैं। सार्वजनिक धन के दुरुपयोग के आरोप के कारण हमारे आन्दोलन को प्राप्त होनेवाली आर्थिक सहायता में कुछ कमी आ सकती है और इस तरह हमारी यातायात-व्यवस्था में भी गड़बड़ी पैदा हो सकती है। इससे भी अधिक मुश्किल यह होगी कि हमारे आंदोलन-विरोधी इस घटना को एक सुअवसर समझकर हमारे धन संग्रह के काम को ठप कर देने के लिए उद्यम करेंगे। इसके अलावा मुझे इस बात की भी चिंता थी कि मॉन्टगोमरी का नीग्रो-समुदाय श्री फील्ड्स के विरुद्ध अपनी उत्तेजना को न जाने किस तरह प्रकट करेगा!

मेरी छुट्टियाँ ठीक से आरम्भ हो पाने के पहले ही इस घटना के कारण समाप्त हो गयीं। मैंने अपने [illegible] को २९ दिन तथा कोरेटा और एबरनाथी दम्पति को साथ ही छोड़ने का आश्वासन देकर मैं तुरन्त

विमान द्वारा मॉण्टगोमरी पहुँचा। जैसी कि मुझे पहले से ही सम्भावना थी, नीग्रो लोगों में तीव्र उत्तेजना थी। कोई भी व्यक्ति श्री फील्ड्स के समर्थन में नहीं था। और उनके आरोप इस अत्युक्तिपूर्ण ढंग से व्यक्त हुए थे कि श्वेतांग लोगों के स्वामित्व में चलनेवाले अखबारों ने भी उन्हें प्रकाशित करने में बहुत कम उत्साह दिखाया। नीग्रो लोग उन्हें या तो 'मूर्ख' बता रहे थे या एक 'काला विश्वासघाती'! उत्तेजना से अभिभूत एक नौकरानी ने कहा : "अगर किसी तरह वह मेरे हाथों में आ जाय तो मैं उसे मसल ही डालूँ!" श्री फील्ड्स के चर्च के लोगों ने भी उन्हें अपने चर्च से हटा दिया। (बाद में वे वापस ले लिये गये।) नीग्रो-समाज में सब जगह उनके प्रति विरोधी वातावरण फैला हुआ था।

सौभाग्य से श्री फील्ड्स ने अनेक लोगों के सामने यह स्वीकार कर लिया था कि उन्होंने जो कुछ किया, उसके लिए वे अफसोस कर रहे हैं। १८ जून को बहुत सबेरे मेरे टेलीफोन की घंटी बजी। श्री फील्ड्स को यह ज्ञात हो गया था कि मैं बाहर से वापस आ गया हूँ। इसलिए वे मुझसे मिलना चाहते थे। वे जब मेरे घर पर आये, तो उनका चेहरा बहुत गम्भीर था और वे जल्दी ही अपने मुद्दे पर पहुँचकर अपनी बात कहने लगे।

"मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि मैंने नीग्रो नेताओं पर जो आरोप लगाये हैं, उनमें आप नहीं हैं। मेरे हृदय में आपके समन्वयवादी व्यक्तित्व के प्रति सदैव सम्मान रहा है और आज भी है। परन्तु हमारी संस्था में कई ऐसे भी सदस्य हैं, जिन्हें मैं कतई पसन्द नहीं करता और उनके साथ मेरी कभी नहीं पटी।"

मैंने बीच में ही टोकते हुए उनसे कहा : "क्या आपका यह मतलब है कि आपके आरोपपूर्ण वक्तव्य का जन्म आपके तथा कार्यकारिणी के अन्य एक-दो सदस्यों के बीच के आपसी मनमुटाव के कारण हुआ?"

"हाँ", उन्होंने स्वीकार किया : "मैं समझता हूँ कि आपका ख्याल सही है।" मैंने उनको सार्वजनिक धन के दुरुपयोग के आरोप के बारे में पूछा कि अगर कहीं ऐसी बात हो तो मैं उसे जानना चाहता हूँ।

श्री फीन्ड्स ने निराशाभरे शब्दों में कहा : "मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मुझे धन के दुरुपयोग की एक भी घटना मालूम नहीं है। मैंने अपना वक्तव्य क्रोध के क्षणों में दिया था। मुझे ऐसा महसूस हुआ था कि कार्यकारिणी ने मेरे साथ दुर्व्यवहार किया है और उसका बदला लेने के लिए ही मैंने यह वक्तव्य दिया था।"

अब यह स्पष्ट हो गया था कि श्री फीन्ड्स तिरस्कार से भी अधिक दया के पात्र थे। मैंने उनसे पूछा कि क्या वे यही बात सार्वजनिक आम सभा में सब लोगों के सामने कह सकेंगे? थोड़ी आनाकानी के बाद उन्होंने ऐसा करना स्वीकार कर लिया।

उस दोपहर को करीब तीन बजे ही वेस्लियन मेथडिस्ट चर्च में लोग इकट्ठे होने लगे। पाँच बजे तक तो चर्च लोगों से भर गया था। उस समय चारों ओर कटुता का एक ऐसा वातावरण था, जिसके हम अभ्यस्त नहीं थे। जब करीब साढ़े पाँच बजे श्री फीन्ड्स आकर मेरे पास बैठे, तब भीड़ में से रोषभरी आवाजें आने लगीं। किसी को यों कहते हुए मैंने सुना कि "देखो, यह शख्स! रेवरेंड सिम के बिल्कुल बगल में बैठा है।"

मेरे सामने दो तरह की बातें लोगों को समझाने का उत्तरदायित्व था। एक तो यह कि सार्वजनिक धन का कोई दुरुपयोग नहीं किया गया है और हमारी संस्था की आर्थिक परिस्थिति अभी भी मजबूत तथा सुरक्षित है। दूसरा यह कि हमें श्री फीन्ड्स की धृष्टता को क्षमा कर देना चाहिए और उन्हें अपनी बात कहने का अवसर देना चाहिए। मैंने सबसे पहले प्रथम पहलू की ओर ध्यान दिया।

मैंने कहा कि गोल्डकोस्टवासी विकास मंडल के काम की जानकारी, मेरा ख्याल है, मुझे भी उतनी तो है ही, जितनी कि गोल्डकोस्टवासी के किसी भी अन्य नागरिक को होगी। मैं आत्मविश्वास के साथ कह सकता हूँ कि मुझे धन के दुरुपयोग की एक भी घटना का ज्ञान नहीं है। हमारी कार्यसमिति में ऐसे ईमानदार लोग हैं, जिनके ऊँचे चरित्र की धाक लोगों में हमारे समाज में जमी हुई है तथा जिनके चरित्र पर कोई भी

अंगुली नहीं उठा सकता। हमारी अर्थ-समिति पर मुझे पूर्ण विश्वास है तथा जिन्होंने देशभर में चन्दा एकत्रित करने की अपीलें की हैं, उन पादरियों के बारे में भी मुझे कोई सन्देह नहीं है।

'अपने-आपको बड़ा बनाने का' जो आरोप लगाया गया था, उसका भी मैंने खण्डन किया। मैंने कहा : "यह सच है कि कुछ नीग्रो नेताओं ने देश में और विश्व में भी यश प्राप्त किया है। लेकिन इस यश-प्राप्ति से केवल छिछले मस्तिष्कवाले लोग ही उत्तेजना महसूस करेंगे। इस तरह का यश कोई स्थायी चीज नहीं है। उस यश के लिए गर्व करने से कोई लाभ भी नहीं है। यह यश आज मिल सकता है और कल जा भी सकता है। आज अगर श्रीमती आथरिन ल्यूसी को अखबारों में ज्यादा स्थान मिलता है, तो कल वह श्री गस कोर्ट्स को मिल सकता है। आज अगर श्री इमेट टिल के नाम का ज्यादा प्रचार है, तो कल मार्टिन लूथर किंग के नाम का ज्यादा प्रचार हो सकता है और परसों किसी तीसरे को अधिक यश मिल सकता है। जो भी व्यक्ति यश-लिप्सा का शिकार होगा, वह यश पाने का सच्चा अधिकारी नहीं हो सकता और अंत में उसे निराशा का सामना करना पड़ेगा।"

मैंने अपनी बात जारी रखते हुए कहा : "किसी भी आन्दोलन के नेतृत्व के कारण जो आदर और यश प्राप्त होता है, वह चित्र का केवल एक पहलू है। यह बात भुला नहीं दी जानी चाहिए कि आन्दोलन के नेताओं को जितनी अधिक प्रसिद्धि प्राप्त हुई है, उतनी ही अधिक जिम्मेदारी का बोझ भी उन पर आया है और उन्हें उतने ही परिमाण में अपनी सुख-सुविधाओं का त्याग भी करना पड़ा है।"

श्रोताओं ने मेरी इन बातों को बड़ी सहानुभूति के साथ सुना। परन्तु जब मैंने श्री फील्ड्स से सम्बद्ध बात कहना प्रारम्भ किया, तब मैंने देखा कि लोगों के चेहरों पर असन्तोष की झलक थी तथा वे मेरी बात को अस्वीकार करने के रूप में फुसफुसा रहे थे। मैंने उनके वक्तव्य

के प्रति स्पष्ट रूप से खेद प्रकट करते हुए कहा : "निश्चय ही श्री पीन्ड्रग के वक्तव्य ने बहुत सी अनावश्यक परेशानियाँ खड़ी कर दी हैं।"

"रेवरेंड, आपने ठीक कहा।" किसीने सभा के बीच से पुकारा।

मैंने अपनी बात जारी रखते हुए कहा : "लेकिन हमें इस परिस्थिति का सामना भी उसी भद्रता और अनुशासनशीलता के साथ करना चाहिए, जिस तरह कि भूतकाल में भी बहुत-सी कठिन परिस्थितियों के समय हम करते आये हैं। कृपया भूलिये नहीं कि हम लोगों ने अहिंसात्मक पद्धति को अपनाने की प्रतिज्ञा की है। अहिंसा का अर्थ केवल बाहरी शारीरिक हिंसा से बचना ही नहीं है, बल्कि आन्तरिक अथवा मानसिक हिंसा से भी बचना है। 'किसीको मारो मत', इतना ही पर्याप्त नहीं है; बल्कि 'किसीसे घृणा भी मत करो'। इस अहिंसा के सिद्धान्त की चेतना में मैं आप लोगों से निवेदन करता हूँ कि आप लोग रेवरेंड पीन्ड्रग को क्षमा कर दें।" मैंने देखा कि कुछ लोगों ने मेरी बात को सिर हिलाकर अस्वीकार कर दिया है, पर मैंने बोलना बन्द नहीं किया : "हम सब लोग जानते हैं कि मनुष्य एक कमजोर प्राणी है। हम सभी ने अपने-अपने जीवन में गलतियाँ की हैं। हम सभी के जीवन में ऐसे क्षण आये हैं, जब हमारी भावुकता ने हमको दबा लिया हो। आज इस समय हम लोगों में से कुछ व्यक्ति यहाँ हमारे एक भाई पर पत्थर बरसाने के लिए आये हैं, क्योंकि उसने एक गलती की है।" मैं एक मिनट रुका और तब मैंने ईसामसीह के शब्दों को दुहराया : "जिसने कभी कोई पाप न किया हो, वही पहला पत्थर चलाये।" इन शब्दों के साथ पूरे सभा-भवन में एक खामोशी छा गयी।

अन्त में मैंने अपव्ययी पुत्र का दृष्टान्त देते हुए कहा : "क्या हम उस बड़े भाई की तरह दण्ड देनेवाले बनेंगे या ईसामसीह के उपदेशानुसार उस पिता का अनुसरण करेंगे, जिसने प्रेम और क्षमा का प्रदर्शन किया ?"

जब श्री फील्ड्स बोलने के लिए खड़े हुए, तो उन्हें एक शान्त सम्भ्रम-पूर्ण वातावरण मिला, जब कि उन्होंने ऐसी अपेक्षा की थी कि उन्हें खड़े होते ही धिक्कार की आवाजें सुनने को मिलेंगी। उन्होंने आरम्भ में प्रार्थना की : "हे ईश्वर, हमें प्रतिदिन इस तरह का जीवन जीने में सहायता करो कि प्रार्थना के लिए जब हम घुटने टेकें, तब हमारी प्रार्थना दूसरों के हित के लिए हो।..." श्रोताओं ने एक स्वर और ऊँची ध्वनि से 'आमीन' (तथास्तु) कहा। उसके बाद श्री फील्ड्स ने अपनी गलती के लिए माफी माँगी और श्रोताओं को यह विश्वास दिलाया कि उनके पास ऐसा कोई प्रमाण नहीं है कि मॉण्टगोमरी विकास संगम ने सार्वजनिक धन का दुरुपयोग किया है। जब उन्होंने अपनी बात समाप्त की, तब मैंने देखा कि श्रोतागण काफी प्रभावित हो चुके थे। श्री फील्ड्स जब सभा-मंच से विदा हुए तो लोगों ने जोरों से उनका अभिनन्दन किया।

इस तरह अहिंसा ने फिर से विजय पायी। एक ऐसी परिस्थिति, जिसके कारण बहुत-से लोगों ने ऐसा सोचा था कि मॉण्टगोमरी विकास संगम का अन्त हो जायगा, इस तरह से समाप्त हुई कि हमारी संस्था पूरी तरह से एकता के सूत्र में बँध गयी।

गर्मियों ने विदा ली और शरद् ऋतु के ठंडे और छोटे दिन आये। हमारी अपील पर सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय प्राप्त होना अभी भी बाकी था। इस बीच विरोधियों की ओर से हमारी अपनी यातायात-व्यवस्था को भंग करने के प्रयत्न चलते रहे। बीमा कम्पनीवालों ने अचानक रातोंरात यह निर्णय किया कि हमारी स्टेशन-वैगन मोटरों का बीमा न किया जाय। उनका कहना था कि इन कारों का बीमा करना बहुत खतरनाक होगा। इन मोटरों का जवाबदेही (लाइबिलिटी) बीमा चार महीने के समय में चार बार रद्द किया गया। दुर्घटना (कोलीज़न) सम्बन्धी बीमा में कोई दिक्कत इसलिए नहीं आयी, क्योंकि उसका सम्बन्ध एक नीग्रो बीमा कम्पनी के साथ था।

स्टेशन-वैगनों का बीमा करनेवाली कम्पनी ने आखिर में हम लोगों को सूचित कर दिया कि १५ सितम्बर तक हमारा बीमा रद्द कर दिया जायगा। उसी शहर की तरफ से हमारे एक मित्र ने सुझाया कि 'लॉयड्स ऑफ लन्दन' नाम की कम्पनी हमारा बीमा कर सकती है। कुछ दिन बाद मैंने इस सम्बन्ध में अटलांटा के एक बीमा अधिकारी, श्री टी० एम० अलेक्जेंडर से बात की। उन्होंने इस सुझाव को पसंद किया और हमारे लिए उक्त कम्पनी से सम्पर्क स्थापित करने का यत्न किया। थोड़े ही दिन में उन्होंने हमें सूचित किया कि 'लॉयड्स ऑफ लंदन' हमारी मोटरों का बीमा कर लेगी। उसके बाद हमारी बीमा-सम्बन्धी सभी समस्याएँ हल हो गयीं।

लेकिन हमें इससे भी बड़ी दिक्कतों का सामना करना था। नगर के अधिकारियों ने हमारी यातायात व्यवस्था के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई करने का निश्चय किया। ३० अक्तूबर, १९५६ को नगरपिता, श्री गेल ने एक प्रस्ताव पारित करके अपने कानून-विभाग को सूचित किया: "एक ऐसा मुकदमा तैयार किया जाय, जिससे कि बस बहिष्कार के कारण आपस के सहयोग के आधार पर चलनेवाली नीग्रो लोगों की अपनी यातायात-व्यवस्था को समाप्त करना उचित कहा जा सके।" हमने इस मुकदमे को रुकवाने के लिए संघीय न्यायालय में अपील की कि हमारी यातायात-व्यवस्था में हस्तक्षेप करने से नगर के अधिकारियों को रोका जाय। परन्तु हमारे जिले के न्यायाधीश श्री फ्रैंक एम० जॉनसन ने हमारी प्रार्थना अस्वीकार कर दी। शीघ्र ही हम लोगों में से अनेक व्यक्तियों को अदालत में हाजिर होने की आज्ञा मिली। नगर के अधिकारियों ने हमारे विरुद्ध मुकदमा दायर कर दिया था। अपील की सुनवाई १३ नवम्बर मंगलवार को थी।

अपील की सुनवाई के दिन के पहले की सार्वजनिक आम सभा में मैंने लोगों को सावधान किया कि हमारी यातायात-व्यवस्था भंग हो सकती है। मैं समझता था कि हमारे श्वेत समाज के लोगों ने जितने

करीब बारह महीनों से अनेक कठिनाइयाँ झेली हैं। परन्तु अगर हमारी यातायात-व्यवस्था टूट जायगी, तो उनका काम कैसे चलेगा? क्या हम उन लोगों से अपील करते कि वे अपने काम पर जाने और वापस घर आने के लिए पैदल ही चलें? अगर नहीं, तो क्या हम बाध्य होकर यह स्वीकार कर लें कि अन्त में जाकर हमारा आन्दोलन असफल हो गया? हमारे संघर्ष की इस लंबी अवधि में लोगों के सामने उपस्थित होने से मैं आज पहली बार सकुचाया था।

शाम आयी। मैंने साहस बटोरा और वास्तविक परिस्थिति बयान करने की तैयारी की। मैंने अपनी बात के अन्त में आशावाद कायम रखने की भी चेष्टा की। मैंने कहा: "किसी तरह हो सकता है कि यह सुबह के उजाले के पहले आनेवाला घना अँधेरा हो। हम पिछले महीनों में ईश्वर में पूरा भरोसा रखकर अपने संघर्ष में आगे बढ़ते रहे हैं। हमारा यह विश्वास कई बार बड़े अप्रत्याशित ढंग से प्रमाणित भी हुआ है। हम लोग उसी विश्वास तथा उसी दृढ़ निष्ठा के साथ अब भी आगे बढ़ें। हम यह भरोसा रखें कि जहाँ कोई भी रास्ता नहीं सूझ रहा है, वहाँ भी कोई-न-कोई रास्ता निकल ही आयेगा।" आशा से भरी हुई इन बातों के बावजूद मैंने ऐसा अनुभव किया कि श्रोताओं के मन पर निराशा बिखर रही थी। हजारों अर्धरात्रियों के अँधेरे से भी यह रात्रि कहीं अधिक अँधेरी थी। यह एक ऐसी रात्रि थी, जिसमें आशा की किरणें दूर होती जा रही थीं और विश्वास का चिराग बुझता-सा नजर आ रहा था। हम जब अपने-अपने घर गये, तब हमारे मन पर अनिश्चय के बादल मँडराये हुए थे।

मंगलवार की सुबह हम लोग न्यायालय पहुँचे। एक बार फिर हम लोग न्यायाधीश श्री कार्टर के सामने उपस्थित थे। नगर के अधिकारियों ने मॉण्टगोमरी विकास संगम के, कुछ चर्चों के और कुछ नीग्रो नेताओं के विरुद्ध मुकदमा दायर किया था। इस मुकदमे के अन्तर्गत न्यायालय से यह माँग की गयी थी कि नीग्रो लोगों की अपनी यातायात-

प्रदान की है, जिसमें कि वर्गों में भेद-भाव को अधिष्ठित करनेवाला अलबामा राज्य का कानून अवैधानिक घोषित किया गया था। सर्वोच्च न्यायालय ने तर्क-वितर्क और बहस सुने बिना यह निर्णय किया है। सर्वोच्च न्यायालय का कथन है कि इस मामले की अपील को मंजूरी देकर संघीय न्यायालय के उपर्युक्त फैसले को मान्यता दी जा रही है।"

यह पढ़कर मेरा हृदय अनिर्वचनीय आनन्द से उछल पड़ा। हमारे संघर्ष के लिए जो सबसे अधिक अंधकारपूर्ण घड़ी थी, वही विजय की पहली घड़ी साबित हुई। तुरन्त ही मैंने यह समाचार अपने वकीलों को बताया। उसके बाद कमरे में पीछे बैठी मेरी पत्नी, श्री राल्फ एबरनाथी और श्री इ० डी० निक्सन को यह समाचार बताने के लिए मैं दौड़कर गया। तुरन्त ही यह समाचार पूरे न्यायालय में फैल गया। मेरे बगल में खड़ा एक व्यक्ति हर्षित होकर बोला : "यह फैसला सर्वशक्तिमान् ईश्वर ने वाशिंगटन डी० सी० से भेजा है!"

कुछ मिनट बाद न्यायाधीश श्री कार्टर ने फिर से न्यायालय की कार्रवाई प्रारम्भ की। हम लोग चालू मुकदमे की शेष कार्रवाई के लिए वहाँ दिनभर रहे। करीब पाँच बजे दोनों पक्षों के लोग अपना-अपना काम समाप्त कर चुके थे। न्यायाधीश ने इसके कुछ ही मिनट बाद अपना फैसला हमें सुना दिया। जैसा कि हम पहले से ही अनुमान करते थे, न्यायाधीश ने नीग्रो लोगों की अपनी यातायात-व्यवस्था को रोकने के लिए एक अस्थायी आदेश दे दिया। परन्तु इस फैसले में किसीको दिलचस्पी नहीं थी। १३ नवम्बर १९५६, मंगलवार का दिन मॉण्टगोमरी बस-बहिष्कार-आन्दोलन के इतिहास में सदैव अविस्मरणीय रहेगा। उस दिन दो ऐतिहासिक फैसले एक साथ सामने आये। एक फैसले के अनुसार राज्य के न्यायालय के द्वारा हमारी यातायात-व्यवस्था को ठप किये जाने का आदेश दिया गया था। और दूसरे फैसले के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा उस व्यवस्था के मूल कारण, बसों में चलनेवाले रंग-भेद को समाप्त करने का आदेश दिया गया था।

परिषद् ने तीव्र हर्षध्वनि की। वे लोग खुशी से उछलने लगे तथा अपने रूमाल हिला-हिलाकर पादरी की बातों का समर्थन करने लगे। इस तरह वे यह प्रकट कर रहे थे कि अब उन्होंने नयी प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली है और उनके आन्दोलन की उम्र पक गयी है। श्री बॉब ग्रेट्ज ने अन्त में कहा : "और अब हम विश्वास, आशा तथा प्रेम को स्वीकार करें। पर याद रखें कि प्रेम इनमें महानतम है।" इस बात पर फिर से लोगों ने तीव्र हर्षध्वनि की। ऐसी बात पर वे ही लोग इतनी तीव्र हर्षध्वनि कर सकते हैं, जिन्होंने कटुता के भँवर में भी प्रेम को अपना आदर्श मानकर संघर्ष किया हो। उस समय मैंने यह पूरी तरह जाना कि अपनी समस्त कठिनाइयों के बावजूद अहिंसा ने हमारे हृदयों पर विजय प्राप्त कर ली है।

उसके बाद श्री राल्फ एबरनाथी ने भाषण किया। उन्होंने बताया कि किस तरह एक श्वेतांग पत्रकार ने उपस्थित जन-समुदाय की तीव्र हर्ष-ध्वनि सुनकर नाक-मुँह सिकोड़ा था। उस पत्रकार ने श्री राल्फ से पूछा : "बाइबिल के पाठ की जब प्रार्थना हो रही है, तब इस तरह से बीच-बीच में व्यवधान पैदा करना क्या अजीब-सा नहीं लगता!" तब श्री राल्फ ने उस पत्रकार से कहा : "हाँ, यह जरूर अजीब बात है! वैसी ही, जैसी कि जब बर्फ पड़ रही हो, पानी बरस रहा हो और बसें भी खाली जा रही हों, तब भी पैदल चलकर अपने काम पर जाना; वैसी ही, जैसी कि एक ऐसे आदमी के लिए सद्भावपूर्ण प्रार्थना करना, जो कि हमें प्रताड़ित कर रहा हो; वैसी ही, जैसी कि एक दक्षिण के नीग्रो के लिए खड़े होकर यह सोचना कि मैं भी श्वेतांग मनुष्य की तरह का ही एक मनुष्य हूँ।" इस पर श्रोता जोर से हँसे और उन्होंने उस पत्रकार के प्रति शाबाशी कसते हुए हर्षध्वनि की।

दोनों सभाओं ने कार्यकारिणी समिति द्वारा उपस्थित इस सुझाव को मान्यता दी कि औपचारिक तौर पर बस-बहिष्कार समाप्त किया जाय, परन्तु सर्वोच्च न्यायालय का आदेश पहुँचने तक बसों में न चढ़ा जाय।

मॉण्टगोमरी तक पहुँचने में चार-पाँच दिन से कहीं अधिक ही लग जायगा। सर्वोच्च न्यायालय के एक कार्यकर्ता के परिचित एक रिपोर्टर ने बताया कि इसमें लगभग महीनाभर तक लग सकता है। इस विलम्ब ने हमारे लिए एक गम्भीर समस्या पैदा कर दी; क्योंकि हमारी जो यातायात-व्यवस्था थी, वह तो स्थगित कर ही दी गयी थी। इस संक्रान्ति-काल में हमने यह सोचा कि अलग-अलग मोहल्लों में जिन-जिनके पास कारें हों, वे आपस के सहयोग से दूसरों को अपनी कार में चढ़ाकर काम चलायें। इस सहयोगी योजना का संचालन श्री एस० एस० सी ने बड़ी कुशलता के साथ किया। हमारी योजना सफल हुई और शहर की बसें खाली चलती रहीं।

इस बीच हमने लोगों को यह समझाना शुरू किया कि रंगभेद-विहीन बसों में कैसे यात्रा की जाय। एक के बाद एक सार्वजनिक सभाओं में हमने इस बात पर जोर दिया कि हमारा प्रत्येक तरीका अहिंसात्मक हो। इसलिए हमने लोगों को समझाया : "सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के कारण बसों में चलनेवाले रंगभेद को समाप्त करने की जो सफलता हमें प्राप्त हुई है, उसे हम गोरी जाति पर अपनी विजय का प्रतीक न समझें; वरन् इसे न्याय और जनतन्त्र की विजय मानें।" हमने लोगों को इस पहलू की ओर से भी सचेत किया : "हम जब वापस बसों में चढ़ने जायँ तब अनावश्यक ही अपने अधिकारों की डींग न मारें। हम लोग केवल वहीं बैठें, जहाँ सीट खाली पड़ी हो।"

अनेक सभाओं में हमने लोगों को अहिंसात्मक व्यवहार का तरीका सिखाने के लिए स्कूल चलाये। हम लोग कुर्सियों को उसी तरह से पंक्तिबद्ध कर लेते, जैसे कि बसों में बैठने की सीटें हों। सबसे आगे ड्राइवर के बैठने की सीट होती, उसके बाद दस-पन्द्रह लोग मिलकर अभिनय के रूप में दिखाते कि बस में किसी परिस्थिति पर क्या किया जाय। एक आदमी ड्राइवर बनता। कुछ लोग श्वेतांग और कुछ लोग नीग्रो यात्री बनते। इन दोनों यात्री-दलों में कुछ लोग उद्दण्ड व्यवहारवाले तथा कुछ

लोग नम्र व्यवहारवाले होते। ये अभिनेता इस तरह का सीन बनाते, जिसमें श्वेतांग तथा नीग्रो यात्री एक-दूसरे का अपमान अथवा हिंसा करते हुए दीख पड़ते। सभा में उपस्थित जन-समुदाय इस नाटक को देखकर यह समझने की कोशिश करता कि किस प्रकार इस तरह की हिंसा को रोका जा सकता है। जब एक दल इस तरह का नाटक कर चुकता, तब सभा में से दूसरा दल आकर फिर इसी तरह का दूसरा नाटक करता और इस तरह से अहिंसा की शिक्षा दी जाती थी। सभा के अंत में सब लोग इन नाटकों में प्रस्तुत घटनाओं पर चर्चा किया करते थे।

कभी-कभी श्वेतांग यात्री का अभिनय करनेवाला व्यक्ति अपने अभिनय में इतना उत्साहित हो जाता कि उसे रोकना पड़ जाता था। कभी-कभी नीग्रो यात्री का अभिनय करनेवाला व्यक्ति अपनी अहिंसा की बात भूल जाता और वाद-विवाद में उलझ जाता था। जब भी ऐसा होता, तब हम लोग यह बताते कि उसके शब्दों और तरीकों में कहाँ सुधार किया जाय कि जिससे वह अहिंसा की दिशा में बढ़ सके।

जब सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के पहुँचने की तारीख निकट आने लगी, तब हमारे आन्दोलन के अनेक नेता स्कूलों और कॉलेजों में जा-जाकर विद्यार्थियों को यह समझाने लगे कि वे किस प्रकार श्वेतांग-समुदाय के साथ अहिंसात्मक व्यवहार जारी रखें। हम लोगों ने रंगभेद-हीन बसों में यात्रा करने के लिए कुछ सुझाव तैयार किये और उनको 'साइक्लोस्टाइल' करके सब जगह प्रसारित कर दिया। इन सुझावों की तैयारी में हमें रेवरेण्ड ग्लेन स्माइली की बहुत मदद मिली। ये दक्षिण के ही एक श्वेतांग पादरी हैं और 'फेलोशिप ऑफ रिकॉन्सिलिएशन' के सदस्य। उस समय ये मॉण्टगोमरी में ही थे।

## बस-यात्रा सम्बन्धी सुझाव

"यह एक ऐतिहासिक सप्ताह है; क्योंकि बसों में चलनेवाला रंगभेद अब अवैधानिक घोषित किया जा चुका है। कुछ ही दिन में सर्वोच्च

न्यायालय का आदेश मॉण्टगोमरी पहुँच जायगा और आप लोग रंग-समन्वयवाली बसों में फिर से यात्रा करेंगे। यह नवीन व्यवस्था हमें एक विशेष उत्तरदायित्व सौंपती है कि हम एक शान्त और स्नेहपूर्ण वातावरण का निर्माण करें। यह वातावरण अच्छे नागरिकों और नीग्रो वंश के सदस्यों के ही योग्य हो। अगर किसी दुःखद घटना का भी सामना करना पड़े तो भी हमें अपनी शान्ति तथा भद्रता का परित्याग नहीं करना है। अगर शब्दों में या कार्यों में कहीं हिंसा भी फूट पड़े तो भी उस हिंसा के करनेवालों में हमारे लोग नहीं होने चाहिए।

आपकी मदद तथा सुविधा के लिए नीचे लिखे सुझाव दिये जा रहे हैं। क्या आप इन्हें देखेंगे, पढ़ेंगे और याद रखेंगे; ताकि हमारी अहिंसा के प्रति दृढ़ निष्ठा को कोई हानि न पहुँचे? प्रारम्भ में मोटे तौर पर नीचे लिखे सुझावों की ओर आप ध्यान दें :

१. सभी श्वेतांग नागरिक बसों में किये जानेवाले रंग-समन्वय के विरोधी नहीं हैं। इसलिए उन अनेक सहृदय श्वेतांग यात्रियों की सद्भावनाएँ स्वीकार करें।
२. अब 'पूरी' बस 'सभी' लोगों के लिए है। इसलिए किसी भी खाली पड़ी सीट पर आप बैठें।
३. जब आप बस में चढ़ें, तब ईश्वर से प्रार्थना करें कि वे आपको संयम से रहने की शक्ति दें और अपने मन में यह प्रतिज्ञा करें कि शब्दों या कार्यों में आप पूरी तरह अहिंसक बने रहेंगे।
४. अपने क्रिया-कलापों में अपनी शान्त और भद्र वृत्ति का परिचय दें।
५. प्रत्येक अवसर पर नम्रता और सद्व्यवहार के साधारण नियमों का पालन करें।
६. याद रखें कि यह केवल नीग्रो-समुदाय की विजय नहीं है, बल्कि मॉण्टगोमरी तथा पूरे दक्षिण की विजय है। घमंड मत कीजिये। डींग मत मारिये।

७. चुप रहिये, पर वह मौन मित्रतापूर्ण हो। गर्वोन्नत रहिये, पर वह गर्व उद्दण्डतापूर्ण न हो। प्रसन्न रहिये, पर उस प्रसन्नता में दूसरों का मजाक मत उड़ाइये।
८. इतने प्रेमल बनिये कि अन्याय स्वयं हारमा जाय और इतने समझदार बनिये कि शत्रु भी मित्र बन जाय।

## कुछ विशिष्ट सुझाव

१. बस-ड्राइवर बस का प्रमुख व्यक्ति है और उसे कानून का पालन करने की आज्ञा दी गयी है। इसलिए ऐसा मानकर चलिये कि वह आपको खाली सीट पर बैठने में सहायता करेगा।
२. जान-बूझकर किसी श्वेतांग यात्री के बगल में बैठने की कोशिश मत कीजिये, बशर्ते कि दूसरी कोई सीट खाली हो।
३. किसीके बगल में बैठते हुए, चाहे वह व्यक्ति श्वेतांग हो या नीग्रो, 'क्षमा कीजियेगा' अथवा 'क्या मैं बैठ सकता हूँ' आदि नम्रतापूर्ण शब्दों का व्यवहार कीजिये। यही साधारण शिष्टाचार है।
४. अगर कोई आपको दुतकारता है तो आप उसे बदले में दुतकारिये नहीं। कोई आपको धक्का देता है तो आप बदले में उसे धक्का मत दीजिये। कोई आपको मारता है तो बदले में आप उसे मारिये नहीं; बल्कि हर अवसर पर प्रेम और सद्भावना का प्रदर्शन कीजिये।
५. अगर कोई विशेष घटना घटे तो धीरे और कम-से-कम बोलिये। अपनी सीट पर से उठिये नहीं और प्रत्येक गंभीर घटना की सूचना ड्राइवर को दीजिये।
६. प्रारम्भ के कुछ दिनों तक किसी ऐसे मित्र के साथ बस-यात्रा कीजिये, जिसके अहिंसक होने का आपको भरोसा हो। किसी अनिश्चित घटना के समय दोनों मित्र एक-दूसरे को सहारा दे सकते हैं या आपस में हाथ पकड़कर मन ही मन प्रार्थना कर सकते हैं।

७. अगर अन्य कोई नीग्रो यात्री किसी विवाद में उलझा हुआ हो, तो आप उस विवाद में पड़कर उसे और मत उलझाइये, बल्कि उस समय भी प्रार्थना करते हुए अपनी नैतिक एवं आध्यात्मिक शक्ति द्वारा न्याय प्राप्त करने का संघर्ष जारी रखें।

८. अपनी योग्यता तथा व्यक्तित्व के अनुसार ऐसे नये और सक्रिय तरीकों का प्रयोग करने में हिचकिचाइये नहीं, जिन तरीकों से आपसी मेल-मिलाप बढ़ता हो और समाज-परिवर्तन सम्भव होता हो।

९. अगर आप यह महसूस करते हों कि किसी उत्तेजक परिस्थिति में शान्त रह पाना आपके लिए कठिन है तो और एक या दो सप्ताह तक बसों में चढ़ने की कोशिश मत कीजिये। हमें अपने नीग्रो-समुदाय पर पूर्ण विश्वास है। ईश्वर आप सबको शक्ति देगा और वही आपकी रक्षा करेगा।

हमने इस प्रकार नीग्रो-समुदाय को नयी व्यवस्था के अन्तर्गत बसों में यात्रा करने के लिए तैयार किया, परन्तु श्वेतांग नागरिकों के किसी भी वर्ग ने इस बात की जिम्मेदारी नहीं उठायी कि वे गोरे लोगों को भी इस दिशा में तैयार करते। हमने श्वेतांग पादरियों की संस्था से यह निवेदन किया कि वे एक वक्तव्य देकर श्वेतांग-समुदाय के लोगों को भद्रता और क्रिश्चियन भाईचारे का व्यवहार करने की अपील करें। कुछ पादरियों ने हमारे इस निवेदन के प्रति अनुकूलता भी दिखायी। परन्तु श्री रॉबर्ट ग्रेट्ज ने बताया कि उन पादरियों में बहुमत इस बात पर जोर दे रहा था कि हमें ऐसे विवादास्पद मसलों में नहीं उलझना चाहिए। यह देखकर हमें बहुत निराशा हुई, हालाँकि लगभग सभी श्वेतांग पादरियों ने हमारे आन्दोलन के समय में पूरी तरह से चुप्पी बाँध रखी थी, तथापि मुझे यह आशा थी कि जब हमारा आन्दोलन किसी निर्णायक स्वरूप में पहुँचेगा, तब ये लोग कुछ-न-कुछ करेंगे।

इस परिस्थिति पर कोई विधायक वक्तव्य देने के लिए केवल एक ही संस्था सामने आयी। यह संस्था थी—मॉन्टगोमरी नागरिक संघ।

व्यापारियों की इस संस्था ने आन्दोलन के प्रारम्भिक दिनों में भी इस मसले को सुलझाने में दिलचस्पी दिखायी थी। सर्वोच्च न्यायालय का आदेश पहुँचने के करीब दस दिन पहले मॉण्टगोमरी नागरिक संघ के लोगों ने मॉण्टगोमरी विकास संगम के लोगों से मिलकर एक संयुक्त वक्तव्य तैयार किया, जिसमें बस की यात्रा करनेवालों से नम्र और अहिंसक व्यवहार करने की अपील की गयी थी। जब यह वक्तव्य मॉण्टगोमरी नागरिक संघ के सदस्यों की आम सभा में पेश किया गया तो दो या तीन सदस्यों ने उस पर आपत्ति उठायी। क्योंकि वह वक्तव्य सर्वसम्मति से पास नहीं हो सका, इसलिए वह वक्तव्य प्रसारित नहीं किया जा सका। इस तरह श्वेतांग समाज को कानून और व्यवस्था के पालन के लिए मिला हुआ एक विधायक अवसर भी हाथ से निकल गया।

प्रतिक्रियावादी तत्त्वों ने अपनी उछल-कूद शुरू कर दी। श्वेतांग नागरिक परिषद् के एक नेता ने धमकी देते हुए कहा कि अगर सर्वोच्च न्यायालय के आदेश को लागू करने का प्रयत्न किया गया तो मॉण्टगोमरी में दंगे शुरू हो जायँगे और रक्तपात होगा। कुछ लोगों ने यह भी सुझाया कि अब श्वेतांग नागरिकों को अपनी स्वतन्त्र यातायात-व्यवस्था उसी तरह की चालू कर देनी चाहिए, जिस तरह कि नीग्रो लोग अब तक चला रहे थे। यह एक दिलचस्प सुझाव था, क्योंकि कुछ ही दिन पहले नीग्रो लोगों की यातायात-व्यवस्था को गैरकानूनी साबित करके इन लोगों ने उसे बन्द करवा दिया था। १८ दिसम्बर को सिटी कमिश्नरों की तरफ से नीचे लिखा वक्तव्य प्रसारित किया गया :

सर्वोच्च न्यायालय के इस आदेश ने मॉण्टगोमरी के समाज की परम्पराओं पर जबरदस्त प्रभाव डाला है। यह एक आसान बात नहीं है कि पीढ़ियों से जिस कानून को वैधानिक समझकर हम मानते रहे हैं, उसे अचानक ही किसी मनोवैज्ञानिक कारण से बदल दिया जाय"। सिटी कमीशन और हम लोग जानते हैं कि हमारा समाज इस बात के

लिए दृढ़प्रतिज्ञ है कि हम एक इंच भी इधर से उधर नहीं होंगे। हम नीग्रो और श्वेतांग लोगों को मिलानेवाली योजना का हर कीमत पर विरोध करेंगे तथा इस सामाजिक एकता के विरुद्ध, अन्तर्वर्णीय विवाहों के विरुद्ध और ईश्वरकृत अलग-अलग वंशों को मिलाने के विरुद्ध हम सदा चट्टान की तरह डटे रहेंगे।

आखिर २० दिसम्बर को सर्वोच्च न्यायालय का आदेश मॉण्ट-गोमरी पहुँच गया। तुरन्त ही हम लोगों ने एक सार्वजनिक सभा का आयोजन किया, ताकि २१ दिसम्बर को बसों में यात्रा प्रारंभ करने के पहले नीग्रो लोगों को अन्तिम रूप से सुझाव और सलाह दे दी जाय। मैंने बस कम्पनी के मैनेजर श्री बैगली से कहा कि अगले दिन से सभी मुख्य मार्गों पर बसें नियमित रूप से आनी-जानी चाहिए। उन्होंने राहत की साँस ली और मेरी बात झट से मंजूर कर ली।

सेंट जॉन ए० एम० इ० चर्च में उपस्थित भारी भीड़ के सामने मैंने नीचे लिखा वक्तव्य पढ़ा, जिसे मैंने दोपहर को बड़ी सावधानी के साथ तैयार किया था :

मॉण्टगोमरी के हम नीग्रो नागरिक पिछले बारह महीनों से भी अधिक समय से नगर की बसों में चलनेवाले अन्याय तथा अप्रतिष्ठापूर्ण व्यवहार के विरुद्ध अहिंसात्मक प्रतिकार में लगे हुए थे। हमने यह अनुभव किया था कि इस अप्रतिष्ठा के वातावरण में बसों में यात्रा करने की अपेक्षा अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए पैदल चलकर काम पर जाना अधिक सम्मानजनक है। इसलिए हम लोगों ने यह तय किया कि अपनी आत्माओं के बदले पैरों को ही थकायें और मॉण्टगोमरी की सड़कों पर तब तक पैदल चलें, जब तक कि अन्याय की ये ऊँची दीवारें ढहा न दी जायें'''।

बारह महीने का यह समय आसानी से नहीं गुजरा। हमारे पैर अकसर थके हुए ही रहे। हमें अपनी स्वतन्त्र यातायात-व्यवस्था को कायम रखने के लिए तीव्र संघर्ष करना पड़ा है। हमें वे दिन याद हैं,

जब न्यायालयों ने न्याय के खिलाफ फैसले दिये और वे फैसले ज्वार की तेज लहरों की भाँति हमें निराशा के पानी में डुबा गये। परन्तु इन समस्त कठिनाइयों के बीच भी हम जूझते रहे। हमारे मन में यह विश्वास था कि इस संघर्ष में ईश्वर भी हमारे साथ है। हमारा यह भी विश्वास था कि सृष्टि की नैतिक शक्तियों की कमान देर से ही सही, पर न्याय की तरफ ही मुड़ेगी। हमने अपने दुःखभरे दिन गुड फ्राइडे ( ईसामसीह के सूली चढ़ने का दिन ) की-सी यातना में इसी आशा से गुजारे कि एक दिन आयेगा, जब ईस्टर के महान् धार्मिक पर्व की-सी चमक पूरे क्षितिज पर छा जायगी। हमने देखा है कि सत्य सूली पर लटकाया गया और अच्छाइयों को जमीन में गाड़ दिया गया। फिर भी हम जूझते रहे। क्योंकि हमारा यह दृढ विश्वास था कि एक दिन आयेगा, जब फिर से सत्य का प्रकाश फैलेगा।

अब ऐसा लगता है, मानो हमारा विश्वास सत्य प्रमाणित हो रहा है। आज प्रातःकाल सर्वोच्च न्यायालय का वह आदेश यहाँ आ गया है, जिसके अनुसार बसों में चलनेवाला रंगभेद अवैधानिक घोषित कर दिया जायगा। इस आदेश में यह बात स्फटिक की भाँति स्पष्ट है कि सार्वजनिक यातायात में रंगभेद कानूनी तथा सामाजिक दोनों दृष्टियों से गलत है। इस आदेश के अनुसार और मॉण्टगोमरी विकास संगम के महीनेभर पहले के प्रस्ताव के अनुसार हम अपना बस-बहिष्कार का आन्दोलन समाप्त करते हैं। मॉण्टगोमरी के नीग्रो नागरिकों से हमारी यह अपील है कि वे कल सुबह से बसों में यात्रा करना प्रारम्भ कर दें और इस तरह बसों में चलनेवाले अन्यायपूर्ण रंगभेद को समाप्त करें।

मैं अन्त में दो शब्दों द्वारा आपको एक चेतावनी भी देना चाहता हूँ। एक वर्ष के हमारे अहिंसक आन्दोलन के दौरान में हमें जो अनुभव मिला है, उसके आधार पर न्यायालय द्वारा अपने श्वेतांग भाइयों पर दिलायी गयी इस विजय से हम सन्तुष्ट नहीं हो सकते। हमें इस समय उन लोगों के प्रति बहुत समझदारी से काम लेना है, जिन्होंने अब तक

हमारा दमन किया था। अब वे इस न्यायालय के आदेश के कारण जिन परिस्थितियों में होंगे, उनका भी हमें ध्यान रखना है। हमें अपनी कमियों की ओर भी ईमानदारी के साथ ध्यान देना चाहिए। हमें इस तरह से बरताव करना चाहिए कि श्वेतांग तथा नीग्रो नागरिक यथा-सम्भव एक-दूसरे के निकट आयें। आपस की समझ के आधार पर और आपस के हितों के लिए हमारे बीच वास्तविक समन्वय स्थापित हो। हम आपस के आदर तथा सद्भाव के आधार पर रंगभेद को मिटाना चाहते हैं।

यही वह समय है, जब हमें अपनी शान्ति, भद्रता तथा बुद्धिमानी का परिचय देना है। हम अपनी भावनाओं के बहाव में खूँख्वार न बन जायँ। हममें से किसीकी तरफ से भी हिंसा का व्यवहार न होना चाहिए। अगर हम सामने के पक्ष की ओर से हिंसा के शिकार भी हों, तो भी हम अहिंसक बने रहें। अगर हम अपनी अहिंसा को कायम न रख सके, तो हमारा सारा पैदल चलना व्यर्थ जायगा और बारह महीने से कमायी हुई हमारी महान् प्रतिष्ठा एक भयंकर विनाश की सन्ध्या में खो जायगी! अब, जब कि हम वापस बसों में जा रहे हैं, हमें इतना स्नेहालु बन जाना है कि हमारे दुश्मन भी हमारे शुभचिंतक साथी बन जायँ। अब हमें विरोध छोड़कर समन्वय का मार्ग अपनाना है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि मॉण्टगोमरी में ईश्वर अपना चमत्कार दिखा रहा है। सद्भावना से भरे हुए नीग्रो तथा श्वेतांग, सभी लोगों को ईश्वर की छाया में काम करना है। अगर हम इसी तरह की भावनाओं के साथ आगे बढ़ेंगे तो मनुष्य की अमानवीय, निराशापूर्ण तथा अन्धकार से भरी हुई अर्धरात्रि का समय भी न्याय और स्वतंत्रता की चमकती हुई सुबह में बदल जायगा।

उपस्थित श्रोतागण खड़े हो गये और उन्होंने ऊँचे स्वर से हर्षध्वनि की। यह एक ऐसा क्षण था, जिसकी वे सालभर से प्रतीक्षा कर रहे थे। रंग-समन्वय के आधार पर बसों में यात्रा प्रारम्भ करना एक नया

अभियान था। साथ ही यह उस महान् प्रयत्न की समाप्ति थी, जिसने मॉण्टगोमरी के नीग्रो नागरिकों को एकता के सूत्र में ऐसा बाँध दिया, जैसा आज तक कभी नहीं हुआ था। सभा में उपस्थित कई लोगों के आनन्द में और कई बातों का मिश्रण भी था। कुछ लोग इस बात से डरे हुए थे कि अगले दिन जब वे फिर से बसों में यात्रा करेंगे, तब न जाने क्या होगा? कुछ लोगों को अपने आदर्श के लिए किये हुए त्याग के कारण आध्यात्मिक शक्ति महसूस हो रही थी और वे लोग आनन्द के साथ-साथ इस चिन्ता में भी थे कि अब त्याग का यह अवसर उनके हाथ से जा रहा था। अन्य अनेक पूर्णताओं की ही भाँति हमारी इस सिद्धि के बाद भी लोगों को एक दुःख का-सा हल्का-हल्का स्वाद महसूस हो रहा था।

सभा की समाप्ति के बाद मैंने नीग्रो पादरियों को थोड़ी देर और रुकने के लिए कहा। मैंने उनसे निवेदन किया कि भीड़ के समय वे लोग बसों में घूमते रहें। प्रारम्भ के कुछ दिनों तक ऐसा करने से नीग्रो यात्रियों को किसी कठिनाई के समय इन पादरियों से उचित सलाह-मशविरा प्राप्त हो सकेगा और साहस भी मिलता रहेगा, ताकि प्रारम्भ में अगर कोई अपमानजनक घटना हो भी जाय तो भी हमारी ओर से कोई बदला न चुकाया जाय। पादरियों ने मेरे इस सुझाव को तुरन्त मान लिया। हमने प्रत्येक बस-मार्ग पर दो पादरियों को नियुक्त किया और उन्हें सुबह तथा शाम को भीड़ के समय बराबर बसों में देखरेख करते रहने की हिदायत दी। उन्हें इस बात के सुझाव भी दिये गये कि अगर कोई दुःखद घटना घट जाय तो उस समय किस तरह उसे आगे बढ़ने से रोका जाय। हम लोगों ने यह भी तय किया कि इन अवांछनीय घटनाओं का पूरा विवरण भी रखा जाय।

मैंने भी यह तय किया कि इतने महीनों तक न्याय-प्राप्ति के लिए किये गये संघर्ष में अपने लोगों का नेतृत्व करने के बाद मुझे इस समय घर में बैठे नहीं रहना चाहिए, बल्कि वापस बसों में जाने में भी उनका

नेतृत्व करना चाहिए। मैंने श्री राल्फ एबरनाथी, श्री इ० डी० निक्सन और श्री ग्लेन स्माइली से भी निवेदन किया कि वे भी रंग-समन्वय की पहली बस में मेरे साथ यात्रा करें। वे शुक्रवार को सुबह पाँच बजकर पैंतालीस मिनट पर मेरे घर पहुँच गये। टेलीविजनवाले प्रेस-फोटोग्राफर और रिपोर्टर लोग मेरे घर के सामने इकट्ठे हो चुके थे। पाँच बजकर पचपन मिनट पर हम लोग बस-स्टॉप की ओर बढ़े। फोटोग्राफरों के कैमरे 'क्लिक-क्लिक' करने लगे और रिपोर्टर लोगों ने सवालों पर सवाल बरसाना प्रारम्भ किया। शीघ्र ही बस आ पहुँची, दरवाजा खुला और मैं अन्दर घुसा। बस-ड्राइवर ने बड़ी हार्दिक मुसकान के साथ मेरा स्वागत किया। जैसे ही मैंने पेटी में अपने किराये का पैसा डाला, त्यों ही ड्राइवर ने पूछा :

"मेरा खयाल है कि आप ही रेवरेंड किंग हैं। हैं न ?"

मैंने उत्तर देते हुए कहा : "जी हाँ, मैं ही हूँ।"

"आपको अपनी बस में पाकर हम बहुत प्रसन्न हैं !"—उसने कहा।

"धन्यवाद"—मैंने मुसकराकर कहा और एक खाली पड़ी हुई सीट पर जाकर बैठ गया। श्री एबरनाथी, श्री निक्सन और श्री स्माइली भी मेरे पीछे-पीछे आये। बहुत-से रिपोर्टर तथा टेलीविजनवाले भी उनके पीछे-पीछे चढ़ गये। श्री ग्लेन स्माइली मेरे पास की सीट पर बैठे। इस तरह मैंने मॉण्टगोमरी की पहली रंग-समन्वयवाली बस में एक श्वेतांग और दक्षिणवासी पादरी के साथ यात्रा की।

शहर के मध्य भाग में हमने अपनी बस बदली। यह बस श्वेतांग नागरिकों के मोहल्ले में चलनेवाली थी। जब श्वेतांग लोग बस में चढ़े तो कइयों ने अपनी-अपनी सीट इस तरह से ले ली, मानो आज कोई नयी बात हो ही न रही हो। कुछ लोगों ने यह देखकर आश्चर्य किया कि नीग्रो यात्री आगे की सीटों पर बैठे हैं! कुछ लोग यह जानकर चिढ़ रहे थे कि उन्हें या तो नीग्रो लोगों के पीछे बैठना पड़ेगा या खड़े

रहना होगा। एक प्रौढ़ व्यक्ति कंडक्टर के बगल में खड़ा ही रहा, बावजूद इसके कि पीछे की तरफ अनेक सीटें खाली पड़ी थीं। जब किसीने उनसे कहा कि आप पीछे की खाली सीट पर बैठ क्यों नहीं जाते, तो उसने जवाब दिया : "कब्ल इसके कि मुझे एक 'निगर' के पीछे बैठना पड़े, मैं मरना और जहन्नुम में जाना ज्यादा पसन्द करूँगा।" एक श्वेताग महिला अनजान में ही एक नीग्रो यात्री की बगल में बैठ गयी। जब उसे अपने पड़ोसी का ध्यान आया तो यह लपककर खड़ी हो गयी और क्रोधभरे स्वर में बोली : "इन 'निगर' लोगों को क्या हो गया है!"

इन कुछ अवांछनीय घटनाओं के अलावा कोई बड़ी दुर्घटना पहले दिन नहीं हुई। बहुत-से गोरे लोगों ने इस नये निर्णय को शान्ति के साथ स्वीकार कर लिया। अनेक गोरों ने तो जान-बूझकर तथा मित्रतापूर्ण मुसकान के साथ नीग्रो यात्रियों की बगल की सीट पर बैठना पसन्द किया। यह सच है कि एक नीग्रो महिला को एक गोरे व्यक्ति ने थप्पड़ मारी; परन्तु उस महिला ने उसका कोई बदला नहीं लिया। बाद में उस महिला ने बताया : "मैं उस कंबख्त का गला खुद अकेली ही मरोड़ सकती थी, परन्तु पिछले दिन की सायंकालीन सभा के बाद मैंने यह निश्चय किया था कि जैसा रेवरेंड किंग ने हमें सिखाया है, वैसा ही व्यवहार मैं करूँगी।" पहले दिन की समाप्ति पर 'मॉण्टगोमरी एडवरटाइजर' ने अपने समाचार में लिखा कि "मॉण्टगोमरी की परम्परा में इस असाधारण महत्त्व के परिवर्तन को बिना किसी बड़ी दुर्घटना के शान्ति, किन्तु सावधानी के साथ स्वीकार कर लिया गया।"

परन्तु प्रतिक्रियावादी तत्त्वों ने हार नहीं मानी थी। उनमें से अनेक ने हिंसात्मक घटनाओं के होने की भविष्यवाणी भी की थी। इस तरह की भविष्यवाणियाँ जाने-अनजाने हिंसा को आमन्त्रण देनेवाली ही साबित होती हैं। जब अनेक लोग, खास तौर से सार्वजनिक क्षेत्र में काम करनेवाले लोग ऐसा कहें कि बसों में रंगभेद की समाप्ति के

साथ-साथ रक्तपात की घटनाएँ भी होंगी, तब वे चुपके-चुपके हिंसा को भड़कानेवालों को ही प्रोत्साहित करते हैं। ये सार्वजनिक क्षेत्र के नेतागण छिपे-छिपे उनके पीछे काम करते हैं। क्योंकि मॉण्टगोमरी के अनेक सार्वजनिक अधिकारियों ने हिंसात्मक घटनाओं के होने की सम्भावनाएँ घोषित की थीं; इसलिए उनको अपनी बात की लाज रखने के लिए भी हिंसक घटनाओं को उभाड़ना आवश्यक था।

वैसा ही हुआ भी। कुछ दिनों के शान्त वातावरण के बाद २८ दिसम्बर तक मॉण्टगोमरी पर आतंक का साम्राज्य छा गया। पूरे शहर में और खास तौर से ऐसे क्षेत्रों में, जहाँ बिजली का पूरा प्रबन्ध नहीं था, सिटी बसों पर गोलियाँ चलाने की घटनाएँ हुईं। एक किशोर वय की बाला ज्यों ही बस से उतरी कि चार-पाँच श्वेतांग युवकों द्वारा वह पीट दी गयी। एक गर्भवती नीग्रो महिला के पैर में पिस्तौल से गोली मारी गयी। बहुत-से नीग्रो और श्वेतांग नागरिकों ने डर के मारे बसों में यात्रा करना ही छोड़ दिया। सिटी कमीशन के अधिकारियों ने रात को चलनेवाली बसों को बन्द करवा दिया और आदेश दिया कि पाँच बजे के बाद कोई बस न चलायी जाय। इसका अर्थ यह हुआ कि मजदूर लोग एक बार फिर से बिना यातायात के रह गये। यह अराजकता की स्थिति ठीक वैसी ही थी, जैसी कि प्रतिक्रियावादी लोगों ने आशा की थी।

इस समय भी नीग्रो-समाज में फूट डालने की कई कोशिशें की गयीं। बहुत-से ऐसे इश्तहार बाँटे गये, जिनमें सभी नीग्रो नेताओं के विरुद्ध और खास तौर से मेरे विरुद्ध विद्रोह करने की अपील की गयी थी। इन इश्तहारों में यह कहा गया था कि यह 'ऊबे हुए' नीग्रो लोगों की ओर से बाँटे जा रहे हैं। परन्तु यह सभी जानते थे कि यह काम गोरे रंग की उत्कृष्टता का अभिमान रखनेवालों का है। एक इश्तहार में मेरे बारे में लिखा गया था : "जब हम गोलियों के निशाने पर बलि होते हैं, तब लूथर अपनी कार में बैठकर आनन्द कर रहा होता है! लूथर ने हम लोगों को दिन-प्रतिदिन अधिक-से-अधिक कठिनाइयों

में फँसाया है। इसलिए नीग्रो समाज के लोगो! जागो और उसे अपने शहर से बाहर भगा दो।" एक दूसरे इश्तहार में मेरे बारे में लिखा गया था: "इन बाहर से आये हुए उपदेशकों के जन्म लेने के पहले से ही हम लोग मॉण्टगोमरी में अपना जीवन अच्छी तरह से चला रहे थे। रेवरेंड किंग के माँ-बाप से पूछिये कि क्या वे अपने बेटे की इन करतूतों को पसन्द करते हैं? रेवरेंड किंग से पूछिये कि अगर वे अपने ही शहर अटलाण्टा में ऐसी समस्याएँ पैदा करेंगे, तो क्या उनके माँ-बाप वहाँ पर उनकी मदद करेंगे? बहुत देर होने के पहले ही श्री किंग को अपने शहर से बाहर निकाल देना हमारे हित में बेहतर होगा।"

कू क्लक्स क्लान के लोग भी तैश में थे। एक दिन उन्होंने पूरे जोश के साथ मॉण्टगोमरी पर धावा बोला। परन्तु शायद वे अपना आकर्षण खो बैठे थे। कॉलेज में पढ़नेवाली एक लड़की ने इन लोगों को अपने सफेद चोगे और लाल तमगे के साथ सड़क पर देखा, परन्तु उसे उनसे कोई डर नहीं लगा तथा वह यह सोचते हुए आगे बढ़ गयी कि ये लोग शायद चन्दा इकट्ठा कर रहे होंगे। इसी तरह एक ठण्डी रात्रि में एक नन्हें-से नीग्रो बालक को उनके द्वारा जलाये गये सलीब पर आग तापते हुए पाया गया।

९ जनवरी को श्री राल्फ एबरनाथी और मैं अटलाण्टा गये, ताकि १० जनवरी को मैंने नीग्रो नेताओं की जो बैठक आमंत्रित की थी, उसकी तैयारी की जा सके। लगभग अर्धरात्रि के समय श्री राल्फ की पत्नी श्रीमती जुआनिता एबरनाथी ने हम लोगों को टेलीफोन किया। मैं समझ गया कि रात्रि के दो बजे यदि हमें टेलीफोन करने के लिए विवश हुई है तो जरूर कोई भयंकर बात हुई है। जब श्री राल्फ टेलीफोन पर बात करके वापस आये तो उनके चेहरे की गम्भीरता से ही जाहिर हो रहा था कि कोई असाधारण बात हुई है। श्री राल्फ ने मुझे बताया: "मेरे घर पर बम-विस्फोट किया गया है तथा तीन-चार और भी विस्फोट हुए हैं। परन्तु जुआनिता को अभी मालूम नहीं है कि ये कहाँ-कहाँ पर

हुए हैं।" मैंने जुआनिला और बेबी के बारे में पूछा : "वे तो सुरक्षित हैं न ?" श्री राल्फ ने कहा कि ईश्वर की कृपा से वे सुरक्षित हैं। इसके पहले कि हम अपनी बात पूरी कर पाते, फिर से टेलीफोन की घण्टी बजी। इस बार भी श्रीमती जुआनिला ही थीं, जिन्होंने बताया कि फर्स्ट बैप्टिस्ट चर्च पर भी विस्फोट हुआ है। जब श्री राल्फ मेरी बगल में आकर बैठे, तब मैंने देखा कि वे बदहवास दिखाई दे रहे थे। एक ही रात में उनके चर्च और घर, दोनों पर बम-विस्फोट किया गया था। मैं उन्हें सान्त्वना देने के लिए शब्द नहीं खोज पा रहा था। ब्राह्म मुहूर्त में हम दोनों ने मिलकर प्रार्थना की तथा ईश्वर से निवेदन किया कि हमें वह सहनशीलता की शक्ति दें और अपने उद्देश्यों की ओर बढ़ते जाने की ताकत दें।

तीन बजे से सात बजे के बीच हम लोगों के पास कोई पन्द्रह बार टेलीफोन आये, जिससे हमें मालूम हुआ कि श्री राल्फ के घर तथा चर्च के अलावा श्री बॉब ग्रेट्ज का घर तथा बेल स्ट्रीट चर्च, हचिन्सन स्ट्रीट चर्च और माउण्ट ऑलिव चर्च भी बम-विस्फोट के शिकार हुए हैं। हमें इस बात की चिन्ता हो रही थी कि कहीं नीग्रो-समाज के लोग बदला लेने की भावना से ईंट का जवाब पत्थर से देने का प्रयत्न न कर बैठें। इसलिए मैंने मॉण्टगोमरी के कुछ पादरियों को टेलीफोन करके निवेदन किया कि वे परिस्थिति को सँभालने की कोशिश करें। इसके बाद १० जनवरी की दक्षिण के नीग्रो नेताओं की बैठक में भाग लेने का विचार छोड़कर श्री राल्फ और मैं विमान से तुरन्त मॉण्टगोमरी पहुँच गये।

मॉण्टगोमरी के हवाई अड्डे से हम सीधे श्री राल्फ के घर पहुँचे। सड़क के यातायात को रस्सी बाँधकर बन्द कर दिया गया था तथा सैकड़ों लोग टूटे हुए घर को टकटकी लगाये हुए देख रहे थे। घर के आगे का ओसारा पूरी तरह ध्वस्त हो चुका था और घर के अन्दर का

हिस्सा भी ऊपर से नीचे तक हिल चुका था। श्रीमती पुआनिला को काफी धक्का लगा था, परन्तु फिर भी वह काफी संयत थीं।

उसके बाद हम लोगों ने अन्य स्थानों का भी, जहाँ बम-विस्फोट हुए थे, मुआयना किया। बेल स्ट्रीट चर्च और माउण्ट ऑलिव चर्च भी करीब-करीब ध्वस्त हो चुके थे। अन्य दो चर्च कुछ कम क्षतिग्रस्त हुए थे। फिर भी उनको काफी नुकसान पहुँचा था। चारों गिरजों में कुल मिलाकर सत्तर हजार डॉलर की संपत्ति नष्ट हो चुकी थी। श्री रॉबर्ट ग्रेट्ज के घर पर पिछली गर्मियों में भी बम-विस्फोट किया गया था, परन्तु सौभाग्य से उस समय ज्यादा नुकसान नहीं पहुँचा। इस बार उनका घर बच नहीं सका। उनके घर का अगला हिस्सा तो खँडहर बन चुका था और घर के अन्दर हर जगह शीशे के टुकड़े बिखरे हुए थे। यह काफी बड़ा बम-विस्फोट था। जहाँ-जहाँ बम-विस्फोट हुए थे, वहाँ क्रुद्ध भीड़ भी बड़ी मात्रा में एकत्रित थी। परन्तु मुझे इस बात पर आश्चर्य हो रहा था कि वे लोग अपने पर नियंत्रण रख सके और बदला लेने के लिए उद्यत नहीं हुए।

अगली सुबह श्वेतांग नागरिकों की तीन मुख्य संस्थाओं ने बम-विस्फोट की घटनाओं की निन्दा करते हुए वक्तव्य प्रकाशित किये। 'मॉण्टगोमरी एडवरटाइजर' के सम्पादक श्री ग्रोवर हॉल ने 'क्या मॉण्ट-गोमरी में रहना सुरक्षित है?' शीर्षक से एक जबरदस्त सम्पादकीय लिखा। इस लेख में इस पहलू पर जोर दिया गया था कि ये सब घट-नाएँ रंगभेद बनाम रंग-समन्वय के सवाल से बहुत आगे चली गयी हैं। जब मैंने श्री हॉल का यह लेख पढ़ा, तो मैं इस चतुर और गहन व्यक्ति की तारीफ किये बिना नहीं रह सका। वे रंगभेद के समर्थक हैं, परन्तु रंगभेद के नाम पर चलनेवाली इस तरह की बेहूदा हरकतों को वे पसन्द नहीं करते। अनेक गोरे पादरियों ने भी बम-विस्फोटों की निन्दा करते हुए कहा कि ये हरकतें क्रिश्चियन-धर्मविरोधी तथा असभ्यतापूर्ण हैं। दिनभर पादरियों का यह वक्तव्य टेलीविजन पर 'फर्स्ट प्रेसबेटेरियन

चर्च' के पादरी रेवरेंड मर्ल पेटर्सन द्वारा सुनाया जाता रहा। मॉण्ट-गोमरी नागरिक संघ के लोगों ने भी बम-विस्फोटों के खिलाफ दृढ़ विरोध प्रकट किया। हमारा आन्दोलन प्रारम्भ होने के बाद यह पहला ही अवसर था, जब कि इन प्रभावशाली श्वेतांग लोगों ने कानून और व्यवस्था को कायम रखने के लिए सार्वजनिक रूप से कुछ कहा। उनके इस वक्तव्य ने हमें नया विश्वास दिया कि अभी भी श्वेतांग लोगों का बहुमत समाज की मूलभूत प्रतिष्ठा को कायम रखने के लिए तत्पर है। बावजूद इसके कि ये श्वेतांग लोग रंगभेद में पूरी तरह विश्वास करने-वाले थे, उन्होंने यह स्पष्ट जाहिर किया कि वे अभी भी कानून के अनुसार चलना चाहते हैं और रंगभेद को कायम रखने के लिए हिंसा-त्मक तरीकों को स्वीकार करने के लिए प्रस्तुत नहीं हैं।

उसी दिन दोपहर के बाद मैं वापस अटलाण्टा आया, ताकि नीग्रो नेताओं की सभा में कम-से-कम थोड़ी देर के लिए ही सही, उपस्थित हो सकूँ। वहाँ लगभग एक सौ उत्साही व्यक्ति उपस्थित थे, जो पूरे दक्षिण का प्रतिनिधित्व करते थे। वे लोग इस बात के लिए तत्पर थे कि सर्वोच्च न्यायालय के फैसले को अहिंसात्मक तरीकों के द्वारा अमल में लाकर बसों में चलनेवाले रंगभेद को समाप्त करने के लिए पूरे दक्षिण में आन्दोलन किया जाय। सभा को समाप्त करने के पहले उन्होंने यह तय किया कि इस काम के लिए एक नयी संस्था प्रारम्भ की जाय। वैसा ही किया गया और इस नयी संस्था का नाम रखा गया—'सदर्न क्रिश्चियन लीडरशिप कॉन्फरेन्स'। मुझे इस संस्था का अध्यक्ष बनाया गया और यह जिम्मेदारी अभी तक मुझ पर ही है।

जब मैं दो दिन के बाद वापस मॉण्टगोमरी लौटा, तो मैंने पाया कि नीग्रो-समाज में कुछ शिथिलता के-से भाव व्याप्त हैं। बम-विस्फोटों के बाद सिटी कमीशन ने बसों का चलना पूरी तरह बन्द करवा दिया था। इस तरह नगर के अधिकारियों ने ऐसा माहौल पैदा किया, मानो वे इस हिंसा के वातावरण में बस-कम्पनी के अधिकारों को रद्द करने के

काम को उचित मान लेंगे। परिणामस्वरूप बहुत-से लोग तो ऐसा मानने लगे कि हमारी सारी सफलता व्यर्थ सिद्ध हो रही है। मुझे खुद ऐसा भय होने लगा कि बसों को फिर से चलवाने के लिए हमें एक और नया आन्दोलन प्रारम्भ न करना पड़े। मुझे ऐसा विचार भी आने लगा कि नीग्रो-समाज में यह जो अनुत्साह है, वह कहीं उन इश्तहारों का परिणाम तो नहीं है, जो नीग्रो-समाज में मेरे तथा आन्दोलन के विरुद्ध बड़ी-बड़ी घोषणाएँ करते रहे हैं! बम-विस्फोटों के कारण मेरे हृदय में भी अनुत्साह और साथ ही साथ विद्रोह की भावनाएँ जाग रही थीं। कुछ विचित्र कारणों से मुझे ऐसा अनुभव होने लगा कि यह जो कुछ घट रहा है, उसके लिए मैं ही दोषी हूँ, मैं ही जिम्मेदार हूँ।

इसी उदासीभरे मन के साथ मैं सोमवार की सायंकालीन आम सभा में गया। इन भावनाओं के ही कारण मैं पहली बार आम जनता के सामने आत्मनियंत्रण खोकर टूट-सा पड़ा। मैंने लोगों के साथ मिलकर प्रार्थना की और ईश्वर से निवेदन किया कि वे हमारी प्रत्येक गतिविधि में दिशासूचक एवं मार्गदर्शक बनें। मैं आखिर अपने-आपको रोक नहीं पाया और बोल पड़ा: "हे ईश्वर, आजादी के लिए किये जानेवाले इस संघर्ष के कारण किसीको अपनी जान न देनी पड़े, ऐसी मैं प्रार्थना करता हूँ। निश्चय ही मैं मरना नहीं चाहता। लेकिन अगर किसीको मरना ही है, तो उसमें पहला नम्बर मेरा हो।" श्रोताओं ने इस बात को ऊँचे स्वर से अस्वीकार किया। चारों ओर से लोगों ने 'नहीं, नहीं' की आवाजें लगायीं। श्रोताओं की यह प्रतिक्रिया इतनी तीव्र थी कि मैं अपनी प्रार्थना को चालू नहीं रख सका। मेरे दो सहायक पादरी मंच पर आये और मुझे सुझाया कि मैं सीट पर जाकर बैठ जाऊँ। कुछ मिनट तक मैं उनके हाथों के सहारे खड़ा रहा; क्योंकि वहाँ से हटकर अपनी सीट तक जाने की क्षमता भी मुझमें नहीं थी। आखिर इन मित्रों की सहायता से मैं अपनी सीट पर जाकर बैठ गया। इसी घटना से पत्र-प्रतिनिधियों ने गलती

से यह अन्दाज लगा डाला कि मैं मूर्च्छित हो गया हूँ और वैसे ही समाचार सब जगह प्रकाशित हो गये।

इस अचानक घटी हुई घटना से मुझे बड़ी सहायता मिली। सभा के तुरन्त बाद अनेक लोग मेरे पास आये तथा दूसरे दिन अनेक लोगों ने टेलीफोन किया। सभी से यह आश्वासन प्राप्त हो रहा था कि हम सब अन्त तक साथ रहेंगे। अगले कुछ दिनों तक शहर में कोई दुर्घटना नहीं हुई और शान्ति रही। शीघ्र ही बसें भी चालू हो गयीं, हालाँकि वे केवल दिन के समय ही चलती थीं।

फिर भय की एक और लहर ने धक्का लगाया। २८ जनवरी को बहुत सबेरे 'पीपुल्स सर्विस स्टेशन' और टैक्सी स्टैण्ड पर बम-विस्फोट हुआ। एक और बम श्री एलेन रॉबर्टसन के घर पर फूटा। ये साठ वर्ष के एक वृद्ध नीग्रो हैं तथा अस्पताल में काम करते हैं। यह पता नहीं चल सका कि इन लोगों पर आक्रमण क्यों किया गया। उसी दिन सबेरे मेरे घर पर भी एक ऐसा बम मिला, जो संयोग से फूट नहीं पाया था। इस बम में बारह डाइनामाइट की सलाखें लगी हुई थीं।

मैं शहर के दूसरे किनारे पर अपने मित्रों के साथ रह रहा था। कोरेटा और 'योकी' अटलाण्टा में थे। इसलिए मेरे घर पर पड़े हुए बम की सूचना मुझे टेलीफोन पर दी गयी। जब मैं घर जा रहा था तो रास्ते में मैंने बम-विस्फोट के शिकार बने हुए स्थानों का मुआयना किया। सौभाग्य से किसीको चोट नहीं आयी थी। वहाँ मैंने देखा कि पुलिसवाले दो नीग्रो नागरिकों को पकड़कर अपनी गाड़ी में ले जा रहे थे। इन नागरिकों का इतना ही अपराध था कि उन्होंने पुलिस से यह कहा था कि पुलिस ने बम-विस्फोट करनेवालों को पकड़ने का अब तक कोई सफल प्रयत्न नहीं किया है। इसी बात पर वे गिरफ्तार कर लिये गये। ये दोनों व्यक्ति बाद में इस आरोप पर दण्डित किये गये कि वे दंगा-फसाद उकसा रहे थे, जब कि उस दिन कोई दंगा नहीं हुआ। हालाँकि बम-विस्फोट के स्थानों पर एकत्रित भीड़

हिंसा करने के लिए तैयार थी। यह सिर्फ किसी इशारे की प्रतीक्षा कर रही थी। सौभाग्य से ऐसा इशारा हुआ ही नहीं।

अपने घर पर पहुँचकर अपने ओसारे से, जहाँ कि बम के निशान स्पष्ट थे, मैंने उपस्थित भीड़ से कहा : "कैसी भी परिस्थिति में हमें हिंसा का सहारा कदापि नहीं लेना है। मैं जानता हूँ कि मेरी इस सलाह को मानना बहुत कठिन काम है; खास तौर से ऐसी स्थिति में, जब हम लोग दस-दस बार हिंसा के शिकार हो चुके हों। परन्तु प्रभु ईसा का यही मार्ग है, क्रिश्चियन धर्म का भी यही मार्ग है। किसी भी तरह हमें इस बात पर भरोसा रखना होगा कि सहजप्राप्त कष्टों को सहने से मुक्ति प्राप्त होगी।" क्योंकि यह रविवार का सवेरा था, इसलिए मैंने लोगों से प्रार्थना की कि वे अपने-अपने घर जायँ और चर्च पहुँचने की तैयारी करें। इस तरह लोग अपने-अपने घर को विदा हुए।

इन बम-विस्फोटों की घटनाओं ने समाज के सामने यह जाहिर कर दिया कि मॉण्टगोमरी बड़ी तेजी के साथ अराजकता की स्थिति में पहुँच रहा है। इसलिए नगर के अधिकारियों ने बम-विस्फोटों के लिए जिम्मेदार लोगों का पता लगाने के लिए वास्तविक प्रयत्न चालू किया। बम-विस्फोट करनेवालों के बारे में सूचना देनेवालों को चार हजार डालर का इनाम देने की घोषणा की गयी। ३१ जनवरी को नीग्रो-समाज को यह सुनकर आश्चर्य हुआ कि ७ गोरे बम-विस्फोट की घटनाओं के सिलसिले में गिरफ्तार किये गये हैं। गुप्तचर-विभाग के अधिकारी श्री जे० डी० शोव को इन गिरफ्तारियों का श्रेय दिया गया। ये सभी लोग जमानत पर रिहा कर दिये गये। २५० डॉलर से ११,००० डॉलर तक की जमानतें भरी गयीं। नगर के न्यायालय ने गवाहियाँ लिये बिना ही इस मामले को मॉण्टगोमरी जिले के उच्च ज्यूरी के पास भेज दिया। उच्च ज्यूरी ने सात में से पाँच को अपराधी घोषित किया और दो को दोषमुक्त कहकर रिहा कर दिया।

प्रथम दो अभियुक्त, श्री रेमंड डी० यॉर्क तथा श्री सोनी काइल लिविंगस्टन, मॉण्टगोमरी जिला कचहरी में पेश किये गये। यह वही न्यायालय है, जहाँ सालभर पहले बहिष्कार-विरोधी मुकदमे के सिलसिले में मुझे पेश किया गया था। सरकारी वकील श्री विलियम एफ० थेटफोर्ड भी मेरे समयवाले ही थे।

हममें से अनेक लोग गवाह के रूप में बुलाये गये थे। मुकदमा प्रारम्भ होने के दिन न्यायालय दर्शकों से ठसाठस भरा हुआ था। इन दर्शकों में अधिक संख्या गोरे नागरिकों की थी। नीग्रो लोगों के बैठने के लिए मुश्किल से ही जगह बची थी। इन गोरे लोगों की वेशभूषा तथा इनका तौर-तरीका देखकर कोई भी व्यक्ति आसानी से यह समझ सकता था कि इनमें से अधिकतर लोग गरीब तथा अशिक्षित वर्ग से सम्बद्ध थे। यह एक ऐसा वर्ग था, जो कु क्लक्स क्लान के साथ अपने-आपको जोड़कर सुरक्षा महसूस करता था। जब हम लोग न्यायालय में पहुँचे, तब इन लोगों ने हमारी ओर बड़ी घृणाभरी नजर से देखा।

अभियुक्तों की ओर से बहस करनेवाले वकीलों ने दो दिन तक यह साबित करने की कोशिश की कि उनके पक्ष के लोग निर्दोष हैं। उन्होंने यह तर्क भी दिया कि मॉण्टगोमरी विकास संगम के लोग ही बम-विस्फोट की घटनाओं के लिए जिम्मेदार हैं, ताकि बाहर से उनको अधिकाधिक मात्रा में आर्थिक सहायता प्राप्त हो सके। दूसरे दिन की बहस के अन्तिम समय में मुझे गवाही देने के लिए बुलाया गया। मुझसे एक घण्टे तक ऐसे-ऐसे सवाल पूछे गये, जिनका बम-विस्फोट के मुकदमे से कोई सम्बन्ध नहीं था। वकीलों ने मेरे वक्तव्यों में से ऐसे-ऐसे उद्धरण उपस्थित किये, जिससे प्रभाव पड़े कि मैं ही हिंसा तथा घृणा को उभाड़नेवाला व्यक्ति हूँ। बहुत-से स्थानों पर इन वकीलों ने ऐसी बातों को ईजाद किया, जिनसे गोरे लोगों को अपमानित किया गया हो और उन्होंने उस बात का सम्बन्ध मेरे साथ जोड़ा।

दूसरी ओर श्री ग्रेटफोर्ड ने अभियुक्तों को सजा दिलवाने के लिए उसी प्रकार एड़ी-चोटी का जोर लगा दिया, जैसे उन्होंने एक साल पहले मेरे समय लगाया था। उन्होंने अपने पक्ष की तैयारी बहुत तगड़ी कर ली थी। अभियुक्तों ने लिखित रूप से दोष स्वीकार करके उन पर हस्ताक्षर भी कर दिये थे। पर इन सब प्रमाणों के बावजूद ज्यूरी ने उन्हें 'निरपराध' माना। अपने दोस्तों से घिरे हुए रेमंड टी० यॉर्क और सोनी काइल लिविंगस्टन मुस्कुराते हुए अदालत से निकल आये।

एक बार फिर से न्याय की हत्या हुई। पर यह अन्तिम हत्या थी। सारी गड़बड़ी अचानक ही समाप्त हो गयी। बसों में रंग-समन्वय की स्थिति अच्छी तरह चलने लगी। कुछ ही सप्ताहों में यातायात की व्यवस्था अपनी साधारण गति में आ गयी। गोरे और नीग्रो लोग साथ मिलकर बसों में यात्रा करने लगे। आखिरकार जब मॉण्टगोमरी की सड़कों पर रंग-समन्वय की इस नयी व्यवस्था के साथ बसें दौड़ने लगीं, तब भी आसमान नीचे नहीं गिरा। ●

# आज का मॉण्टगोमरी

## १०

"मॉण्टगोमरी की परिस्थिति आजकल कैसी है ?" मुझसे अक्सर यह सवाल पूछा जाता है। जहाँ कहीं भी मैं जाता हूँ वे लोग, जिन्होंने मॉण्टगोमरी के बस-आन्दोलन की खबरें पढ़ी हों अथवा इस सम्बन्ध में किसीका भाषण सुना हो, इस बात को जानने के लिए बहुत उत्सुकता प्रकट करते हैं कि बसों में रंग-समन्वय लागू होने के बाद वातावरण कैसा है। वे लोग यह जानना चाहते हैं कि इस नयी पद्धति को गोरे तथा नीग्रो लोगों ने सामान्यतया स्वीकार कर लिया है या नहीं ? जिस घटना ने सालभर से अधिक समय तक देशभर में और विश्व के अनेक भागों में अखबारों के प्रथम पृष्ठों पर स्थान पाया, उसका कोई स्थायी परिणाम निकला है या नहीं ?

शुरू में जब यह सवाल मेरे सामने रखा गया, तब तुरत ही कोई उत्तर देना कठिन था। इस तरह की घटनाओं का मूल्यांकन करने के लिए बहुत-से तथ्यों और पहलुओं पर ध्यान देना पड़ता है। साथ ही इस तरह के आन्दोलन का प्रभाव तुरन्त ही सामने नहीं आ जाता। परन्तु २१ दिसम्बर १९५६ का दिन रंग-समन्वय का पहला दिन था और उसके बाद ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों बसों में चलनेवाला रंगभेद अपने-आप छीजता गया। इसलिए उपर्युक्त सवाल का उत्तर भी धीरे-धीरे साफ होता गया। अब मैं निश्चिन्त होकर लोगों से कह सकता था: "मॉण्टगोमरी में आज की स्थिति पहले से बहुत बेहतर है।"

बसों में नीग्रो और श्वेतांग दोनों नागरिकों को अब समान रूप से यह अधिकार मिल गया है कि वे किसी भी खाली सीट पर बैठ सकें। नीग्रो युवक, खास तौर से स्कूल और कॉलेजों के विद्यार्थी और पढ़े-लिखे नीग्रो नागरिक इस अधिकार का अब पूरा उपयोग करने लगे हैं। उधर बहुत-से बुजुर्ग नीग्रो और घरेलू नौकरियाँ करनेवाले नीग्रो अभी भी पीछे की सीटों पर ही बैठना पसन्द करते हैं। इसका कारण कुछ तो उनके मन का भय है और कुछ उनकी जन्मगत आदतें। श्वेतांग लोगों के मुहल्लों में चलनेवाली बसों के नीग्रो यात्री आम तौर पर पीछे की सीटों पर ही बैठते हैं। नीग्रो लोगों के मुहल्ले में चलनेवाली बसों के गोरे यात्री आम तौर पर या तो ड्राइवर के नजदीक की सीटों पर बैठते हैं या खड़े रहते हैं। फिर भी नीग्रो यात्रियों के पीछे गोरे यात्रियों को बैठे हुए अक्सर देखा जा सकता है। नीग्रो और गोरे यात्री साधारणतया एक-दूसरे के बगल में बैठना जान-बूझकर टाल देते हैं। फिर भी कभी-कभी ऐसा भी होते देखा गया है कि किसी नीग्रो यात्री की बगल की सीट पर श्वेतांग यात्री आकर बैठ गया हो।

इस बात को मद्देनजर रखते हुए कि हजारों लोग बसों में प्रति-दिन यात्रा करते हैं, नीग्रो और श्वेतांग यात्रियों के बीच अप्रिय/ दुर्व्यवहार

की घटनाएँ आश्चर्यजनक रूप से बहुत ही कम घटीं। फिर भी कुछ ऐसी घटनाएँ तो हुईं ही। बैठने की सीट पर कब्जा करने के लिए नीग्रो और गोरे यात्रियों को कभी-कभी आपस में झगड़ते हुए भी पाया गया। एक बार एक गोरे यात्री ने एक नीग्रो महिला को पेंच खोलने के औजार से मारा। उस समय वह तथा उसके साथ की दो अन्य महिलाएँ अहिंसा का सिद्धान्त भूल गयीं तथा बदले में उस श्वेतांग यात्री को बुरी तरह पीटा। यह मामला न्यायालय तक पहुँचा और इस अवसर पर न्यायाधीश ने सचमुच न्याय से काम लेकर उस गोरे यात्री को गलत व्यवहार करने का आरोप लगाकर दण्डित किया और उन महिलाओं से कुछ भी नहीं कहा।

एक दूसरी घटना में एक श्वेतांग महिला ने एक नीग्रो यात्री पर यह आरोप लगाया कि वह उसके पास की सीट पर इसलिए बैठा कि उससे घनिष्ठता कर सके। न्यायालय में भी उस नीग्रो को दोषी ठहराया गया। हम लोग इस प्रकार की दुर्घटनाओं के काफी मात्रा में होने की आशंका कर रहे थे। हमें यह भय था कि रंग-समन्वय के विरोधी लोग इस तरह की श्वेतांग महिलाओं को बसों में जान-बूझकर भेजेंगे, ताकि वे आपसी दुर्व्यवहार की शिकायतें अधिक संख्या में करके कुछ समस्याएँ उपजा दें। पर खुशी की बात है कि हमारा वह भय मिथ्या सिद्ध हुआ।

सर्वोच्च न्यायालय का फैसला मॉण्टगोमरी पहुँचने के पहले ही बस-कम्पनीवालों ने अपनी रंगभेद की नीति छोड़ दी थी तथा अपने कर्मचारियों को सभी यात्रियों के साथ समान व्यवहार करने की शिक्षा देनी शुरू कर दी थी। रंगभेद की सूचना देनेवाले सभी निशान बसों में से हटा लिये गये थे। बसों के ड्राइवर, जो इस लम्बे आन्दोलन के लिए शायद खास तौर से उत्तरदायी थे, अब अभद्र व्यवहार को छोड़ चुके थे। उनमें से कुछ तो बहुत ही नम्र व्यवहार करने लगे थे। प्रतिदिन आने-जानेवाले परिचित नीग्रो यात्रियों का वे 'सुप्रभातम्' कहकर अभिवादन भी करते थे। यद्यपि बस-कम्पनीवालों ने हमारे आन्दोलन

शुरू में जब यह सवाल मेरे सामने रखा गया, तब तुरत ही कोई उत्तर देना कठिन था। इस तरह की घटनाओं का मूल्यांकन करने के लिए बहुत-से तथ्यों और पहलुओं पर ध्यान देना पड़ता है। साथ ही इस तरह के आन्दोलन का प्रभाव तुरन्त ही सामने नहीं आ जाता। परन्तु २१ दिसम्बर १९५६ का दिन रंग-समन्वय का पहला दिन था और उसके बाद ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों बसों में चलनेवाला रंगभेद अपने-आप छीजता गया। इसलिए उपर्युक्त सवाल का उत्तर भी धीरे-धीरे साफ होता गया। अब मैं निश्चिन्त होकर लोगों से कह सकता था: "मॉण्टगोमरी में आज की स्थिति पहले से बहुत बेहतर है।"

बसों में नीग्रो और श्वेतांग दोनों नागरिकों को अब समान रूप से यह अधिकार मिल गया है कि वे किसी भी खाली सीट पर बैठ सकें। नीग्रो युवक, खास तौर से स्कूल और कॉलेजों के विद्यार्थी और पढ़े-लिखे नीग्रो नागरिक इस अधिकार का अब पूरा उपयोग करने लगे हैं। उधर बहुत-से बुजुर्ग नीग्रो और घरेलू नौकरियाँ करनेवाले नीग्रो अभी भी पीछे की सीटों पर ही बैठना पसन्द करते हैं। इसका कारण कुछ तो उनके मन का भय है और कुछ उनकी जन्मजात आदतें। श्वेतांग लोगों के मुहल्लों में चलनेवाली बसों के नीग्रो यात्री आम तौर पर पीछे की सीटों पर ही बैठते हैं। नीग्रो लोगों के मुहल्ले में चलनेवाली बसों के गोरे यात्री आम तौर पर या तो ड्राइवर के नजदीक की सीटों पर बैठते हैं या खड़े रहते हैं। फिर भी नीग्रो यात्रियों के पीछे गोरे यात्रियों को बैठे हुए अक्सर देखा जा सकता है। नीग्रो और गोरे यात्री साधारणतया एक-दूसरे के बगल में बैठना जान-बूझकर टाल देते हैं। फिर भी कभी-कभी ऐसा भी होते देखा गया है कि किसी नीग्रो यात्री की बगल की सीट पर श्वेतांग यात्री आकर बैठ गया हो।

इस बात को मद्देनजर रखते हुए कि हजारों लोग बसों में प्रति-दिन यात्रा करते हैं, नीग्रो और श्वेतांग यात्रियों के बीच अभद्रव्यवहार

की घटनाएँ आश्चर्यजनक रूप से बहुत ही कम घटीं। फिर भी कुछ ऐसी घटनाएँ तो हुई ही। बैठने की सीट पर कब्जा करने के लिए नीग्रो और गोरे यात्रियों को कभी-कभी आपस में झगड़ते हुए भी पाया गया। एक बार एक गोरे यात्री ने एक नीग्रो महिला को पेंच खोलने के औजार से मारा। उस समय वह तथा उसके साथ की दो अन्य महिलाएँ अहिंसा का सिद्धान्त भूल गयीं तथा बदले में उस श्वेतांग यात्री को बुरी तरह पीटा। यह मामला न्यायालय तक पहुँचा और इस अवसर पर न्यायाधीश ने सचमुच न्याय से काम लेकर उस गोरे यात्री को गलत व्यवहार करने का आरोप लगाकर दण्डित किया और उन महिलाओं से कुछ भी नहीं कहा।

एक दूसरी घटना में एक श्वेतांग महिला ने एक नीग्रो यात्री पर यह आरोप लगाया कि वह उसके पास की सीट पर इसलिए बैठा कि उससे घनिष्ठता कर सके। न्यायालय में भी उस नीग्रो को दोषी ठहराया गया। हम लोग इस प्रकार की दुर्घटनाओं के काफी मात्रा में होने की आशंका कर रहे थे। हमें यह भय था कि रंग-समन्वय के विरोधी लोग इस तरह की श्वेतांग महिलाओं को बसों में जान-बूझकर भेजेंगे, ताकि वे आपसी दुर्व्यवहार की शिकायतें अधिक संख्या में करके कुछ समस्याएँ उपजा दें। पर खुशी की बात है कि हमारा वह भय मिथ्या सिद्ध हुआ।

सर्वोच्च न्यायालय का फैसला मॉण्टगोमरी पहुँचने के पहले ही बस-कम्पनीवालों ने अपनी रंगभेद की नीति छोड़ दी थी तथा अपने कर्मचारियों को सभी यात्रियों के साथ समान व्यवहार करने की शिक्षा देनी शुरू कर दी थी। रंगभेद की सूचना देनेवाले सभी निशान बसों में से हटा लिये गये थे। बसों के ड्राइवर, जो इस लम्बे आन्दोलन के लिए शायद खास तौर से उत्तरदायी थे, अब अभद्र व्यवहार को छोड़ चुके थे। उनमें से कुछ तो बहुत ही नम्र व्यवहार करने लगे थे। प्रतिदिन आने-जानेवाले परिचित नीग्रो यात्रियों का वे 'सुप्रभातम्' कहकर अभिवादन भी करते थे। यद्यपि बस-कम्पनीवालों ने हमारे आन्दोलन

के अन्तिम दिनों में इस बात का इशारा किया था कि वे नीग्रो ड्राइवरों को भी अपनी कम्पनी में भरती करने के लिए तैयार हैं; परन्तु अभी तक इस बात पर अमल नहीं किया गया है।

हमने बसों में यात्रा प्रारम्भ करने के पहले लोगों को जो सुझाव दिये थे तथा शान्ति रखने की बात का जो प्रचार किया था, हमारा विश्वास है कि उसका बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा और इसीलिए इतनी शान्ति रही। अहिंसक व्यवहार का प्रशिक्षण देनेवाले हमारे शिविर तथा इश्तहार इन नारों को घर-घर पहुँचाने में सफल हो सके कि "अगर कोई धक्के दे, तो वापस धक्का मत दो; अगर कोई गाली दे, तो वापस गाली मत दो।" इसलिए टेढ़ी बातें भी नम्र बातों के सामने पिघल जाती थीं। हम लोग श्वेतांग यात्रियों तथा श्वेतांग समाज को यह नम्रतापूर्वक बता देना चाहते थे कि हमें अपनी विजय पर कोई घमंड नहीं है और हम बसों पर कब्जा करने नहीं जा रहे हैं। ऐसी हालत में, जब कि श्वेतांग समाज को हमारा यह रुख मालूम था, उनकी ओर से किसी भी आक्रमण के लिए कोई कारण नहीं रह गया।

नीग्रो और गोरों के आपसी सम्बन्ध इस समय और-और क्षेत्रों में भी बेहतर हैं। बसों में रंग-समन्वय की पद्धति के प्रारम्भ होते ही बम-विस्फोट अथवा मारपीट की जो घटनाएँ हुई थीं, वे भी अचानक ही समाप्त हो गयीं। प्रथम दो बम-विस्फोटक अपराधियों को तो छोड़ ही दिया गया था और शेष को भी क्षमादान दे दिया गया। बहिष्कार-विरोधी कानून के अन्तर्गत गिरफ्तार नीग्रो नागरिकों को भी इस शर्त पर क्षमादान दे दिया गया कि मैं अपने ऊपर लगाया हुआ पाँच सौ डालर का जुर्माना भर दूँ। मुझे डर था कि इस तरह का जुर्माना भरने का कहीं यह अर्थ न हो कि हमारा आन्दोलन बम-विस्फोटक व्यक्तियों की निर्दय हिंसा की बराबरी पर लिया जा रहा है। इसलिए यह जुर्माना भरते हुए मैं हिचकिचा रहा था। दुर्भाग्य से इस मुकदमे की कार्यवाही की प्रतिलिपि तैयार करने में जो लम्बा समय बीत रहा था, उसके कारण मुझ

ऐसी कानूनी दिक्कतें सामने आयीं कि इस मामले को न्यायालय से हटा दिया गया। इसका अर्थ यह हुआ कि मेरे मामले में किसी भी कानूनी कार्रवाई के लिए कुछ खास तरह की कानूनी औपचारिकताओं में से गुजरना जरूरी था। इन सारी परेशानियों में समय और शक्ति का अपव्यय करने की अपेक्षा मैंने थोड़ा समझौतावादी बनना ही उचित समझा और जुर्माना भर दिया।

इस समय मॉण्टगोमरी में नीग्रो नागरिकों को जितना आदर प्राप्त है, उतना शायद इससे पहले कभी भी नहीं था। इस संघर्ष के बाद बहुत-से श्वेतांग नागरिक यह बात, जिसे वे आन्दोलन के दौरान में नहीं कह सकते थे, कहने को तैयार हैं कि "हमें उन नीग्रो लोगों के बारे में यह मानना ही होगा। नीग्रो लोगों के पास सिद्धान्त थे। वे उन सिद्धान्तों पर दृढ़ भी थे और वह दृढ़ता संगठित भी थी। उन्होंने अपने आन्दोलन को योजनाबद्ध और व्यवस्थित रूप से चलाया।" कुछ दूसरे लोग यह भी कहते हैं कि "हम यह नहीं सोच सकते थे कि नीग्रो लोगों में इतनी योजना-शक्ति थी।" मैं यह विश्वास करता हूँ कि श्वेतांग लोगों में इस तरह की सद्भावनापूर्ण प्रतिक्रिया इसलिए हुई कि हम अहिंसा के मार्ग पर दृढ़ रहे। मॉण्टगोमरी में श्वेतांग नागरिकों का एक भी ऐसा घर नहीं है, जो श्वेतांग-नीग्रो-संघर्ष के कारण क्षति-ग्रस्त हुआ है। युद्ध में आहत लोग युद्ध के बाद भी कटुता को जीवित रखनेवाले होते हैं। सौभाग्य से मॉण्टगोमरी में किसीको भी आहत नहीं होना पड़ा। शहर के बाजारों और दूकानों में नीग्रो ग्राहक आदर के साथ देखे जाने लगे हैं और अधिकांश स्थानों पर नीग्रो लोगों के साथ भद्रतापूर्ण व्यवहार किया जाता है। अब नीग्रो लोगों को 'श्रीमान्' अथवा 'महोदया' आदि शब्दों के साथ पुकारा जाना असाधारण बात नहीं है। 'मॉण्टगोमरी एडवरटाइजर' ने भी अपनी यह नीति बना ली है कि अपने पृष्ठों पर जहाँ नीग्रो-समाज के सम्बन्ध में समाचार प्रकाशित हों, वहाँ आदरपूर्ण शब्दों का व्यवहार किया जाय।

प्रभाव मॉण्टगोमरी पर भी पड़ा। इसी तरह से मॉण्टगोमरी बस-आन्दोलन की सफलता ने मैकन जिले के नीग्रो लोगों को अपना आन्दोलन सीखना, परन्तु अहिंसात्मक पद्धति के साथ चलाने के लिए प्रेरित करने में मदद की।

राज्य ने सरकिट न्यायालय में अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था के विरुद्ध एक अस्थायी प्रतिबन्ध का आदेश दिलवाकर नीग्रो-आन्दोलन पर एक और प्रहार किया। जून १९५६ में यह आदेश लागू हुआ। उसी समय अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था के अनेक वकील बसों में रंगभेद के विरुद्ध हमारे मुकदमे के लिए संघीय न्यायालयों में सफल संघर्ष कर रहे थे। पर स्वयं इस संस्था पर जो प्रतिबन्ध लगा, वह अभी भी लागू है।

मॉण्टगोमरी नगर के कमिश्नरों ने भी अनेक नीग्रो-विरोधी प्रस्ताव और कानून पास किये हैं। नगर के नये कानून के अनुसार नीग्रो और गोरे लोगों का साथ-साथ खेलना अथवा किसी भी खेल में मिलकर भाग लेना अपराध घोषित कर दिया गया है। यहाँ तक कि एक ही खेल के मैदान या बाग-बगीचे का इस्तेमाल दोनों वर्गों के लोग नहीं कर सकते। कुछ वर्ष पहले मॉण्टगोमरी की बेसबॉल टीम में एक या दो नीग्रो सदस्य भी हुआ करते थे। परन्तु इस परम्परा के विरुद्ध विद्रोह उठा तथा अब ऐसी किसी टीम में नीग्रो खिलाड़ियों का होना असम्भव कर दिया गया।

शहर के नये आदेश के अन्तर्गत एक नीग्रो व्यक्ति मात्र इसलिए गिरफ्तार किया गया कि वह श्वेतांग लोगों के बाग में से गुजर रहा था। मॉण्टगोमरी देखने के लिए आया हुआ बाहर का एक परिवार भी केवल इसलिए गिरफ्तार कर लिया गया कि पिता ने अपने बच्चों को श्वेतांग लोगों के एक चिड़ियाघर में बन्द जानवरों को देखने दिया।

परन्तु स्थानीय न्यायालय अब अपने अधिकारों के सम्बन्ध में निश्चित नहीं है। उन्हें यह अच्छी तरह से याद रहता है कि सर्वोच्च न्यायालय

ने वहाँ के रंगभेद सम्बन्धी उनके निर्णय में कैसा संशोधन कर दिया था। इन न्यायालयों को यह डर रहता है कि उच्च न्यायालय कभी भी सार्वजनिक सुविधाओं के स्थानों पर चलनेवाले रंगभेद को नष्ट-भ्रष्ट कर सकता है, अगर ऐसे मामले वाशिंगटन तक पहुँच जायँ। इसीलिए स्थानीय न्यायालय ने श्वेतांग लोगों के बाग में से गुजरनेवाले नीग्रो नागरिक के विरुद्ध का मुकदमा रद्द कर दिया, क्योंकि उस नीग्रो ने अपनी 'भूल' स्वीकार कर ली थी। रंगभेद-कानून को तोड़नेवालों के विरुद्ध चलाये जानेवाले मामलों में प्रायः असद् व्यवहार का ही आरोप लगाया जाता है और इस तरह उस मामले को सर्वोच्च न्यायालय तक पहुँचाये जाने की सम्भावनाओं को टालने की कोशिश की जाती है।

सभाओं में राजनैतिक नेताओं को अब भी गोरे श्रोताओं की ओर से सबसे तीव्र हर्षध्वनि तभी मिलती है, जब वे प्राण-पण से रंग-समन्वय के विरुद्ध लड़ने की अपनी प्रतिज्ञा की घोषणा करते हैं। पर फिर भी श्रोताओं में उनके प्रति कुछ अधिक विश्वास नहीं मिलता। कु क्लक्स क्लान जैसी संस्था खुले तौर पर सभी लोगों की तरफ से निन्दा का शिकार बनती है। हालाँकि इस संस्था के प्रति दिखाया जानेवाला विरोध एक हद तक दिखावटी ही है, क्योंकि श्वेतांग नागरिक परिषद् ने कु क्लक्स क्लान के सभी मुख्य उद्देश्यों को अपना ही लिया है। यद्यपि यह परिषद् भी अब मॉण्टगोमरी में कमजोर परिस्थिति में से ही गुजर रही है। इस परिषद् को मिलनेवाली आर्थिक सहायता भी तब से लड़खड़ा गयी है, जब से वहाँ में रंग-समन्वय पूरी तरह से चालू हो गया है। इस तरह की संस्थाएँ अब रंग-समन्वय को रोककर नहीं रख सकतीं, यह प्रमाणित हो जाने से बहुत-से आर्थिक सहायता देनेवाले सदस्यों ने यह सोचना प्रारम्भ कर दिया कि वे स्वयं अपने धन का कोई बेहतर उपयोग कर सकते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि मॉण्टगोमरी के नीग्रो-समाज का क्या हाल है? इस प्रश्न के उत्तर में भी यह कहा जा सकता है कि बस-आन्दोलन

ने स्थायी और प्रभावशाली परिणाम उत्पन्न किये हैं। हालाँकि आन्दोलन के समयवाली जबरदस्त एकता तो कुछ क्षीण हुई है, फिर भी आज भी विभिन्न वर्गों, धार्मिक सम्प्रदायों और विभिन्न उम्र के लोगों के बीच जो निकटता की भावना है, वह इसके पहले कभी नहीं थी। मॉन्टगोमरी के ऐसे नीग्रो लोगों में भी, जो सम्भ्रान्त परिवारों से सम्बद्ध नहीं हैं, जिस तरह की आत्मप्रतिष्ठा विकसित हुई है, वह उनके पहनने, चलने, साफ-सुथरा रहने आदि से जाहिर हो जाती है। जैसा कि एक नीग्रो द्वारपाल ने एक बार एक पत्रकार को बताया : "अब हमारे सिर ऊँचे हो गये हैं। अब हम अपने सिर कभी नीचे नहीं झुकायेंगे। सिवा ईश्वर के अब किसीके भी सामने हमारा सिर नीचा नहीं होगा।"

नीग्रो लोगों के अपने जीवन की जो उन्नति हुई, वह भी विशेष महत्त्व की बात है। शराबी लोगों ने बड़ी मात्रा में शराब पीना छोड़ दिया है। अन्य अपराधों के तथा तलाक के आँकड़े देखने पर ज्ञात होता है कि इन दोनों में भी कमी हुई है। मॉन्टगोमरी के एक नीग्रो अस्पताल की एक नर्स ने बताया कि कई सालों से उसका चर्च जाना छूट गया था, परन्तु जब से यह आन्दोलन चला, तब से प्रत्येक रविवार की सुबह उसके लिए चर्च जाना सम्भव हो गया है। इसका अर्थ यह हुआ कि शनिवार की रातों को उतना दंगा-फसाद नहीं होता था, जैसा कि इसके पहले हुआ करता था। चारों ओर एक विशि[illegible]ता की भावना के दर्शन होने लगे थे। यहाँ तक कि नीग्रो-समाज के बच्चों ने भी एक खास तरह का स्वत्व-सा प्रकट करना प्रारम्भ कर दिया था।

मॉन्टगोमरी विकास संघ ने अपना बजट तथा अपने कर्मचारी कम कर दिये हैं। परन्तु साथ ही उसने अपनी सामाजिक विकास की अनेक प्रवृत्तियों को विस्तृत भी किया है। इस संस्था ने भी मेंट में की नागरिक अधिकारों सम्बन्धी मुकदमों की देखरेख के लिए पूरे समय के लिए अपना वकील नियुक्त कर लिया है। इस संस्था की ओर से प्रति सप्ताह एक सार्वजनिक सभा का आयोजन चल ही रहा है। इन सभाओं

में धार्मिक कार्यक्रमों के अलावा मतदान का प्रशिक्षण देने के कार्यक्रम भी चलते हैं। इन सभाओं के पहले प्रौढ़ शिक्षण का कार्यक्रम भी रखा जाता है और उसमें काफी अच्छी उपस्थिति होती है, जिससे यह प्रकट होता है कि नीग्रो लोगों में अपने विकास के लिए एक नयी स्फूर्ति जाग रही है।

मॉण्टगोमरी विकास संगम ने एक दससूत्रीय कार्यक्रम भी चलाया, जिसको हम लोग 'भविष्य-दर्शन' के नाम से पुकारते थे। इसके अन्तर्गत सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्रों में लोगों को शिक्षित करने का प्रयत्न हमने चलाया। सामाजिक सम्बन्ध, वैयक्तिक योग्यता, आर्थिक विकास, स्वास्थ्य, मनोरंजन, कानून, जन-सम्पर्क, सांस्कृतिक प्रगति और आध्यात्मिक संपदा जैसे विषय हमारे दससूत्रीय कार्यक्रम में शामिल थे। इस स्थायी कार्यक्रम में से कुछ तो अभी भी कागज पर ही हैं, और कुछ को क्रियान्वित भी किया जा चुका है। इन कार्यक्रमों में से सबसे अधिक जरूरी मानकर जो कार्यक्रम अविलम्ब अपनाया गया, वह था, मताधिकार को प्राप्त करने लायक उम्र के सभी नीग्रो लोगों का मताधिकार-प्राप्ति का रजिस्ट्रेशन करवाना। यह काम अभी भी बहुत दुष्कर सिद्ध हो रहा है। इस असाध्यता के लिए मुख्य रूप से श्वेतांग रजिस्ट्रारों के लगातार विरोध को ही जिम्मेदार मानना चाहिए। दो हजार नीग्रो लोगों ने पिछले दो वर्षों में अपने नाम रजिस्ट्रेशन के लिए भेजे। परन्तु उनमें से मुश्किल से दस प्रतिशत लोगों के नाम ही मतदाताओं के रजिस्टर में चढ़ पाये होंगे।

इस तरह से मॉण्टगोमरी के नीग्रो लोगों की समस्याएँ हल होने की स्थिति से अभी बहुत दूर हैं। फिर भी यह स्पष्ट है कि ५ दिसम्बर, १९५५ से पहले की अपेक्षा अब परिस्थिति बहुत बेहतर है। नागरिकों में आपस का आदर तथा अपने-आपके प्रति सम्मान बढ़ा है और सबसे बड़ी उपलब्धि तो यह है कि हमारे अनुभव ने यह *सिद्ध कर दिया है कि बिना हिंसा के भी समाज का परिवर्तन होना सम्भव है।* ●

# हमारी अगली मंज़िल क्या हो ?

## ११

मॉण्टगोमरी का बस-आन्दोलन अब इतिहास बन गया है। जब रंग-समन्वय के आधार पर प्रतिदिन शहर में से बसें गुजरती हैं, तो वे अपने यात्रियों के साथ-साथ एक अर्थपूर्ण प्रतीकवाद भी अपने में समेट-कर चलती हैं। बहुसंख्यक यात्रियों के बीच का आपसी समन्वय न केवल मनुष्य के प्रति मनुष्य के सद्भाव का प्रमाण है, बल्कि भविष्य के रंग-समन्वयवादी समाज में शान्ति की उपयोगिता पर भी प्रकाश डालता है। यहाँ-वहाँ यात्रियों के बीच जो दुःखपूर्ण घटनाएँ हो जाती हैं, वे इस बात की याद दिलाती हैं कि मॉण्टगोमरी के जीवन में अभी भी ऐसे क्षेत्र हैं, जहाँ रंगभेद के कारण वर्गीय फूट तथा स्थानिक संघर्षों की संभावनाएँ छिपी हैं। रंगभेद अभी भी पूरे दक्षिण में एक वास्तविकता है।

अब आगे हम कहाँ जायँ ? मॉण्टगोमरी की समस्या पूरे राष्ट्र की समस्या का ही एक लघुस्वरूप है। अब आगे हम कहाँ जायँ, यह सवाल केवल मॉण्टगोमरी में ही नहीं है, बल्कि पूरे दक्षिण में और पूरे राष्ट्र में है। सालों से विकसित होनेवाली शक्तियों ने ही श्वेतांग और नीग्रो जाति के सम्बन्धों में वर्तमान संघर्ष को जगाया है। वे कौन-सी शक्तियाँ हैं, जिन्होंने इस संघर्ष को जगाया है ? इस संघर्ष का अन्तिम परिणाम क्या होगा ? क्या हम एक सामाजिक और राजनैतिक विनाश के चक्र में फँसे हैं या हमारे पास ऐसा कोई विधायक मार्ग है कि जिसके द्वारा हम भ्रातृत्व तथा समन्वय के साथ जीवन जीने का आदर्श प्राप्त कर सकें ?

पिछली आधी शताब्दी ने अमेरिकन नीग्रो के जीवन में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन देखे हैं। दो विश्व-युद्धों की सामाजिक हलचल, अमेरिका के जीवन में भयंकर शक्तिहीनता का काल और मोटरकारों के व्यापक विस्तार ने यह न केवल सम्भव, बल्कि आवश्यक बना दिया है कि अब नीग्रो-समाज अपने ग्रामीण रहन-सहन और उसके कारण अलग-थलग रहने की परिस्थिति से बाहर निकले। कृषि-जीवन का ह्रास तथा उद्योगों का निरन्तर विकास होने से बड़ी संख्या में नीग्रो लोग शहरी क्षेत्रों में आकर बसे हैं तथा उनकी आर्थिक स्थिति में लगातार प्रगति हुई है। उनके जीवन में जो नये सम्पर्क हुए हैं, उसके कारण उनका दृष्टिकोण भी व्यापक हुआ है तथा शैक्षणिक उन्नति की संभावना भी बढ़ी है। इन सभी तथ्यों ने मिलकर नीग्रो लोगों को अपने बारे में नयी दृष्टि से विचार करने के लिए बाध्य कर दिया है। उनके जीवन के बढ़ते हुए अनुभवों ने यह चेतना पैदा की है कि वे भी इस व्यापक समाज के क्षेत्र में बराबरी के हिस्सेदार हैं। इसलिए नीग्रो लोगों ने यह चाहा है कि उन्हें भी नयी जिम्मेदारियों के साथ बराबरी के अधिकार और अवसर प्राप्त होने चाहिए। दासता और रंगभेद के भयंकर दुष्परिणाम के रूप में दुःखद हीनभाव में पड़े हुए नीग्रो लोग अब अपने-आपको नये मूल्यों के सन्दर्भ में आँक रहे हैं। एक नीग्रो यह महसूस

करने लगा है कि वह भी एक आदमी है। उसका धर्म उसे सिखाता है कि ईश्वर अपने सभी बच्चों से प्रेम करता है और किसी मनुष्य की महत्त्वपूर्ण चीज उसकी कोई खासियत नहीं, बल्कि उसकी मौलिकता ही है। किसी मनुष्य के बाल कैसे हैं अथवा उसकी चमड़ी का रंग कैसा है, इसके बजाय आत्मा के अन्दर ईश्वर के प्रति जो निष्ठा है, उसीका सच्चा महत्त्व है।

यह बढ़ता हुआ आत्मसम्मान नीग्रो लोगों को इस बात के लिए प्रेरणा देता है कि वे दृढ़प्रतिज्ञता के साथ तब तक संघर्ष और बलिदान करते जायँ, जब तक प्रथम श्रेणी की नागरिकता प्राप्त न हो जाय। यही मॉण्टगोमरी की कहानी का असली अर्थ है। मॉण्टगोमरी के बस-आन्दोलन को तब तक नहीं समझा जा सकता, जब तक कोई यह न समझ ले कि दक्षिण में एक नया नीग्रो-समाज बन रहा है, जिसके सामने अपनी प्रतिष्ठा तथा अपने भविष्य के लिए नयी चेतना जाग उठी है।

नीग्रो लोगों के अपने-आपके बारे में बदली हुई इस कल्पना के साथ-ही-साथ लाखों श्वेतांग अमेरिकनों के हृदय में भी रंगभेद को लेकर एक नैतिक चेतना जाग रही है। जब से आजादी की घोषणा पर हस्ताक्षर किये गये, तभी से अमेरिका ने जाति ( रंग ) के प्रश्न पर दुहरे व्यक्तित्व का प्रदर्शन किया है। उसने एक ओर तो बड़े गर्व के साथ जनतन्त्र को स्वीकार किया तथा दूसरी ओर जनतन्त्र विरोधी सिद्धान्तों का आचरण किया। इस तरह अमेरिका दो घोड़ों पर पैर रखकर चल रहा है। दासता की तरह ही रंगभेद की वास्तविकता भी हमेशा ही जनतन्त्र तथा जूडियो-क्रिश्चियन धर्म के सामने आती रही है। निश्चय ही रंगभेद और उसके आधार पर चलनेवाला भेदभाव एक ऐसे राष्ट्र के लिए, जो मनुष्यमात्र की समानता के सिद्धान्त पर स्थापित किया गया हो, अजीब विरोधाभास प्रकट करता है। इस विरोधाभास ने उत्तर और दक्षिण दोनों के श्वेतांग समाज के मानस को हिला दिया है और उनमें से बहुत-से लोगों ने यह समझ लिया है कि रंगभेद बुनियादी रूप से गलत है।

जब सर्वोच्च न्यायालय ने सार्वजनिक स्कूलों में चलनेवाले रंगभेद को गैरकानूनी घोषित किया, तब तो उपर्युक्त विचार अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गया। १७ मई १९५४ का दिन सभी सद्भावनाशील मनुष्यों के लिए जबरदस्ती लादी हुई एक लम्बी रात्रि का अन्त करनेवाला था। स्पष्ट भाषा में न्यायालय ने घोषित किया 'भेदभावपूर्ण समानता' की सुविधाएँ अन्ततोगत्वा असमानतापूर्ण ही हैं और किसी बालक को उसके रंग के आधार पर भेदभाव का शिकार बनाना कानून की समान सुरक्षा से वंचित करने जैसा ही है। न्यायालय के इस निर्णय से उन लाखों अधिकारवंचित नीग्रो लोगों के हृदय में आशा का संचार हुआ, जिन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्त करने का केवल स्वप्न ही देखने की हिम्मत की थी। इस आदेश ने नीग्रो लोगों को प्रतिष्ठा की अनुभूति का नया मार्ग दिखाया था एवं न्याय प्राप्त करने के लिए महान् निष्ठा प्रदान की थी।

नीग्रो अमेरिकन लोगों को सभी तरह के दमन से स्वतन्त्रता प्राप्त करने की प्रेरणा उसी गहरी उत्कण्ठा से प्राप्त हो रही है, जहाँ से कि संपूर्ण विश्व के दमित लोगों को प्राप्त होती है। एशिया तथा अफ्रीका में उठनेवाली उन लोगों की आवाजें, जो लम्बे समय से उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के शिकार रहे हैं स्वतन्त्रता एवं मानवीय प्रतिष्ठा हासिल करने की तड़प को प्रकट करती हैं। इसलिए सही अर्थों में अमेरिका का यह नीग्रो-संघर्ष विश्व-संघर्ष का ही एक अंग है।

प्रतिष्ठा की नयी भावना के साथ निकली हुई शाखा की तरह नीग्रो-समाज में जो असाधारण परिवर्तन हुए हैं, केवल वे ही इस संघर्ष और संकट के लिए जिम्मेदार नहीं हैं। अगर पूरा समाज इन ऐतिहासिक परिवर्तनों को सद्भावनापूर्वक स्वीकार कर ले तो संकट या संघर्ष की कोई आवश्यकता ही नहीं रह जायगी। यह संघर्ष तभी पैदा हुआ, जब नीग्रो-समाज को अपने न्यायोचित उद्देश्य को प्राप्त करने के प्रयत्न में दुराग्रह तथा हठतापूर्ण विरोध का सामना करना पड़ा। जनतान्त्रिक समानता के सिद्धान्तों पर आधारित नयी समाज-व्यवस्था का मुकाबला परम्परावाद

तथा दासता के सिद्धान्तों पर आधारित पुरानी समाज-व्यवस्था के साथ हुआ। यह संघर्ष किन्हीं बाहरी योद्धाओं द्वारा पैदा नहीं किया गया था। अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था के लोगों की तरफ से अथवा मॉण्टगोमरी के आन्दोलनकारियों की तरफ से अथवा सर्वोच्च न्यायालय की तरफ से भी कोई संकट पैदा नहीं किया गया था। जब अमेरिकन जनतन्त्र का उत्कृष्ट सिद्धान्त, जिसे लगभग दो शताब्दियों से हमने अधूरे रूप में स्वीकार कर रखा था, अपने-आपको परिपूर्ण बनाने लगा, तब उसे निर्दय विरोध का सामना करना पड़ा। यह विरोध आज़ादी के विकास को दबाने की चेष्टा साबित हुआ। इसीने इस संघर्ष को जन्म दिया।

यह विरोध कभी-कभी तो अत्यन्त निकृष्ट सीमा तक पहुँच गया है। बहुत-से राज्यों ने इस विरोध का खुले तौर पर विरोध किया है। बहुत-से दक्षिणी राज्यों की विधानसभाओं में इस संघर्ष को बीच में रोकने और उसे विफल कर देने की आवाज़ बराबर उठती है। बहुत-से सरकारी अधिकारी अपने अधिकार का दुरुपयोग करके रंगभेद को कायम रखने का प्रयत्न करके देश के कानून का उल्लंघन करते हैं। उनके उत्तेजनापूर्ण भाषण, लंबी-चौड़ी गर्म बातें और अहंकार से भरे कथन अशिक्षित एवं छोटे वर्ग के श्वेतांग लोगों में असाधारण भय और घृणा को जन्म देते हैं। इससे ये श्वेतांग लोग ऐसी उत्तेजना तथा किंकर्तव्यविमूढ़ता की अवस्था में पड़ जाते हैं, ऐसी संकुचितता एवं हिंसात्मक प्रवृत्तियाँ कर बैठते हैं, जिन्हें कोई भी संतुलित मनोवृत्तिवाला व्यक्ति करने के लिए तैयार नहीं होगा।

नयी समाज-व्यवस्था के आगमन के विरोध का इस बात से परिचय मिलता है कि कु क्लक्स क्लान का पुनरुत्थान हो रहा है। रंगभेद की परम्परा को हर कीमत पर बचाने के लिए इस संस्था के लोग निर्दय और बर्बर तरीकों का इस्तेमाल करते हैं। यह संस्था ऐसे वर्गों में से अपने सदस्य बनाती है, जो आज ऊँची हालत में नहीं हैं और जिन [illegible]

के लोग नीग्रो लोगों की उन्नति में अपने वर्ग की राजनतिक एवं आर्थिक अवनति का खतरा महसूस करते हैं। यद्यपि कु क्लक्स क्लान राजनैतिक दृष्टि से किसी भी तरह का कोई महत्त्व नहीं रखती और सभी वर्गों की तरफ से यह निन्दाभाजन बनती है, तथापि यह संस्था एक खतरनाक शक्ति है, जो जाति तथा धर्म में भेदभाव को मान्यता देती है। इस संस्था के पिछले हिंसात्मक इतिहास के कारण इसके सदस्य जब भी दलबद्ध होकर निकलते हैं, चारों तरफ आतंक फैल जाता है।

इसके अलावा श्वेतांग नागरिकों की परिषदें भी उसी दिशा में चलती हैं। क्योंकि ये परिषदें ऊँचे तबके के लोगों को अपना सदस्य बनाती हैं। इसलिए ये अपेक्षाकृत अधिक सम्मानित होती हैं। परन्तु मूलतः वे भी कु क्लक्स क्लान की भाँति ही रंगभेद की परम्परा को बचाये रखना चाहती हैं, भले ही इसके लिए गैरकानूनी रास्ते ही क्यों न अपनाये जायँ। उनके धमकी, बहिष्कार तथा आतंकवादी हथियार न केवल नीग्रो लोगों के विरुद्ध, बल्कि न्याय के पक्ष में लड़े रहनेवाले श्वेतांगों के विरुद्ध भी इस्तेमाल किये जाते हैं। वे रंगभेद के लिए प्रत्येक श्वेतांग व्यक्ति से पूरे समर्थन की और प्रत्येक नीग्रो व्यक्ति से आत्मसमर्पण की माँग करते हैं। इन परिषदों के लोग प्रायः कहते हैं कि वे हिंसा को टालना चाहते हैं, परन्तु रंगभेद के परंपरागत कानून को बचाने के लिए उनके अधार्मिक तरीके और उत्तेजनापूर्ण सार्वजनिक वक्तव्य अनिवार्य रूप से ऐसा वातावरण पैदा करते हैं कि जिसमें हिंसा सहज ही फूट पड़े।

इन परिषदों की प्रवृत्तियों के परिणामस्वरूप उदार विचारवाले श्वेतांग नागरिक सार्वजनिक रूप से रंग-समन्वय के सम्बन्ध में स्वतन्त्रता-पूर्वक विचार-विमर्श नहीं कर पाते। उन्हें सामाजिक बहिष्कार और आर्थिक दबाव का डर रहता है। इन उदार श्वेतांगों और नीग्रो लोगों के बीच आपसी व्यवहार तथा बातचीत के जो द्वार अब तक खुले थे, वे भी अब इस तरह लगभग बन्द हो गये हैं।

रंगभेद के प्रश्न को लेकर जो संघर्ष इस समय पैदा हुआ है, वह समाज-परिवर्तन के किसी भी संक्रमण-काल में अक्सर ही पैदा होता है। यथास्थिति के रक्षक किसी भी ऐसे व्यक्ति या संस्था का विरोध करेंगे ही, जिन्हें वे यथास्थिति को बदलकर नयी समाज-व्यवस्था की स्थापना के लिए जिम्मेदार समझते हों। क्रान्तिकारियों के विरुद्ध उठनेवाला यह तिरस्कार बहुत बड़ी हद तक पहुँच जाता है। समाज को दासता से मुक्ति की ओर ले जाने के संक्रमण-काल में अब्राहम लिंकन की हत्या कर दी गयी थी। वर्तमान में रंगभेद से रंग-समन्वय की ओर समाज को ले जाने के संक्रमण-काल में सर्वोच्च न्यायालय की निन्दा की जा रही है और अश्वेत लोगों के विकास की राष्ट्रीय संस्था को बदनाम करके, उससे बदला लेने की कानूनी तरीकों से भी आगे बढ़कर कोशिश की जा रही है।

जैसा कि अन्य सामाजिक संघर्षों के समय भी होता है, यथास्थिति के रक्षक, हमारे दक्षिणवासी यह तर्क देते हैं कि बाहर का दबाव पड़ने के पहले वे अपनी समस्याएँ धीरे-धीरे खुद ही सुलझा रहे थे। एक चिर-परिचित शिकायत यह भी सुनायी पड़ती है कि सर्वोच्च न्यायालय के शिक्षा-सम्बन्धी फैसले ने रंग-सम्बन्धों के सवाल को एक पीढ़ी पीछे धकेल दिया है। इसीलिए विभिन्न रंगों के लोग, जो अब तक शान्तिपूर्वक रहते थे, वे एक-दूसरे के खिलाफ खड़े हो गये हैं। परन्तु यह कथन वास्तविक परिस्थिति का गलत विश्लेषण है। जब पीड़ित लोग स्वतन्त्रता के लिए आन्दोलन करते हैं, तब वे समाज में फूट पैदा नहीं करते हैं, बल्कि उस फूट को, जिसे यथास्थिति एवं पुरानी समाज-व्यवस्था को बनाने की चेष्टा करनेवाले पैदा करते हैं, जड़मूल से नष्ट करने की ओर बढ़ते हैं। आज संयुक्त राज्य अमेरिका में जो फूट पैदा हो रही है, उसके लिए रंग-समन्वय का आन्दोलन जिम्मेदार नहीं है, बल्कि इस फूट की जड़ें वहाँ हैं, जहाँ रंग-समन्वय का विरोध किया जाता है। परन्तु इस सत्य को देखने और समझने में बहुत-से उदार दक्षिणी लोग भी असमर्थ रहे हैं।

संक्रमण-काल के समय एकांतवादी लोग उदार शासनकर्ताओं के दिमाग को बदलने के लिए बहुत जी-तोड़ प्रयत्न करते हैं। उदाहरण के तौर पर वर्तमान संक्रमण-काल में दक्षिण का श्वेतांग समाज उत्तर के श्वेतांगों को यह समझाने की कोशिश कर रहा है कि नीग्रो लोग जन्मजात अपराधी होते हैं। वे उत्तर में बसनेवाले नीग्रो लोगों के अपराधों के उदाहरणों को खोज-खोजकर बाहर निकालते हैं और कहते हैं : "देखिये, नीग्रो लोग आपके लिए भी एक समस्या हैं। वे जहाँ भी जाते हैं, परेशानी ही पैदा करते हैं।" ये आरोप किसी निश्चित घटना या परिस्थिति का उल्लेख किये बिना ही लगाये जाते हैं। जरूरतों के मारे अपराधों की जो समस्याएँ हैं, उन्हें जातिगत अपराधों के रूप में प्रमाणित किया जाता है। उत्तर के स्कूलों में पैदा होनेवाला संकट इस बात का प्रमाण बताया जाता है कि नीग्रो लोग जन्मजात मुजरिम होते हैं। वे एकांतवादी लोग यह नहीं समझते कि स्कूलों की यह समस्या इस बात का लक्षण है कि शहरी स्थान-चयन ही गलत हुआ है। अपराधों और पापों का सम्बन्ध किसी जाति या रंग से नहीं होता। वास्तव में गरीबी और अज्ञान में ही अपराधों के बीज हैं। भले ही वह गरीबी और अज्ञान किसी भी जाति अथवा रंग के लोगों में हो।

रंगभेदवादी लोग उत्तर तथा दक्षिण के उदार श्वेतांगों के विचारों को प्रभावित करने में बड़े चतुर तथा होशियार होते हैं। जिन लोगों पर बाइबिल के आधार पर दिये हुए वर्गभेद तथा जातिगत हीनता के तर्क का असर नहीं होता, उन्हें ये एकान्तवादी सामाजिक तथा सांस्कृतिक आधार के तर्कों से समझाते हैं। उनका कहना है कि नीग्रो लोग अभी रंग-समन्वय के लिए योग्य और तैयार नहीं हैं। उनकी शैक्षणिक और सांस्कृतिक हीनता के कारण स्कूलों में रंग-समन्वय, श्वेत विद्यार्थियों का स्तर गिरा देगा। ये रंगभेदवादी इस बात को कभी भी ईमानदारी के साथ समझने और स्वीकार करने की कोशिश नहीं करते कि नीग्रो-समाज की शैक्षणिक और सांस्कृतिक हीनता रंगभेद तथा उसके आधार पर

सदस्य इस दिशा में कोई मजबूत कदम उठाते; अगर वे सब यों होते, तो संघीय सेना को केन्द्रीय हाइस्कूल के अहाते में जाने के लिए मजबूर न होना पड़ता।

परन्तु अभी भी बहुत देर नहीं हुई है। प्रत्येक संघर्ष और संकट के समय कुछ खतरे भी रहते हैं और कुछ सुअवसर भी। ऐसे समय में या तो हम अपना बेड़ा पार कर सकते हैं या सर्वनाश के गर्त में समाप्त हो सकते हैं! आज की इस संकट बेला में या तो अमेरिका भिन्न-भिन्न रंगों और वंशों के लोगों के लिए न्याय की स्थापना कर सकता है या वह समाज की अन्तिम मानसिक दुरवस्था की स्थिति में पहुँच सकता है। यह मानसिक दुरवस्था अमेरिका के लिए आत्महत्या जैसी ही साबित होगी। या तो स्वतन्त्रता और समानता का जनतांत्रिक आदर्श सम्पूर्ण समाज को प्राप्त हो जायगा या फिर सभी मनुष्य सामाजिक और आध्यात्मिक सर्वनाश के भागीदार होंगे। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि संकट की इस घड़ी में हमारे सामने दोनों प्रकार की संभावनाएँ हैं—या तो हम जनतांत्रिक मूल्यों की स्थापना कर सकते हैं या हम फासिस्टवाद के गढ़े के नीचे आ सकते हैं। एक ओर सामाजिक उन्नति का मार्ग है, दूसरी ओर अवनति का। इस समय या तो हम विश्वबन्धुत्व के राजपथ पर बढ़ सकते हैं या मनुष्य के प्रति मनुष्य की असहनशीलता की कँटीली पगडंडी पर ही चल सकते हैं।

इतिहास को हमारी पीढ़ी से बड़ी आशा है। अविस्मरणीय महत्त्व के भविष्य का हमें निर्माण करना है। वह ऐसा भविष्य होगा, जिसमें हम जनतांत्रिक मूल्यों को परिपूर्णता तक ले जा सकेंगे। जनतंत्र के इन मूल्यों को हमारे देश ने एक लम्बे समय से, परन्तु बहुत धीरे-धीरे ही विकसित किया है। विश्व के आदर और सम्मति की दौड़ में विश्व के दूसरे मुल्कों के साथ प्रतिस्पर्धा करने के लिए ये जनतांत्रिक मूल्य हमारे लिए अनिवार्य अस्त्र की भाँति महत्त्वपूर्ण हैं। हम इस महत्त्वपूर्ण और नाजुक स्थिति में किस तरह पेश आते हैं, इसी पर से हमारे भविष्य की

की नैतिक स्वस्थता, हमारी भूमि की सांस्कृतिक स्वस्थता, हमारे राष्ट्र की राजनैतिक स्वस्थता और आजाद विश्व के नेता के रूप में हमारा सम्मान आँका जायगा। अमेरिका का भविष्य आज के इस संकट के समाधान के साथ बँधा हुआ है। आज के इस विश्व में हम इस दुर्बल जनतंत्र को लेकर नहीं चल सकते। अमेरिका तब तक उन उदीयमान तथा महत्त्वपूर्ण अश्वेत देशों का सम्मान प्राप्त नहीं कर सकता, जब तक वह अपने ही घर में रंग और जाति के सवालों को हल न कर ले। अगर अमेरिका प्रथम श्रेणी का राष्ट्र बना रहना चाहता है तो वह अपने ही अन्दर दूसरी श्रेणी की नागरिकता को नहीं रख सकता।

इस संकट का समाधान तब तक नहीं हो सकता, जब तक इस देश के स्त्री-पुरुष उसके लिए प्रयत्न नहीं करेंगे। मानवीय प्रगति न तो स्वचालित है और न वह अनिवार्य रूप से अपने-आप हो जाती है। अगर हम इतिहास को सरसरी तौर से भी देखें, तो हमें ज्ञात हो जायगा कि कोई भी सामाजिक प्रगति अनिवार्यता के रथ पर बैठकर अपने-आप नहीं चली आयी। न्याय की ओर बढ़ाये जानेवाले प्रत्येक कदम के साथ बलिदान, दुःख-वहन और संघर्ष करना पड़ता है। निष्ठापूर्ण व्यक्तियों का तीव्र लगाव और अनवरत प्रयत्न उसके लिए आवश्यक होता है। बिना सतत प्रयत्न के जो समय बीतता है, वह स्वयं अनुचित तथा भावुकतापूर्ण सामाजिक विनाश की शक्तियों का सहयोगी बन जाता है। अब उदासीनता तथा उपेक्षा के लिए समय और गुंजाइश नहीं है। यह व्यापक और विधायक रूप से कदम उठाने का समय है।

पूर्वगामी पृष्ठों में जो बात कही गयी है, वह अगर असंख्य राजनैतिक वक्तव्यों की भाँति ही एक निष्फल आवाज मात्र बनकर रह जायगी, तो वह सच्चे देशभक्तों के लिए अत्यन्त शर्मनाक बात होगी। ये चीजें बार-बार दुहरायी जानी चाहिए, क्योंकि लोगों की आदत हर चीज भूल जाने की होती है। परन्तु एक बार तो यह सभी के लिए स्पष्ट हो जाना चाहिए कि अब प्रत्येक व्यक्ति को गतिशील कार्यक्रमों को हाथ

में लेकर चलना है। अन्यथा उन लोगों को एक अच्छा बहाना मिल जायगा, जो कुछ भी करने से जी चुराते रहते हैं। अगर वर्तमान संकट को रचनात्मक ढंग से हाथ में लेने के लिए अमेरिका को तैयार करना है, तो विभिन्न संगठनों और संस्थाओं को सामान्य बातों को दुहराते रहने की प्रवृत्ति से ऊपर उठकर अपने देश का ढाँचा बदलने के लिए सक्रिय प्रयत्न करना चाहिए।

सबसे पहली बात तो यह है कि इस काम के लिए संघीय सरकार की तरफ से दृढ़ और साहसिक नेतृत्व की जरूरत है। जिस तरह से संघीय न्यायालय सभी लोगों के नागरिकता के अधिकारों की सुरक्षा करने में सक्रिय रहे हैं, उसी तरह अगर कार्यपालिका तथा संसद भी सक्रियता दिखातीं, तो रंगभेद से रंग-समन्वय की ओर संक्रमण करने में हमारा समाज आज की अपेक्षा कहीं अधिक तेजी से आगे बढ़ा होता। वाशिंगटन से जो निर्णायक नेतृत्व प्राप्त नहीं हो रहा है, इसके लिए किसी एक राजनैतिक दल को ही जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। दोनों ही बड़ी राजनैतिक पार्टियों ने न्याय की रक्षा में उपेक्षा दिखायी है। बहुत-से डेमोक्रेटिक पार्टी के सदस्यों ने दक्षिण के डिक्सीक्रेट लोगों की अजन-तांत्रिक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देकर अपने आदर्शों के साथ विश्वासघात किया है। इसी तरह बहुत-से रिपब्लिकन पार्टी के सदस्यों ने भी उत्तर के दक्षिणपंथी अनुदारवादियों की प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देकर इसी तथ्य का परिचय दिया है।

यद्यपि इस तनावपूर्ण संक्रमण-काल में न्यायालयों पर बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है, फिर भी केवल न्यायालयों के द्वारा ही रंग-समन्वय की उद्देश्य-सिद्धि नहीं हो सकती। न्यायालय संवैधानिक धाराओं का स्पष्टीकरण कर सकते हैं और रंगभेद के पीछे कानूनी आधार नहीं है, यह भी स्पष्ट कर सकते हैं। परन्तु वे नये कानून नहीं बना सकते; रंगभेद को दूर करने के लिए अधिकारियों की नियुक्ति नहीं कर सकते; राष्ट्रीय स्तर पर कानून का बलपूर्वक पालन नहीं करवा सकते।

ये सब काम करवाने की शक्ति राज्यों और स्थानीय अधिकारियों के पास है; अगर वे इसका इस्तेमाल करना चाहें। परन्तु दक्षिण के राज्यों ने अपनी नीति स्पष्ट कर दी है। उनका कहना है कि अगर कोई अवांछित स्थिति पैदा हो गयी हो और जहा अपने आदेश के द्वारा उस परिस्थिति को सँभाल लेना जरूरी है, तो राज्य संघ के कानूनों की उपेक्षा कर सकता है। यहाँ तक कि राष्ट्र के विधान और न्यायालयों के आदेशों के कारण भी अगर कोई असन्तोषजनक परिस्थिति पैदा हुई हो तो वहाँ भी राज्य दखल दे सकता है। इस तरह रंगभेद को मिटाने की शक्ति और जिम्मेदारी आखिरकार संघीय सरकार के कन्धों पर ही आ जाती है। रंगभेद को मिटाने की जो महान् चुनौती हमारे सामने है, उसे केन्द्रीय सरकार के सभी विभागों को स्वीकार करना होगा।

इस संकटपूर्ण समस्या का पूर्ण समाधान केवल सरकारी कार्यशीलता में से ही निकलनेवाला नहीं है। परन्तु इससे समस्या का एक महत्त्वपूर्ण अंश सुलझ सकता है। नैतिकता के विचारों को कानून के बन्धन में नहीं बाँधा जा सकता। परन्तु कानून के द्वारा लोगों के व्यवहार पर तो नियंत्रण किया ही जा सकता है। कानून मेरे मालिक को इस बात के लिए बाध्य नहीं कर सकता कि वह मुझसे प्रेम करे ही, परन्तु मेरी काली चमड़ी के कारण अगर वह मुझे नौकरी देने से इनकार करता है, तो वहाँ कानून उसे ऐसा करने से रोक सकता है। मनुष्यों के हृदय और मस्तिष्क के दोषों को दूर करने के लिए हमें शिक्षा और धर्म के तरीकों पर निर्भर रहना होगा। परन्तु यह अत्यन्त अनैतिक कार्य होगा कि हम किसीको इस बात के लिए बाध्य करें कि जब तक सामनेवाले मनुष्य का दिल न बदल जाय, तब तक तुम उसका अन्याय बरदाश्त करते रहो। जैसा कि उत्तर के अनेक राज्यों के भेदभाव-विरोधी कानूनों के अनुभव ने सिद्ध कर दिया है। ये कानून इस प्रकार की अनैतिकता के विरुद्ध बहुत बड़ा संबल प्रदान करते हैं।

इससे भी बड़ी बात तो यह है कि कानून अपने-आपमें भी लोगों

में लेकर चलना है। अन्यथा उन लोगों को एक अच्छा बहाना मिल जायगा, जो कुछ भी करने से जी चुराते रहते हैं। अगर वर्तमान संकट को रचनात्मक ढंग से हाथ में लेने के लिए अमेरिका को तैयार करना हो, तो विभिन्न संगठनों और संस्थाओं को सामान्य बातों को दुहराते रहने की प्रवृत्ति से ऊपर उठकर अपने देश का ढाँचा बदलने के लिए सक्रिय प्रयत्न करना चाहिए।

सबसे पहली बात तो यह है कि इस काम के लिए संघीय सरकार की तरफ से दृढ़ और आक्रामक नेतृत्व की जरूरत है। जिस तरह से संघीय न्यायालय सभी लोगों के नागरिकता के अधिकारों की सुरक्षा करने में सक्रिय रहे हैं, उसी तरह अगर कार्यपालिका तथा संसदें भी सक्रियता दिखातीं, तो रंगभेद से रंग-समन्वय की ओर संक्रमण करने में हमारा समाज आज की अपेक्षा कहीं अधिक तेजी से आगे बढ़ा होता। वाशिंगटन से जो निर्णायक नेतृत्व प्राप्त नहीं हो रहा है, इसके लिए किसी एक राजनैतिक दल को ही जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। दोनों ही बड़ी राजनैतिक पार्टियों ने न्याय की रक्षा में उपेक्षा दिखायी है। बहुत-से डेमोक्रेटिक पार्टी के सदस्यों ने दक्षिण के डिक्सीक्रट्स लोगों की अजनतान्त्रिक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देकर अपने आदर्शों के साथ विश्वासघात किया है। इसी तरह बहुत-से रिपब्लिकन पार्टी के सदस्यों ने भी उत्तर के दक्षिणपन्थी अवसरवादियों की प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देकर इसी तथ्य का परिचय दिया है।

यद्यपि इस तनावपूर्ण संक्रमण-काल में न्यायालयों पर बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है, फिर भी केवल न्यायालयों के द्वारा ही रंग-समन्वय की उद्देश्य-सिद्धि नहीं हो सकती। न्यायालय वैधानिक पहलुओं का स्पष्टीकरण कर सकते हैं और रंगभेद के पीछे कानूनी आधार नहीं है, यह भी स्पष्ट कर सकते हैं। परन्तु वे नये कानून नहीं बना सकते; रंगभेद को दूर करने के लिए अधिकारियों की नियुक्ति नहीं कर सकते; स्थानीय स्तर पर कानून का बलपूर्वक पालन नहीं करवा सकते।

ये सब काम करवाने की शक्ति राज्यों और स्थानीय अधिकारियों के पास है; अगर वे इसका इस्तेमाल करना चाहें। परन्तु दक्षिण के राज्यों ने अपनी नीति स्पष्ट कर दी है। उनका कहना है कि अगर कोई अवांछित स्थिति पैदा हो गयी हो और जहा अपने आदेश के द्वारा उस परिस्थिति को सँभाल लेना जरूरी है, तो राज्य संघ के कानूनों की उपेक्षा कर सकता है। यहाँ तक कि राष्ट्र के विधान और न्यायालयों के आदेशों के कारण भी अगर कोई असन्तोषजनक परिस्थिति पैदा हुई हो तो वहाँ भी राज्य दखल दे सकता है। इस तरह रंगभेद को मिटाने की शक्ति और जिम्मेदारी आखिरकार संघीय सरकार के कन्धों पर ही आ जाती है। रंगभेद को मिटाने की जो महान् चुनौती हमारे सामने है, उसे केन्द्रीय सरकार के सभी विभागों को स्वीकार करना होगा।

इस संकटपूर्ण समस्या का पूर्ण समाधान केवल सरकारी कार्यशीलता में से ही निकलनेवाला नहीं है। परन्तु इससे समस्या का एक महत्त्वपूर्ण अंश सुलझ सकता है। नैतिकता के विचारों को कानून के बन्धन में नहीं बाँधा जा सकता। परन्तु कानून के द्वारा लोगों के व्यवहार पर तो नियंत्रण किया ही जा सकता है। कानून मेरे मालिक को इस बात के लिए बाध्य नहीं कर सकता कि वह मुझसे प्रेम करे ही, परन्तु मेरी काली चमड़ी के कारण अगर वह मुझे नौकरी देने से इनकार करता है, तो वहाँ कानून उसे ऐसा करने से रोक सकता है। मनुष्यों के हृदय और मस्तिष्क के दोषों को दूर करने के लिए हमें शिक्षा और धर्म के तरीकों पर निर्भर रहना होगा। परन्तु यह अत्यन्त अनैतिक कार्य होगा कि हम किसीको इस बात के लिए बाध्य करें कि जब तक सामनेवाले मनुष्य का दिल न बदल जाए, तब तक तुम उसका अन्याय बरदाश्त करते रहो। जैसा कि उत्तर के अनेक राज्यों के भेदभाव-विरोधी कानूनों के अनुभव ने सिद्ध कर दिया है। ये कानून इस प्रकार की अनैतिकता के विरुद्ध बहुत बड़ा संरक्षण प्रदान करते हैं।

इससे भी बड़ी बात तो यह है कि कानून अपने-आपमें भी लोगों

को शिक्षित करने का एक तरीका है। सर्वोच्च न्यायालय के आदेश, संसद् में उठाये गये प्रश्न और विधान द्वारा दिये गये अधिकार अपने-आपमें जनता के लिए बहुत ही कुशल मार्गदर्शक हैं। संघीय न्यायालय के आदेशों तथा विधानसभा और प्रशासन द्वारा उठाये गये कदमों का जो प्रभाव आज दक्षिण पर पड़ा है, उसके महत्त्व को कम आँकना गलती होगी। सैनिक सेवाओं में रंगभेद मिटा देने का दक्षिण पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ा है। संघीय न्यायालयों के आदेशों ने यातायात के तरीकों में, अध्यापकों के वेतनों में, मनोरंजन के स्थानों का इस्तेमाल करने में तथा इसी तरह के बहुत-से अन्य क्षेत्रों में बहुत बड़ा परिवर्तन ला दिया है। अगर लोगों के दिल नहीं तो आदतें तो संघीय सरकार की कार्यशीलता के कारण प्रतिदिन बदलती ही जा रही हैं।

इस संकट की घड़ी में उत्तर के उदार श्वेतांगों को भी बहुत बड़ा उत्तरदायित्व निभाना है। रंगभेद का जो प्रश्न आज अमेरिका में हमारे सामने है, वह एक क्षेत्रीय नहीं, बल्कि राष्ट्रीय प्रश्न है। अगर नीग्रो लोगों की नागरिकता के अधिकारों का कहीं भी मजाक उड़ाया जाता है, तो उससे प्रत्येक अमेरिकन के अधिकारों को चोट पहुँचती है। अन्याय कहीं भी हो, पर वह न्याय के लिए सर्वत्र खतरा पैदा करनेवाला होता है। अलबामा राज्य में अगर कानून टूटता है, तो उससे अन्य ४७ (इस समय ४९) राज्यों की कानूनसंगत बुनियादें भी कमजोर होती ही हैं। हम सभी लोग संयुक्त राज्य अमेरिका में रहते हैं, यह एक ऐसा सत्य है, जो यह सिद्ध करता है कि हम आपसी सम्बन्धों के एक ऐसे सूत्र से बँधे हुए हैं, जिससे हम अलग नहीं हो सकते। इसलिए किसी भी अमेरिकन व्यक्ति के लिए यह उचित नहीं होगा कि वह अश्वेत लोगों को न्याय दिलाने के प्रश्न से मुँह मोड़कर रहे। यह एक ऐसा मसला है, जो प्रत्येक मनुष्य के दरवाजे पर खड़ा है। अश्वेत जाति के साथ जुड़ी हुई यह समस्या उसी हद तक हल हो सकेगी, जिस हद तक अमेरिका का प्रत्येक नागरिक अपने-आपको इसके साथ व्यक्तिगत रूप से जुड़ा हुआ महसूस

करेगा। भले ही कोई दक्षिण के मध्यभाग में रहता हो या उत्तर की सीमा पर, न्याय की समस्या उसकी अपनी समस्या है। यह उसीकी समस्या है, क्योंकि वह पूरे अमेरिका की समस्या है।

उत्तर में एक ऐसे उदारतावाद की निहायत जरूरत है, जो सचमुच उदार हो। एक ऐसा उदारतावाद, जो अपने आसपास के समुदाय में भी रंग-समन्वय में विश्वास करता हो और दक्षिण के समाज में भी। रंग-समन्वय के आदर्शों के साथ सहमत होकर उसे नैतिक और कानूनी दृष्टि से उचित मान लेना एक बात है और इस आदर्श को प्राप्त करने के लिए अपने-आपको विधायक और सक्रिय रूप से जुटा देना दूसरी। पहली बात केवल बौद्धिक मान्यता तक ही सीमित रहती है, जब कि दूसरी बात एक वास्तविक विश्वास का रूप ग्रहण करती है। यह समय हमसे ऐसी माँग करता है कि हम अपने विचारों को अमली जामा पहनायें। यह ऐसा समय नहीं है कि हम रंग-समन्वय के लिए केवल जीभ हिलाते रहें और बातें बनाते रहें। हमें इसके लिए अपना जीवन लगाना होगा।

आज उत्तर के समाज में एक ऐसा अधकचरा उदारतावाद फैल रहा है, जो किसी भी प्रश्न के हर पहलू पर विचार करने पर इतना जोर देता है कि किसी भी एक पहलू के प्रति उसकी निष्ठा जम ही नहीं पाती। यह उदारतावाद इतना विश्लेषणपरायण हो गया है कि वह किसी भी आदर्श के लिए निश्चित रूप से अपने-आपको सम्बद्ध नहीं कर सका है। एक सच्चा उदार व्यक्ति इस तरह के प्रचार से विचलित नहीं होगा कि "थोड़ी देर धीरे चलिये। आप इन बातों को बहुत ज्यादा तेजी से धकेलकर आगे ला रहे हैं।" मैं इस बात का आह्वान नहीं कर रहा हूँ कि सहानुभूतिमूलक समझ तथा परिपूर्ण धीरज को हम समाप्त कर दें। परन्तु सहानुभूति तथा धीरज का इस्तेमाल अनिश्चितता की अवस्था को चालू रखने के लिए नहीं किया जाना चाहिए। ये तो हमारी कार्यशीलता के मार्गदर्शक सिद्धान्त होने चाहिए, न कि हम कार्यशीलता के बदले में उन्हें ही अपनाकर निष्क्रिय हो जायें!

इस संकटपूर्ण संक्रमण-काल में दक्षिण के मध्यममार्गी श्वेतांगों को भी बहुत बड़ी जिम्मेदारी निभानी है। दुर्भाग्य से आज दक्षिण के श्वेतांग समाज का नेतृत्व मुख्य रूप से संकुचित विचारवाले एकांतवादियों के हाथों में है। ये लोग भ्रामक आदर्शों का सहारा लेकर और मनुष्य के मस्तिष्क की गहराई में दबे हुए घृणा और भय के भावों को उभाड़कर सत्ता तथा यश प्राप्त कर लेते हैं। परन्तु मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि ये सम्पूर्ण दक्षिण के प्रतिनिधि और प्रवक्ता नहीं हैं। ये ऐसे अल्पसंख्यक लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो उद्दंड और मुखर हैं।

दक्षिण की ओर सरसरी नज़र डालनेवाले भी यह समझ सकते हैं कि इस क्षेत्र में अद्भुत सम्भावनाएँ छिपी हैं। यह क्षेत्र प्राकृतिक सम्पदाओं से भरा-पूरा है; नैसर्गिक सौन्दर्य का वरदान भी इसे खूब प्राप्त हुआ है तथा स्वाभाविक गर्मजोशी तो इसे मानो जन्म से ही प्राप्त हो गयी है। इन सब विशेषताओं के बावजूद दक्षिण को एक ऐसा रोग लग गया है, जो न केवल नीग्रो लोगों को; बल्कि श्वेतांगों को भी क्षीणकाय बना रहा है। गरीब श्वेतांग पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे, जो अज्ञान, दमन और गरीबी की चादर ओढ़े हुए हैं, इस बात के साक्षी हैं कि किसी एक का दुःख सारे समाज के लिए नुकसानदेह है। इस रंग-भेद के कारण दक्षिण आज सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक दृष्टि से पूरे राष्ट्र की तुलना में पिछड़ा हुआ है।

वास्तविकता यह है कि आज कोई एक 'सुदृढ़' दक्षिण नहीं है। अगर भौगोलिक दृष्टि से भी देखा जाय, तो उसके कम-से-कम तीन हिस्से करने पड़ेंगे। एक वह दक्षिण है, जो रंगभेद को कायम रखने के लिए आग्रहशील अथवा एकान्तवादी नहीं है। इसमें ओक्लाहामा, केन्टुकी, कैन्सास, मिसौरी, वेस्ट वर्जीनिया, डेलावर तथा डिस्ट्रिक्ट ऑफ कोलम्बिया शामिल हैं। एक वह दक्षिण है, जो रंगभेद के मामले में 'इन्तज़ार करो और देखो' की नीति अपनाकर चलता है। इसमें टेनेसी, टेक्सास, उत्तरी कैरोलिना, अर्कन्सास तथा फ्लोरिडा शामिल

हैं। एक वह दक्षिण है, जो रंगभेद के लिए आग्रहशील और एकान्तवादी होकर रंग-समन्वय के किसी भी कदम का विरोधी है। उसमें जार्जिया, अलबामा, मिसिसिपी, लुइसियाना, दक्षिणी कैरोलिना और वर्जीनिया शामिल हैं।

जिस तरह भौगोलिक दृष्टि से दक्षिण तीन हिस्सों में बँटा है, उसी तरह भिन्न-भिन्न प्रकार के दृष्टिकोणों के आधार पर उसके कई हिस्से किये जा सकते हैं। इनमें से प्रत्येक राज्य में कुछ लोग ऐसे भी मिलेंगे, जो रंगभेद को कायम रखने के लिए किसी भी प्रकार के साधनों का, जिसमें हिंसात्मक साधन भी शामिल हैं, इस्तेमाल करते हुए हिंचकिचाहट महसूस नहीं करेंगे। इन राज्यों में बहुमत ऐसे लोगों का होगा, जो परम्पराओं और रिवाजों के आधार पर रंगभेद में ईमानदारी के साथ विश्वास तो करते हैं, परन्तु कानून और व्यवस्था के पक्ष में भी ये उतनी ही ईमानदारी के साथ खड़े रहना अपना कर्तव्य समझते हैं। यद्यपि वे कानून के पक्ष में इसलिए खड़े नहीं रहते हैं कि वह कानून अच्छा है; परन्तु इसलिए कि वह कानून है! तीसरा वर्ग वह है, जो अल्पसंख्यक होते हुए भी निरन्तर बड़ा होता जा रहा है। इस वर्ग के लोग बड़ी सजगता और साहस के साथ राष्ट्र के कानून को अमली रूप देने के लिए प्रयत्नशील हैं। ये लोग रंग-समन्वय में वैधानिक और नैतिक दोनों दृष्टियों से पूरा विश्वास करते हैं। हालाँकि उनकी आवाज नक्कारखाने में तूती की आवाज की भाँति ही खो जाती है, फिर भी वह मैदान में बड़ी सक्रियता के साथ है।

इससे भी आगे दक्षिण में ऐसे लाखों सद्भावनाशील श्वेतांग लोग हैं, जिनकी आवाज अभी तक सुनी ही नहीं गयी है, जिनकी गतिविधि अभी तक सामने नहीं आयी है और जिनके साहसिक कार्य अभी तक लोगों की नजरों में से नहीं गुजरे हैं। आज ये लोग प्रायः इसलिए चुप रह जाते हैं कि उनके मन में सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक बहि-

प्यार का डर समाया हुआ है। ईश्वर के नाम पर, मानवीय प्रतिष्ठा की रक्षा के नाम पर और जनतंत्र के आदर्शों के नाम पर इन लाखों लोगों से मैं अपील करता हूँ कि वे अपने साहस को बटोरें, निर्भीक होकर बोलें और रंगभेद को समाप्त करने के लिए अपना नेतृत्व दें, जिसकी आज अत्यन्त आवश्यकता है। एक दूसरा दक्षिण उनसे यह अपील कर रहा है। वह अश्वेत दक्षिण, वह लाखों नीग्रो लोगों का दक्षिण उनसे अपील कर रहा है। डिक्सी का निर्माण करने में इन नीग्रो लोगों का भी पसीना और खून बहा है। ये नीग्रो भी भ्रातृभाव तथा सम्मान प्राप्त करने के लिए उत्कण्ठित हैं। ये नीग्रो दक्षिण के अपने श्वेतांग भाइयों के साथ हाथ मिलाना चाहते हैं, ताकि सभी के लिए अधिक स्वतंत्र, अधिक सुख-पूर्ण देश का निर्माण किया जा सके। अगर मध्यमार्गी अथवा उदारतावादी दक्षिणवासी श्वेतांग इस समय क्रियाशील नहीं होंगे, तो इतिहास में लिखा जायगा कि इस सामाजिक संक्रमण-काल का सबसे अधिक दुःखद तथ्य यह नहीं था कि बुरे लोग अपनी कर्कश ध्वनि से चिल्ला रहे थे; बल्कि यह था, जब अच्छे लोग भयानक चुप्पी साधे हुए थे। हमारी आनेवाली पीढ़ियाँ केवल अन्धकार के पुत्रों की बातों और क्रियाओं के ही परिणाम नहीं भुगतेंगी, बल्कि प्रकाश के पुत्रों के भय और उपेक्षा के परिणामों पर भी आँसू बहायेंगी।

आखिर इस दक्षिण को सामाजिक और आर्थिक प्रगति की तरफ बढ़ने के लिए कौन नेतृत्व दे सकता है। उसीके पुत्र न ! वे ही, जो उसकी सम्पदापूर्ण तथा उपजाऊ धरती पर पैदा हुए हैं तथा पले हैं। वे ही, जो उसे प्रेम करते हैं तथा उससे पोषित हुए हैं। प्रेम, मैत्री तथा सद्भावनापूर्ण समझ के माध्यम से वे अपने भाइयों को एक पवित्र जीवन जीने का आह्वान दे सकते हैं। यह काल श्वेतांग उदारतावादियों के लिए एक महान सुअवसर लेकर आया है—अगर वे सत्य का पक्ष लें, कानून का पालन करें और जिसे वे न्याय का मार्ग समझते हैं, उस पर चलने के लिए कहीं की परवाह न करें।

एक प्रभावशाली समाज-परिवर्तन लाने के लिए मजदूर-आन्दोलन भी बहुत बड़ा काम कर सकता है। सालों से नीग्रो लोग भयंकर आर्थिक शोषण के शिकार रहे हैं। उत्तर और दक्षिण के बीच जो गृहयुद्ध हुआ था, उससे पहले दास बिना किसी नागरिक अधिकार और मुआवजे के काम करते थे। दासता से मुक्ति मिलने के बाद से ही अमेरिका का नीग्रो अविकसित आर्थिक व्यवस्था के अन्तर्गत कष्ट सहता रहा है। उसे बिना कानूनी सुरक्षा और बिना खेती के लिए जमीन दिये ही स्वतन्त्रता दे दी गयी और केवल शारीरिक परिश्रम के काम करने के लिए ही उसे अवसर मिल पाया। जिस संघीय सरकार ने नीग्रो लोगों को दासता से मुक्ति दिलायी, उसने भी ऐसा कोई स्थायी कार्यक्रम अथवा नीति नहीं बनायी, जिससे दासता से मुक्त होनेवालों को किसी तरह के आर्थिक स्रोतों के लिए गारंटी प्राप्त होती, जब कि दासता से मुक्त होनेवाले इन लोगों को वह जमीन प्राप्त होनी ही चाहिए थी, जिस पर वे अपने मालिकों के नियन्त्रण में रहकर काम करते थे। नीग्रो लोगों का शोषण अमेरिका के पुनर्निर्माण के युग में भी कायम रहा और आज भी चल रहा है।

नीग्रो लोगों को आर्थिक न्याय दिलवाने में मजदूर-संघ काफी काम कर सकते हैं। आज मजदूर-संघ एक ऐसे संघर्ष में लगे हुए हैं, जिसके द्वारा वे वेतनजीवी अमेरिकन नागरिकों की आर्थिक उन्नति को दृढ़ करना चाहते हैं। क्योंकि अमेरिका का नीग्रो व्यापक पैमाने पर वस्तुओं का उत्पादन करनेवाले कारखानों का मालिक या व्यवस्थापक नहीं है, वह अपने आर्थिक निर्वाह के लिए वेतन पर ही निर्भर करता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में सरकार द्वारा स्वीकृत १५० मजदूर-संघ हैं, जिनमें १,६५,००,००० सदस्य हैं। इनमें से १४२ संघ तो राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर संगठनों से सम्बद्ध हैं और इन १४२ संघों के एक करोड़ तीस लाख पचास हजार सदस्यों में तेरह लाख नीग्रो हैं।

धार्मिक संस्थाओं को छोड़कर और किसी भी संस्था में नीग्रो सदस्यों की संख्या इतनी अधिक नहीं है। इसलिए नीग्रो लोगों को अमेरिकन मजदूर-संघ से यह आशा करने का अधिकार है कि वह अपने अन्य सदस्यों की भाँति उन्हें भी समाज में उपयुक्त स्थान दिलाने का प्रयत्न करेगा। यह अधिकार नीग्रो मजदूरों को इसलिए प्राप्त हुआ है कि उन्होंने भी अन्य मजदूरों के साथ मिलकर इस देश के स्वतन्त्र और जनतान्त्रिक मजदूर-आन्दोलन का निर्माण किया है।

आर्थिक असुरक्षा के शिकार लोगों का भौतिक और सांस्कृतिक विकास भी रुक जाता है। लाखों लोग न केवल शिक्षा और स्वास्थ्य की सुविधाओं से ही वंचित रह जाते हैं, बल्कि समाज की बुनियादी इकाई—परिवार—भी छिन्न-भिन्न होता है, भ्रष्ट हो जाता है और आर्थिक अभाव के कारण कमजोर बनता है। जब एक नीग्रो पुरुष का वेतन अपर्याप्त होता है, तब बच्चों की न्यूनतम आवश्यकताओं तक को पूरी करने के लिए उसकी पत्नी को काम पर जाना पड़ता है। जब एक माँ को काम करने के लिए मजबूर होना पड़ता है, तब वह अपने बच्चों को स्नेहपूर्ण पालन और संरक्षण देने में असफल रहकर अपने मातृत्व की सीमाओं का उल्लंघन करती है। ऐसी हालत में बच्चे या तो किसी दूसरे के द्वारा बड़ी असावधानी के साथ पाले पोसे जाते हैं या उनका पालन-पोषण होता ही नहीं। इस तरह से बच्चे यों ही सड़कों पर भटकते रहते हैं। केवल नीग्रो ही इस समाज द्वारा दण्डित नहीं हो रहा है, बल्कि बहुत-से श्वेतांग गरीब परिवार भी इसी दुरवस्था के शिकार हैं। एक नीग्रो माता श्वेतांग बालकों का पालन पोषण करने के लिए धाय बनकर जाती है और उस समय उन श्वेतांग बालकों की माताएँ कहीं दूसरी जगह काम करती हैं। इस अजीब परिस्थिति के अन्दर ही भविष्य को सुधारने की आवश्यकताएँ छिपी हैं।

नीग्रो और श्वेतांग दोनों ही जातियों के मजदूर समान रूप से ही शोषण अथवा दमन के शिकार हैं। दोनों के जीवन-स्तर को हमारे राष्ट्रीय

स्रोतों के स्तर तक ऊपर उठाने की जरूरत है। काले और गोरे लोगों को किसी तर्कपूर्ण कारण ने नहीं, बल्कि सामाजिक विभेद के खोखले विचार ने ही अलग-अलग किया है। आर्थिक दृष्टि से दमित एक श्वेतांग अपने-आपको और किसी तरह नहीं तो कम-से-कम सामाजिक रूप में नीग्रो से ऊँचा मानकर अपनी गरीबी को सन्तोष से स्वीकार कर लेता है। इस कोरे घमण्ड के पीछे उसने असुरक्षा, भूख, अज्ञान और निराशावाद की बहुत बड़ी कीमत अपने लिए तथा अपने बच्चों के लिए चुकायी है। जिन नीग्रो और गोरे लोगों की समस्याएँ एक-जैसी ही हैं, उनके बीच के सम्बन्धों को मजबूत बनाना चाहिए। कारखानों और खेतों के उत्पादन में समुचित हिस्सा प्राप्त करने के लिए गोरे तथा नीग्रो मजदूरों में एक ही आकांक्षा है। दोनों ही वर्गों के मजदूर काम की गारण्टी, वृद्धावस्था की सुरक्षा तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी संरक्षण प्राप्त करना चाहते हैं। जिस संगठित मजदूर-आन्दोलन ने लाखों लोगों की आर्थिक सुरक्षा तथा भलाई के लिए इतना बड़ा काम किया है, उसीका यह भी कर्तव्य है कि अपने शक्तिशाली साधनों द्वारा इन गोरे और नीग्रो मजदूरों को आर्थिक दासता से मुक्ति दिलायें तथा इस उद्देश्य को हासिल करने के लिए नीग्रो और गोरे मजदूरों को सामाजिक एकता के मंच पर संगठित करें।

मजदूर-आन्दोलन ने इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम उठाये भी हैं। प्रत्येक राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर-संघ की भेदभाव के विरोध में एक स्पष्ट नीति होती है। अमेरिकी मजदूर-आन्दोलन के राष्ट्रीय नेताओं ने बड़ी ईमानदारी के साथ यह घोषणा की है कि रंगभेद के भूत को वे अमेरिका में न केवल मजदूर-आन्दोलन से हटाने को ही अपना उत्कृष्ट उद्देश्य मानते हैं, बल्कि वे संपूर्ण समाज से ही इस भेदभाव को दूर करना चाहते हैं। इस राष्ट्रीय स्तर की घोषणा के बावजूद रंगभेदवादी तत्त्वों द्वारा संचालित कुछ मजदूर-संघों ने नीग्रो मजदूरों को निम्न स्तर की आर्थिक स्थिति में ही रखा है। कहीं-कहीं मजदूर-संघों में नीग्रो

सदस्यों को लिया ही नहीं जाता तथा उन्हें प्रशिक्षण इत्यादि की सुविधाओं से भी वंचित रखा गया है। देश के हर कोने में ऐसे कुछ स्थानीय मजदूर-संघ मिलेंगे, जो नीग्रो लोगों के रास्ते में सब रोड़े बनकर बाधा पैदा करते हैं, जब वे काम प्राप्त करने की अथवा अपनी नौकरी में उन्नति करने की कोशिश करते हैं। जब मजदूर-आन्दोलन के राष्ट्रीय संगठन ने दक्षिण में कुछ आन्दोलन चलाने की योजना बनायी, तब स्थानीय मजदूर नेताओं में से अनेक लोगों ने उसका विरोध किया। इनमें से कुछ लोग 'श्वेतांग नागरिक परिषद्' में भी सक्रिय भाग लेनेवालों में से थे। परिणामस्वरूप यह आन्दोलन ठप हो गया।

मजदूर-आन्दोलन में इस प्रकार की जो परिस्थिति है, उससे यह बात और अधिक स्पष्ट हो जाती है कि उन्हें रंगभेद-विरोधी कार्यक्रम ज्यादा तेजी से चलाना चाहिए। राष्ट्रीय मजदूर-आन्दोलन को अपनी संपूर्ण शक्ति के साथ उन सिद्धान्तों को लागू कराने की कोशिश करनी चाहिए, जिनका उसने प्रतिपादन किया है। मजदूर-आन्दोलन के नेताओं को यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि नागरिक अधिकारों की प्राप्ति के संघर्ष में मजदूरों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि नीग्रो-विरोधी शक्तियाँ अक्सर मजदूर-विरोधी भी होती हैं। हमें चाहिए कि संगठित मजदूर-आन्दोलन पर किये गये आक्रमण और कुछ लोगों की कर्तव्यहीनता से हम अन्धे न हो जायँ और वर्तमान संकट की घड़ी में मजदूर-आन्दोलन की जो जिम्मेदारी है, उसे हम भूल न जायँ।

इस संकट-काल में चर्च और धर्म-संप्रदायों को भी अपनी ऐतिहासिक कर्तव्यशीलता का परिचय देना है। यदि हम इस प्रश्न का तह में विश्लेषण करें, तो हम इसी अंतिम नतीजे पर पहुँचेंगे कि जाति-भेद का प्रश्न एक राजनैतिक नहीं बल्कि आध्यात्मिक अथवा नैतिक प्रश्न है। जैसा कि स्वीडन के अर्थशास्त्री श्री गुनर मिरडाल ने कहा है : जाति-भेद का मसला अमेरिका का सबसे बड़ा नैतिक धर्म-संकट है। यह दुःखद धर्म-संकट चर्च के लिए एक चुनौती है। सम्पूर्ण विश्व की एकता का मार्ग,

सिद्धान्त हमारे धर्मोपदेश का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू है, और वह पहलू रंगभेद को नैतिक दृष्टि से अन्यायपूर्ण सिद्ध करता है। जातिभेद के द्वारा हम उस एकता से इनकार करते है, जिसके प्रतीक के रूप में ईसामसीह का आदर्श हमारे सामने है। ईसामसीह के लिए न तो कोई बुरा है और न कोई अच्छा; न कोई दास है, और न कोई मुक्त; न कोई नीग्रो है और न कोई गोरा। उनके सामने मनुष्यमात्र एक समान हैं। भेदभाव करनेवाले और भेदभाव के शिकार, दोनों की आत्माएँ खण्डित और विगलित होती हैं। भेदभाव करनेवाला भेदभाव के शिकार व्यक्ति को एक ऐसी चीज समझता है, जिसका इस्तेमाल किया जा सकता है; न कि एक मनुष्य, जिसका आदर करना चाहिए। जातिभेद के कारण जो सम्बन्ध बनते हैं, वे मनुष्य और जड़ के बीच के सम्बन्धों की तरह के होते हैं; न कि मनुष्य और मनुष्य के बीच के सम्बन्धों की तरह। इस प्रकार जातिभेद हमारी क्रिश्चियन परम्परा के एकदम खिलाफ है।

चर्च और धर्म पर सदा से यह जिम्मेदारी रही है कि वे क्षितिज को व्यापक बनायें, यथास्थिति को चुनौती दें और जरूरत पड़ने पर झूठी परम्पराओं की बेड़ियाँ तोड़ डालें। आज चर्च के सामने जातिभेद पर विजय पाने की एक ऐसी जिम्मेदारी है, जिससे वह बचकर निकल नहीं सकता और जिसका मुकाबला अवश्य किया जाना चाहिए।

ऐसी अनेक चीजें हैं, जिन्हें चर्च कर सकता है। उसका पहला काम तो यह है कि वह जातिवाद के मूल में निहित घृणा को जड़-मूल से मिटाने की कोशिश करे। यह एक ऐसा काम है, जिसे कानून के द्वारा नहीं किया जा सकता। जातिसम्बन्धी पूर्वाग्रह भय, सन्देह और गलत-फहमियों पर आधारित होते हैं और ये सब चीजें अकसर बेबुनियाद हुआ करती हैं। इस दिशा में आम लोगों का उचित मार्गदर्शन करने के लिए चर्च असाधारण रूप से सहायक हो सकता है। धार्मिक शिक्षा के माध्यम से चर्च लोगों के सामने इस पहलू को स्पष्ट कर सकता है कि जाति और रंग के भेदभाव अन्यायपूर्ण हैं। चर्चों में यह सिखाया जा

सकता है कि ऊँची और नीची जाति की भावना कपोलकल्पित है, यह नृतत्त्व-शास्त्र के द्वारा अच्छी तरह साबित किया जा चुका है। यह भी दिखाया जा सकता है कि नीग्रो लोग शिक्षा, स्वास्थ्य और नैतिक स्तर में जन्म से ही हीन नहीं होते। यह समझाया जा सकता है कि अगर नीग्रो लोगों को भी समान अवसर दिया जाय तो वे भी श्वेतांगों के बराबर ही प्रगति कर सकते हैं।

चर्च के माध्यम से नीग्रो लोगों की इन वास्तविक भावनाओं का भी बहुत हद तक प्रचार किया जा सकता है कि वे सारे राष्ट्र पर छा जाने की चेष्टा नहीं कर रहे हैं, बल्कि वे केवल प्रथम श्रेणी के नागरिक की भांति जीने का अधिकार चाहते हैं। साथ ही एक अच्छे नागरिक पर जो जिम्मेदारियाँ होनी चाहिए, उनको भी वे नीग्रो उठाने के लिए तैयार हैं। अन्तर्जातीय विवाहों को लेकर जो अनुचित भय श्वेतांग समाज में समाया हुआ है, उसे दूर करने में भी चर्च सहायक हो सकता है। यह समझाया जाना चाहिए कि विवाह एक व्यक्तिगत निर्णय की चीज है और इसलिए उसका निर्णय अलग-अलग मामलों में अलग-अलग ढंग से ही लिया जाना चाहिए तथा इसे व्यक्तियों की इच्छा पर ही छोड़ देना चाहिए। सच्चाई तो यह है कि विवाह जातियों और रंगों के बीच नहीं होता, बल्कि वह व्यक्तियों के बीच होता है। विवाह में उन दोनों पक्षों की सहमति होना जरूरी है, जो एक-दूसरे के साथ जुड़ने जा रहे हैं। दोनों में से कोई भी पक्ष विवाह के लिए इनकार भी कर सकता है। विवाह तभी होगा, जब दोनों पक्ष स्वीकार करेंगे। चर्च यह स्पष्ट कर सकते हैं कि अन्तर्जातीय विवाह के बारे में उठनेवाली चिल्लपों वास्तविक समस्या को तोड़-मरोड़कर रखने का प्रयत्नमात्र है। यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि नीग्रो लोगों का उद्देश्य श्वेतांग लोगों का भाई बनना है, बहनोई बनना नहीं।

चर्च एक और भी काम यह कर सकता है कि वह मनुष्य के मस्तिष्क तथा विचारों को ईश्वर के प्रति केन्द्रित करके आत्मा के

सिद्धान्त को अमली स्वरूप दिलाने की कोशिश करे। आज अमेरिका की बहुत-सी समस्याएँ भय के कारण ही हैं। हमारे सामने केवल नीग्रो को रंगभेद के बन्धन से मुक्ति दिलाने का ही काम नहीं है, बल्कि अपने श्वेतांग भाइयों को भी रंग-समन्वय-सम्बन्धी भय के बन्धन से मुक्ति दिलानी है। अपने-आपको भय से मुक्त करने का सर्वोत्तम उपाय यही है कि हम अपने जीवन को ईश्वर की इच्छा पर छोड़ दें। 'परिपूर्ण प्रेम ही भय से मुक्ति दिला सकता है।'

जब लोग जातिभेद-सम्बन्धी समस्याओं पर विचार करते हैं, तब वे अक्सर अपने-आपको ईश्वर के साथ जोड़कर सोचने की अपेक्षा मनुष्यों के साथ जोड़कर सोचने लगते हैं। लोग प्रायः यह सवाल पूछते हैं : "अगर मैं नीग्रो लोगों के साथ मित्रता रखने लगूँगा और जाति के प्रश्न पर उदारता के साथ सोचने लगूँगा, तो मेरे मित्र क्या सोचेंगे?" वे लोग यह पूछना भूल जाते हैं : "ईश्वर क्या सोचेगा?" इस तरह वे भय की अवस्था में रहते हैं, क्योंकि वे अपने काम को अत्यन्त साधारण स्तर पर समाज से स्वीकृत करवाना चाहते हैं, बजाय इसके कि वे एक ऊँचे स्तर पर आध्यात्मिक निष्ठा से इन समस्याओं पर विचार करें।

चर्चों को अपने अनुयायियों को यह याद दिलानी चाहिए कि अपने जीवन को सर्वशक्तिमान् ईश्वर की आन्तरिक प्रेरणाओं पर समर्पित कर देने से मनुष्य को अधिक सुरक्षा प्राप्त होती है, न कि किसी साधारण मनुष्य की बदलती हुई माँगों पर अपना सम्पूर्ण समर्पण कर देने से। चर्च का यह कर्तव्य है कि वह क्रिश्चियन लोगों को नियमित रूप से यह उपदेश दे कि 'आप स्वर्ग के ही एक उपनिवेश हैं।' यह सच है कि मनुष्य के पास दुहरी नागरिकता है। वह अपने जीवन-काल में तो जीता ही है, साथ ही वह अनन्त काल में भी जीता है। वह धरती पर तो रहता ही है, पर वह स्वर्ग में भी रहता है। पर उसकी सर्वोत्कृष्ट निष्ठा और भक्ति का अधिकारी ईश्वर ही है। यह ईश्वरीय प्रेम तथा ईश्वरीय इच्छाओं के प्रति समर्पण ही भय से मुक्ति दिलायेगा।

रंग तथा जाति-भेद के मसले को हल करने के लिए चर्च एक और कदम यह उठा सकता है कि वह समाज-सुधार के कामों में नेतृत्व करे। आदर्शों के राज्य में रमण करते रहना ही चर्च के लिए काफी नहीं है, बल्कि उसे सामाजिक क्रियाशीलता के अखाड़े में उतरना चाहिए। सबसे पहले तो चर्च को अपने ही क्षेत्र से रंग तथा जातिसम्बन्धी भेद-भाव को दूर करना चाहिए। तभी वह बाहरी बुराइयों पर नैतिक मजबूती से आक्रमण कर सकेगा। दुर्भाग्य से अधिकांश प्रमुख धर्म-संप्रदाय अपने स्थानीय चर्चों, अस्पतालों, स्कूलों तथा अन्य चर्च-संचालित संस्थाओं में रंग और जाति-सम्बन्धी भेदभाव बरतते हैं। यह बड़े आश्चर्य और दुःख की बात है कि क्रिश्चियन अमेरिका का सर्वाधिक भेद-भावपूर्ण समय रविवार की सुबह का ११ बजे का वक्त है; वही समय, जब कि लोग यह प्रार्थना करने के लिए खड़े होते हैं कि "ईसामसीह के हृदय में न कोई पूरब है, न कोई पश्चिम है!" इतनी ही परेशानी की बात यह भी है कि सर्वाधिक भेदभावपूर्ण स्कूल भी रविवार का धार्मिक शिक्षा का स्कूल ही है। कितनी ही बार देखा गया है कि सिद्धान्तों की घोषणा करने में तो चर्चों के उत्साह का रक्त छलछलाता रहता है, पर जब काम करने की बारी आती है तो वे रक्तहीनता का बहाना बना लेते हैं, सारा उत्साह विलीन हो जाता है। येल डिविनिटी स्कूल के डीन श्री लिस्टन पोप अपनी पुस्तक 'दी किंगडम बियॉण्ड कास्ट' में ठीक ही कहते हैं कि "अमेरिकी समाज में चर्च सर्वाधिक भेदभाव बरतने वाली संस्था है। यह जाति के प्रश्न पर राष्ट्र की चेतना का प्रतिनिधित्व करने में सर्वोच्च न्यायालय से भी पीछे रह गया है और मजदूर-संघों से तो यह बहुत ही पिछड़ गया है। इसी तरह कारखाने, स्कूल, दूकानें, खेल के मैदान तथा अन्य प्रमुख सार्वजनिक आवागमन के स्थानों ने भी रंग-सम्बन्धी के क्षेत्र में चर्च से अधिक प्रगतिशीलता दिखाई है।"

कहीं-कहीं चर्चों में भी प्रगति हुई है। कुछ चर्चों ने बड़े साहस के साथ भेदभाव पर आक्रमण किया है और अपनी धर्म-सभाओं में रंग-

समन्वय तथा जाति-समन्वय स्थापित किया है। चर्चों की राष्ट्रीय परिषद् ने बार-बार इस भेदभाव का विरोध किया है और अपने से सम्बद्ध सभी धर्म-सम्प्रदायों से निवेदन किया है कि वे भी अपनी संस्थाओं में रंगभेद को समाप्त करें। अधिकांश प्रमुख धर्म-सम्प्रदायों ने इस कार्रवाई का समर्थन भी किया है। रोमन कैथोलिक चर्च ने यह घोषणा की है कि "भेदभाव नैतिक दृष्टि से गलत और पापपूर्ण है।" ये सब बातें प्रशंसनीय हैं। परन्तु ऐसे प्रगतिशील कदमों की संख्या बहुत ही कम है। ये प्रगतिशील निर्णय बड़ी धीमी गति से चलते हैं और अब तक ये सब छोटे-छोटे चर्चों तक पहुँचकर वास्तविक अमल में नहीं आ पाये हैं। चर्चों में आपस की फूट भी बहुत गहरी है और वह अवश्य समाप्त होनी चाहिए। यह क्रिश्चियन इतिहास का अत्यन्त दुःखद अध्याय होगा, अगर भविष्य की पीढ़ी को यह कहने का मौका मिलेगा कि बीसवीं सदी में चर्च ने भेदभाव को मदद पहुँचानेवाली शक्तियों की रक्षा के लिए अपने-आपको सबसे बड़ा गढ़ साबित किया।

चर्च को अपनी चहारदीवारी के बाहर भी समाज-सुधारों के काम में सक्रिय बनना चाहिए। उसे यह चेष्टा करनी चाहिए कि नीग्रो और श्वेताग-समुदाय में आपसी व्यवहार के दरवाजे खुले रहें। नीग्रो लोगों को मकान प्राप्त करने में, शिक्षा प्राप्त करने में, पुलिस की मदद प्राप्त करने में तथा नगर और राज्य के न्यायालयों में जिस अन्याय का सामना करना पड़ता है, उसके विरुद्ध चर्च को मजबूती के साथ आवाज उठानी चाहिए। इसी तरह उसे आर्थिक न्याय की स्थापना के क्षेत्र में भी अपने प्रभाव का उपयोग करना चाहिए। चर्च का स्थान समाज के नैतिक और आध्यात्मिक जीवन में एक अभिभावक जैसा है। इसलिए वह इन महत्त्वपूर्ण बुराइयों की ओर से मुँह मोड़कर नहीं रह सकता।

इस काम में चर्च की जिम्मेदारी का जिक्र करते हुए चर्च के पादरियों का उल्लेख किये बिना रहना असम्भव है। धर्म का उपदेश देनेवाले प्रत्येक पादरी को यह ईश्वरीय आदेश है कि वह सत्य और न्याय के लिए

साहस के साथ खड़ा रहे, धर्मोपदेश की आन्तरिक चेतना का उद्घोष करे और लोगों को भ्रम तथा भय के अन्धकार से सत्य और प्रेम के प्रकाश की ओर ले जाए।

दक्षिण में श्वेतांग पादरियों के लिए यह ईश्वरीय आदेश भारी कठिनता पैदा कर रहा है। बहुत-से पादरी यह विश्वास करते हैं कि रंगभेद का विरोध किया जाना चाहिए, क्योंकि यह भेदभाव ईश्वरीय इच्छा और क्रिश्चियन चेतना के विरुद्ध है। उनके सामने एक बहुत ही कठिन विकल्प है—या तो वे खुलकर रंगभेद का विरोध करें, जिसमें लोगों द्वारा मार दिये जाने का भी खतरा है; या फिर वे चुपचाप रहकर परिस्थिति के अनुसार थोड़ा-बहुत सुधार करने की कोशिश करें। जो पादरी दूसरे मार्ग को अपनाकर चल रहे हैं, वे ऐसा महसूस करते हैं कि अगर उन्हें चर्चों से निकल जाने के लिए मजबूर कर दिया जायगा, तो उनके बाद आनेवाले पादरी रंगभेदवादी ही होंगे और इस तरह क्रिश्चियन आदर्शों को धक्का पहुँचेगा। बहुत-से पादरी शान्ति के साथ सब कुछ सह रहे हैं। उसका कारण केवल इतना ही नहीं है कि वे अपने प्राण को बचाना चाहते हैं, बल्कि वे ऐसा महसूस करते हैं कि दक्षिण में ईसामसीह के आदर्शों को बढ़ाने का यही सर्वोत्तम मार्ग है कि वे थोड़ा धैर्य रखें। किस प्रकार कितने अनेक पादरी एक अच्छे भविष्य का निर्माण करने में लगे हुए हैं। वे बड़ी कुशलता के साथ युवकों के मस्तिष्क को बदलने का प्रयत्न कर रहे हैं। इन पादरियों की आलोचना नहीं की जानी चाहिए।

दक्षिण के प्रत्येक श्वेतांग पादरी को अपने मार्ग का स्वयं निर्णय करना चाहिए। हम किसी एकमात्र नीति का निर्धारण नहीं कर सकते। प्रत्येक पादरी के लिए महत्त्वपूर्ण बात इतनी-सी ही है कि वह अपने-आपको भ्रातृत्व के क्रिश्चियन आदर्शों के प्रति निष्ठावान् बनाये और अपने मन में यह निश्चय करे कि वह उन आदर्शों का अनुसरण करने के लिए किसी-न-किसी क्रियात्मक प्रवृत्ति में लगा रहेगा। वह कभी भी इस सिद्धान्त का अनुसरण न करे कि चुप रहना ही बेहतर है, और इस प्रकार कुछ भी न

करके मैं अपने आदर्श को मदद ही पहुँचा रहा हूँ। बहुत-से पादरी आज जितना कर रहे हैं, उससे कहीं अधिक काम कर सकते हैं और फिर भी अपनी धर्म परिषद में फूट पैदा होने की स्थिति से बच सकते हैं। ऐसे बहुत-से काम हैं, जिनको पादरीगण सम्मिलित रूप से पूरा कर सकते हैं। दक्षिण के प्रत्येक नगर में पादरियों की एक ऐसी अन्तर्जातीय संस्था होनी चाहिए, जिसमें नीग्रो और श्वेतांग पादरी क्रिश्चियन भाईचारे की भावना से एक साथ मिलकर समाज के मसलों पर विचार-विमर्श कर सकें। हमारे मॉण्टगोमरी-आन्दोलन का यह एक निराशापूर्ण अनुभव था कि हम लोग श्वेतांग पादरियों की संस्था को इस बात के लिए राजी नहीं कर पाये कि उसके सदस्य हमारे साथ मिलकर बैठें और हमारी समस्याओं पर चर्चा करें। कुछ-कुछ अपवादों को छोड़कर ऐसे श्वेतांग पादरियों ने हमारी बहुत ही कम मदद की, जिनसे मैंने अपने भोलेपन के कारण बहुत बड़ी उम्मीदें बाँध रखी थीं।

पादरीगण सामूहिक रूप से यह अपील जारी कर सकते हैं कि लोग कानून का पालन करें तथा हिंसात्मक साधनों का इस्तेमाल न करें। इस तरह की अपीलें अटलांटा, रिचमंड, टलास तथा अन्य नगरों में श्वेतांग पादरियों की ओर से जारी की भी गयी थीं। जहाँ तक मुझे मालूम है, इस अपील के कारण किसी एक भी पादरी को अपने चर्च के काम से हाथ नहीं धोना पड़ा। यह किसी भी धर्म-संप्रदाय के लिए कठिन होगा कि वे अपने शहर के सभी पादरियों को निकाल बाहर करें। अगर कभी दक्षिण के श्वेतांग पादरी अपनी सामूहिक आवाज के द्वारा जाति के प्रश्न पर धार्मिक सत्य की घोषणा करेंगे तो समाज का रंगभेद से रंग-सामन्यय की ओर का संक्रमण निश्चय ही अधिक आसान हो जायगा।

क्रिश्चियन पादरियों के उत्तरदायित्व की चर्चा करते हुए हमें अपने भविष्य की बात पर भी जोर देना चाहिए। हालाँकि प्रत्येक पादरी एक भविष्यवक्ता नहीं बन सकता। लेकिन हममें से कुछ को तो इस आह्वान को सुनना ही होगा तथा न्याय के लिए साहस के साथ यहाँ को

रहने की तैयारी करनी ही होगी। अमेरिका का आत्मोद्धार का स्वप्न अगर शीघ्र ही लोक-हृदय में प्रज्वलित हो उठता है, तो ऐसा होने देना चाहिए। उस समय पैगम्बर जागेंगे और कहेंगे : "यह ईश्वर का आदेश है।" जैसे आमोस ने पुकारा था, वैसे ही वे भी पुकार उठेंगे : "न्याय को उसी तरह बहने दो, जैसे पानी बहता है। और भलाई को भी सतत बहनेवाले झरने की तरह प्रवाहित होने दो।"

सौभाग्य से दक्षिण में कुछ ऐसी विभूतियाँ हैं, जिन्होंने पैगम्बर के मार्ग पर चलने की तैयारी प्रारम्भ कर दी है। मैं उन पादरियों की केवल तारीफ़ ही कर सकता हूँ, जिन्होंने ईसामसीह के उपदेश को स्वीकार करके तथा जिन यहूदी धर्माधिकारियों ने अपने धर्म पर दृढ़ रह करके मजबूती के साथ धमकियों, खतरों, कठिनाइयों और अप्रियताओं का सामना किया है। जिस समय उन पर प्रत्यक्ष रूप से शारीरिक खतरा लटक रहा था, उस समय भी उन्होंने ईश्वर के पितृत्व तथा मानव के भ्रातृत्व की सिद्धान्तवादिता पर अपनी अटलता क़ायम रखी। ईश्वर के ऐसे पवित्र सेवकों के लिए ही ईसामसीह ने ढाढ़स बँधाते हुए कहा है : "जब लोग मेरा अनुसरण करने के कारण तुम्हारी निन्दा करते हैं, तुम्हें दण्डित करते हैं और तुम पर झूठे दोष लगाते हैं, तब तुम्हें प्रभु का आशीर्वाद प्राप्त होता है। खुशियाँ मनाओ, आनन्दित होओ, क्योंकि स्वर्ग में तुम्हें बहुत बड़ा पुरस्कार मिलेगा। तुमसे पहलेवाले सन्तों को भी ऐसे ही कष्ट उठाने पड़े थे।"

इस प्रकार हमारे सामने एक कठिन चुनौती और विचित्र अवसर उपस्थित है। इस महान् विभिन्न राष्ट्र की सच्ची 'विभिन्नता' और ईसामसीह की भावनाओं की धरक बढ़ाने के लिए हम प्रयत्न करें। अगर चर्च इस चुनौती को निष्ठा और उत्साह के साथ स्वीकार कर लें, वह दिन जल्दी नज़दीक आयेगा, जब सर्वत्र मनुष्य इस बात को स्वीकार करेंगे कि 'ईसामसीह में सबके सभी एक समान हैं।'

अन्त में मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि अगर रंग-समन्वय को वास्तविक स्वरूप धारण करना है, तो स्वयं नीग्रो लोगों को भी बहुत बड़ा निर्णयात्मक उत्तरदायित्व निभाना होगा। अगर प्रथम श्रेणी की नागरिकता नीग्रो लोगों को उपलब्ध करवानी है, तो उन्हें ऐसी नागरिकता की प्राथमिक जिम्मेदारियों को समझना और स्वीकार करना पड़ेगा। रंग-समन्वय कोई एक ऐसी स्वादिष्ट भोजन-सामग्री नहीं है, जिसे संघीय सरकार अथवा उदारतावादी श्वेतांग नागरिक चाँदी की थाली में परोसकर नीग्रो लोगों के सामने पहुँचा देंगे और नीग्रो लोगों का काम केवल अपनी खाने की रुचि और भूख को बढ़ाना ही रहेगा। भूतकाल की रंगभेदवादी परम्परा का एक बहुत बड़ा घातक दुष्परिणाम यह हुआ है कि नीग्रो लोग भ्रम के शिकार होकर अब यह सोचने लगे हैं कि उनकी नागरिकता के अधिकारों के लिए उनसे भी अधिक दूसरे लोगों को चिन्ता करनी चाहिए।

समाज-परिवर्तन के इस काल में एक नीग्रो को यह सोचना पड़ेगा कि अपनी दशा सुधारने के लिए वह बहुत कुछ कर सकता है। वह अशिक्षित अथवा दरिद्र हो सकता है। परन्तु ये बाधाएँ उसे इस बात को समझने में रुकावट डालनेवाली नहीं होनी चाहिए कि वह एक ऐसी आत्मशक्तिसम्पन्न है कि वह अपने भाग्य को बदल सकता है। नीग्रो स्वयं अन्याय के विरुद्ध सीधी कार्रवाई कर सकता है। उसे इस बात की प्रतीक्षा करने की जरूरत नहीं है कि सरकार कोई कदम उठाये अथवा समाज का बहुमत उसके साथ हो अथवा न्यायालय उसके समर्थन में कोई आदेश जारी करे।

दबायी हुई जनता का दमन के प्रति तीन प्रकार का रुख हो सकता है। पहला तो यह कि ये दमन को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लें और इस तरह अपने-आप ही सर्वनाश के द्वार पर पहुँच जायँ। वे दमन के साथ समझौता कर लेते हैं और इसलिए दमन के अधीन बन जाते हैं। आजादी की ओर बढ़नेवाले किसी भी आन्दोलन के समय कुछ ऐसे

पराधीन और दलित लोग होते हैं, जो यथास्थिति में रहना ही पसन्द करते हैं। लगभग २८०० वर्ष पहले मूसा ने इसराइल की संतानों को मिस्र की दासता से मुक्ति की ओर ले जाने के लिए प्रयाण किया था। परन्तु उन्हें शीघ्र ही यह ज्ञात हुआ कि दास लोग अपने मुक्तिदाताओं को हमेशा ही पसन्द नहीं करते। वे दास बने रहने के आदी हो जाते हैं। जैसा कि शेक्सपियर ने बताया है, अनजानी मंजिल की ओर बढ़ने के बजाय ये अपनी पुरानी तकलीफों को ही सहते जाना पसन्द करते हैं। मुक्ति के लिए अग्नि-परीक्षा देने के बदले ये मिस्र में रहकर यातनाओं को सहना ज्यादा पसन्द करते हैं।

पलायन की आजादी भी एक चीज होती है। कुछ लोग दमन के कारण इतने हत-निश्चय हो चुके होते हैं कि वे सभी आशाएँ और प्रयत्न छोड़ बैठते हैं। कुछ वर्षों पहले अटलांटा की गन्दी गलियों में एक नीग्रो गिटार-वादक प्रायः प्रतिदिन गाया करता था कि "बेनडाउन सो लॉंग दैट डाउन डोंट बॉदर मी।" अर्थात् "इतना दबाया गया हूँ कि अब दबे रहना मुझे कष्टकर प्रतीत नहीं होता।" यह एक ऐसा नकारात्मक स्वातन्त्र्य है, जो दबे हुए मनुष्य के जीवन पर छा जाता है।

परन्तु यह कोई मुक्ति का मार्ग नहीं है। किसी अन्यायपूर्ण पद्धति को चुपचाप सहन करने का अर्थ होता है, उस पद्धति के साथ सहयोग करना। इस तरह दलित व्यक्ति भी उतना ही बुरा बन जाता है, जितना कि दमन करनेवाला। बुराई के साथ असहयोग करने की हमारी उतनी ही नैतिक जिम्मेदारी है, जितनी कि अच्छाई के साथ सहयोग करने की। दलित व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह दमन करनेवाले की आत्मचेतना को सोने न दे। हमारा धर्म प्रत्येक व्यक्ति को यह याद दिलाता है कि वह अपने भाई का अथवा पड़ोसी का रक्षक है। अन्याय और भेदभाव को चुपचाप स्वीकार कर लेने का मतलब यह होता है कि दमन करने-वाला जो कुछ कर रहा है, उसे हम नैतिक दृष्टि से सही मान लेते हैं। यह एक ऐसा मार्ग है, जिसके द्वारा हम दमनकर्त्ता की आत्मचेतना को

सोने देने का अवसर देते हैं। इस परिस्थिति में दमित व्यक्ति अपने इस भाई का रक्षक बनने के कर्तव्य से गिर जाता है। इसलिए दमन को प्रसन्नतापूर्वक सहन करने का मार्ग आसान भले ही हो, पर नैतिक नहीं है। यह एक कायरों का मार्ग है। दमन को प्रसन्नतापूर्वक सहन करते हुए नीग्रो लोग दमनकर्ताओं का आदर भी प्राप्त नहीं कर सकते। वे केवल दमनकर्ता की उद्दण्डता और तिरस्कार करने की वृत्ति को ही बढ़ावा देते हैं। अन्याय को प्रसन्नतापूर्वक सहन करने की वृत्ति को नीग्रो की हीनता का प्रमाण माना जाता है। नीग्रो लोग अगर अपने तात्कालिक आराम और सुरक्षा के लिए आनेवाली पीढ़ियों के भविष्य को बेच देना चाहते हैं, तो वे दक्षिण के श्वेतांग लोगों का और दुनिया का सम्मान प्राप्त नहीं कर सकते।

दूसरा रास्ता, जिसे दमित लोग दमन की समाप्ति के लिए अपनाते हैं, यह है कि वे हिंसा और घृणा पैदा करनेवाले उपाय काम में लाने लगते हैं। हिंसात्मक उपायों द्वारा अक्सर क्षणिक परिणामों की ही उपलब्धि हो सकती है। बहुत-से देशों ने युद्ध-भूमि में उतरकर अनेक बार स्वतन्त्रता प्राप्त की है। परन्तु उससे एक क्षणिक विजय भले ही प्राप्त हो जाय, स्थायी शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती। हिंसा से सामाजिक समस्याएँ हल नहीं हो सकतीं, बल्कि कई नयी तथा पेचीदा समस्याएँ पैदा ही हो जाती हैं।

रंग और जातिभेद मिटाकर न्यायपूर्ण समाज-व्यवस्था को कायम करने के लिए हिंसा का सहारा लेना अव्यावहारिक भी है और अनैतिक भी है। यह अव्यावहारिक तो इसलिए है कि यह एक ऐसा नीचे गिरता हुआ चक्र है, जो सर्वनाश में ही समाप्त होता है। 'जिसने तुम्हारी एक आँख फोड़ी, उसकी तुम भी एक आँख फोड़ डालो' के पुराने सिद्धान्त का अगर पालन किया जाय तो सभी लोग अन्धे हो जायँगे। यह अनैतिक इसलिए है कि यह अपने विरोधी व्यक्ति के साथ तादात्म्य स्थापित करने के बजाय उसे नीचा दिखाने की चेष्टा करता है। यह एक ऐसा

तरीका है, जो अपने विरोधी को बदलने के बजाय उसे समाप्त कर देने की चेष्टा करता है। हिंसा अनैतिक है, क्योंकि यह प्रेम के बजाय घृणा से पैदा होती है। यह समाज को क्षत-विक्षत करके भ्रातृत्व की स्थापना को असम्भव बना देती है। यह समाज में सद्भाव के बजाय मनमुटाव पैदा करती है। हिंसा अपने-आपको ही हराकर समाप्त होती है। यह बचे हुए लोगों में कटुता पैदा करती है और हिंसकों में निर्दयता पैदा करती है। युगों-युगों से गूँजती हुई एक आवाज प्रत्येक सम्भावित पीटर से कहती है : "अपनी तलवार को ताक पर रख दो।" जो देश ऐसा करने में असफल रहे, उनके छिन्न-भिन्न होने के कोलाहल से सारा इतिहास भरा हुआ है।

अगर अमेरिका का नीग्रो और अन्य दमित लोग हिंसा के मार्ग पर चलकर आजादी का संघर्ष करने के लिए तैयार हो जाते हैं, तो हमारी आनेवाली पीढ़ी को कटुतामयी एक निर्जन रात्रि का ही सामना करना पड़ेगा और एक अर्थहीन विप्लव का साम्राज्य ही हमारी ओर से उसे वसीयत में मिलेगा। अतः हिंसा आजादी का मार्ग नहीं है।

दलित जनता के लिए आजादी प्राप्त करने का जो तीसरा रास्ता है, वह अहिंसात्मक प्रतिकार का है। यह रास्ता भी हेगेल के दार्शनिक सिद्धान्त, समन्वय से मिलता हुआ है। क्योंकि अहिंसात्मक प्रतिकार का सिद्धान्त दो विरोधी तत्त्वों में निहित सत्य को एक धागे में पिरोकर उन्हें मिला देता है। प्रसन्नतापूर्वक अन्याय के सामने घुटने टेक देना अथवा उस अन्याय को समाप्त करने के लिए हिंसा का सहारा लेना; इन दोनों तत्त्वों में जो अनैतिकतापूर्ण एकान्तवाद है, उसका परित्याग करके इनके अन्दर के सत्य को ले लेने की प्रक्रिया अहिंसात्मक प्रतिकार में है। अहिंसात्मक प्रतिकार के मार्ग पर चलनेवाला सत्याग्रही अन्याय के सामने हार माननेवाले व्यक्ति का यह तर्क स्वीकार करता है कि हमें अपने विरोधी के प्रति आक्रामक नहीं बनना चाहिए; किन्तु यह अन्याय के सामने समर्पित हो जाने की इस बात में साथ संतुलन लाने के लिए

हिंसा के मार्ग पर चलनेवाले व्यक्ति की इस बात को भी स्वीकार करता है कि बुराई का प्रतिकार अवश्य ही होना चाहिए। इस तरह एक अहिंसावादी अप्रतिकार तथा हिंसक प्रतिकार को तो नामंजूर कर देता है, परन्तु वह इस बात की स्थापना करता है कि न तो अन्याय के सामने समर्पित होना चाहिए और न गलत को सही बनाने के लिए हिंसा का सहारा लेने की ही जरूरत है; बल्कि वह अहिंसा के द्वारा अन्याय के प्रतिकार का मार्ग निकालता है।

मुझे लगता है कि जाति-सम्बन्धों के लिए किये जानेवाले संघर्ष में नीग्रो-समाज के लिए अहिंसात्मक प्रतिकार की पद्धति ही मार्गदर्शक बननी चाहिए। इस पद्धति के माध्यम से नीग्रो लोग एक पवित्र और ऊँचे स्तर तक पहुँच जायेंगे, जहाँ से वे अन्यायपूर्ण समाज-व्यवस्था का विरोध भी कर सकेंगे और इस समाज-व्यवस्था को चलानेवाले लोगों के प्रति प्रेम भी रख सकेंगे। नीग्रो लोगों को धीरज और दृढ़ता के साथ नागरिक के पूरे अधिकारों को प्राप्त करने के लिए काम करना चाहिए, परन्तु इन अधिकारों को पाने के लिए उसे हीन पद्धतियों का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए। उन्हें कभी भी धोखा, ईर्ष्या, घृणा और विध्वंस के तरीकों को नहीं अपनाना चाहिए।

अहिंसात्मक प्रतिकार का मार्ग अपनाने से ही यह संभव है कि नीग्रो लोग दक्षिण में ही रहकर अपने अधिकारों के संघर्ष को जारी रख रहे हैं। नीग्रो लोगों की समस्याएँ कहीं दूर भागने से कम नहीं होंगी। कुछ लोग ऐसा सुझाव देते हैं कि नीग्रो लोग दक्षिण छोड़कर देश के अन्य भागों में जाकर बस जायँ। परन्तु इस सुझाव को हम नहीं मान सकते। दक्षिण में जो महान् सुअवसर उपलब्ध हैं, उनका उपयोग करते हुए राष्ट्र की नैतिक शक्ति का निर्माण करने में नीग्रो लोग एक स्थायी सहयोग दे सकते हैं और वे आनेवाली पीढ़ियों के लिए साहस का महान् उदाहरण भी उपस्थित कर सकते हैं।

चाहिए। यह श्वेतांग-समुदाय के सामने प्रदर्शन इस बात का भी करता है कि अगर इस प्रकार का आन्दोलन शक्तिशाली बनता है, तो वह अपनी ताकत का उपयोग विधायक कामों में करेगा, न कि वह शक्ति के उन्माद में पागल हो जायगा। अहिंसा मनुष्य के उस भाग को छू सकती है, जहाँ कानून नहीं पहुँच सकता। जब कानून के द्वारा मनुष्य के व्यवहार पर नियन्त्रण लगाया जाता है, तब यह कानून वास्तव रूप से जन-भावना को मोड़ने का काम करता है। कानून का पालन करवाना अपने-आपमें एक शान्तिपूर्ण परिवर्तन का ही तरीका है। पर कानून भी किसीकी मदद चाहता है। एक न्यायालय सार्वजनिक स्कूलों में रंग-समन्वय के लिए आदेश दे सकता है। परन्तु लोगों के मन के भय को मिटाने के लिए, घृणा को दूर करने के लिए, हिंसा एवं स्कूलों में रंग-समन्वय के विचार के विरुद्ध फैले हुए अनुचित तर्कों को मिटाने के लिए और जाति के नाम पर समाज को नुकसान पहुँचानेवाले लोगों के हाथों से अभिक्रम-शक्ति ले लेने के लिए क्या किया जा सकता है? कानून के प्रति आदर पैदा करने के लिए तथा कानून का पालन करवाने के लिए यह आवश्यक है कि लोगों में उनके सही होने का विश्वास पैदा हो।

इस जगह पर अहिंसा आती है—हृदय-परिवर्तन के एक आवश्यक तरीके के रूप में। यह एक ऐसा तरीका है, जो न्यायपूर्ण कानून का पालन करने के लिए समाज के ऐसे महान् और शान्त बहुसंख्यक लोगों की आत्मचेतना को जगाता है, जो अज्ञान, भय, अहंकार और अनुचित तर्कों के कारण उसे सोने दे रहे हैं।

अहिंसात्मक प्रतिकार करनेवाले अपने विचारों को संक्षेप में इस प्रकार कह सकते हैं : हम अन्याय के विरुद्ध सीधी कार्रवाई करेंगे और इस बात की प्रतीक्षा नहीं करेंगे कि दूसरे लोग भी सक्रिय हों। हम अन्यायपूर्ण कानूनों का पालन नहीं करेंगे और अन्यायपूर्ण हरकतों के आगे समर्पण नहीं करेंगे। हम यह स्वेच्छया शान्तिपूर्वक, खुले तौर पर तथा

प्रसन्नचित्त होकर चलायेंगे; क्योंकि हमारा उद्देश्य लोगों के दिलों को बदलना है। हम अहिंसात्मक तरीकों को इसलिए अपना रहे हैं कि हम समाज को अपने-आपमें शान्ति से परिपूर्ण देखना चाहते हैं। हम अपने वचनों से लोगों के दिल बदलने की कोशिश करेंगे। अगर हमारे वचन असफल रहे तो हम अपने कामों से लोगों के दिल बदलेंगे। हम सदैव उचित समझौता प्राप्त करने की कोशिश करेंगे, परन्तु जरूरत पड़ने पर किसी तकलीफ को सहने के लिए भी तैयार रहेंगे। यहाँ तक कि हम जिस सत्य के दर्शन कर रहे हैं, उसकी रक्षा में साक्षीभूत होने के लिए अपने जीवन की बाजी लगा देने के लिए भी तैयार रहेंगे।

अहिंसा के मार्ग पर चलने का अर्थ है, त्याग और बलिदान के लिए पूरी तरह तैयार रहना। इसके लिए समय पड़ने पर जेल भी जाना पड़ सकता है। अगर ऐसा समय आये तो आन्दोलनकारियों को दक्षिण के जेलों को भर देने की तैयारी भी रखनी चाहिए। अहिंसक मार्ग पर चलने का अर्थ हमारी मौत भी हो सकता है। लेकिन अगर अपनी सन्तानों तथा अपने श्वेतांग भाइयों को आत्मिक मृत्यु से मुक्ति दिलाने की कीमत के रूप में हमें अपने प्राणों की बलि भी चढ़ानी पड़े, तो इससे बढ़कर मुक्तिदायी कार्य और कोई नहीं हो सकता।

अगर एक नीग्रो पर हिंसा लाद दी जाय, तब उसके सामने क्या उपाय है? जैसा कि डॉ० केनेथ क्लार्क ने बड़े प्रेरक स्वरों में कहा है: "बर्बरता, अवैधानिकता, निर्दयता और अन्यायपूर्ण हमला अगर किसी एक नीग्रो पर होता है, तो उसका सामना करने का उपाय यही है कि उस एक के स्थान पर सौ नीग्रो अपने-आपको इन अन्यायों का शिकार बनने के लिए प्रस्तुत कर दें।" अगर एक नीग्रो अध्यापक रंग-समन्वय में विश्वास करने के कारण स्कूल से निकाल दिया जाता है तो हजारों अन्य नीग्रो लोगों को उस सिद्धान्त पर डट जाने के लिए तैयार रहना चाहिए। अगर दमनकारी शक्तियाँ किसी नीग्रो आन्दोलनकारी के घर पर बम विस्फोट करती हैं, तो उन शक्तियों को यह समझने के लिए मज-

दूर कर देना चाहिए कि नीग्रो लोगों के उन्माद को दबाने के लिए, सैकड़ों घरों पर बम-विस्फोट करके भी उन्हें आतंक में ही रहना पड़ेगा।

जब इस चमत्कारपूर्ण एकता, अद्भुत स्वाभिमान, कष्टसहिष्णुता और बदला न लेने की वृत्ति के साथ दमनकारियों का मुकाबला होगा, तब अन्य दमनकारियों की भाँति ही ये भी अपनी बर्बरता के खुद शिकार हो जायेंगे। इन दमनकारियों को जब दुनिया के सामने और ईश्वर के सामने अपने भाइयों के खून से रंगे हुए दामन के साथ खड़े होने के लिए बाध्य होना पड़ेगा, तब वे अपने-आपको ही दगा देनेवाली इस विनाशक पद्धति से बाज आयेंगे ही।

अमेरिका के नीग्रो लोगों को एक ऐसे आदर्श-बिन्दु तक पहुँचना होगा, जहाँ से वे अपने श्वेतांग भाइयों को गांधी के शब्दों में यह कहेंगे: "कष्ट देने की आपकी शक्ति के मुकाबले हम अपनी कष्ट सहने की शक्ति का प्रयोग करेंगे। आपके दुराग्रह का मुकाबला हम सत्याग्रह से करेंगे। हम आपसे घृणा नहीं करेंगे, लेकिन अपने समस्त अन्तःप्रेरणाओं के साथ हम आपके अन्यायपूर्ण कानूनों का पालन भी नहीं कर सकते। आप हमारे प्रति जो भी करना चाहें, कीजिये, हम फिर भी आपसे प्रेम करेंगे। हमारे घरों पर बम-विस्फोट कीजिये; हमारे बच्चों के लिए खतरा पैदा कीजिये; नकाबपोश हिंसा के दूतों को हमारे मोहल्लों में भेजिये और हमें सड़कों पर मार-पीटकर, अधमरा बनाकर छोड़िये; हम फिर भी आपसे प्रेम करेंगे। किन्तु हम शीघ्र ही अपनी कष्ट-सहिष्णुता की शक्ति से आपको थका देंगे। फिर अपनी स्वाधीनता जीतकर हम इस तरह आपमें चेतना जगायेंगे कि आपके हृदय और चेतना में नया परिवर्तन आ जायगा। इस प्रकार हम दोहरी विजय प्राप्त करेंगे।"

व्यावहारिकता मुझे यह मानने के लिए बाध्य करती है कि वस्तुतः नीग्रो लोगों के लिए अहिंसा का मार्ग कठिन होगा। कुछ लोग इसको साहसहीन मानेंगे और कुछ लोग यह तर्क देंगे कि उनके पास इस प्रकार के अहिंसात्मक प्रदर्शनों में शामिल होने के लिए न तो समय है, न

साहस। जैसा कि श्री ई० फ्रैंकलिन फ्रेजियर ने अपनी पुस्तक 'ब्लैक बुर्जुआ' में लिखा है, बहुत से नीग्रो लोग सम्मान और प्रतिष्ठा के मध्यमवर्गीय संघर्ष में लगे हुए हैं और वे प्रत्यक्ष उपभोग के प्रश्न के प्रति अधिक जागरूक हैं, न कि न्याय का आदर्श प्राप्त करने के लिए। वे शायद अहिंसात्मक आन्दोलन में किये जानेवाले त्याग और बलिदान के मार्ग पर बढ़ने के लिए तैयार नहीं हैं। सौभाग्य से इस पद्धति की सफलता इस बात पर निर्भर नहीं करती कि इसे सभी लोग स्वीकार करें ही। अगर प्रत्येक समुदाय में कुछ नीग्रो लोग अहिंसक तरीके पर चलने के लिए पूरी तरह से तैयार हों, तो वे अन्य सैकड़ों लोगों को इस बात के लिए तैयार कर सकते हैं कि वे अहिंसा को कम-से-कम एक नीति के तौर पर तो अपनायें ही और इस तरह राष्ट्रीय चेतना को जगाने के लिए एक नैतिक शक्ति संगठित कर लें। थोरो भी इसी तरह के कुछ थोड़े-से क्रियाशील लोगों की शक्ति के बारे में सोच रहे थे, जब उन्होंने यह कहा : "मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ कि मॅसाचुसेट्स राज्य में अगर एक हजार भी या एक सौ भी या दस गिने हुए व्यक्ति भी, यहाँ तक कि अगर एक ईमानदार आदमी भी ऐसा हो, जो दासों को रखने से इनकार कर दे, जो सचमुच दासता के साथ की अपनी साझेदारी को समाप्त कर दे और जो इसके लिए जेल जाने के लिए तैयार हो जाय, तो अमेरिका में दासता समाप्त होकर रहेगी। प्रारम्भ चाहे जितना छोटा हो, उसकी चिन्ता नहीं। अगर ठोस तथा वास्तविक रूप से एक बार यह काम प्रारम्भ कर दिया जाय तो सदा-सदा के लिए वह काम हो जायगा।"

महात्मा गांधी के पास भी उनके सिद्धान्तों में सम्पूर्णतया निष्ठावान् लोगों की संख्या सौ से अधिक नहीं थी। लेकिन अपने इन निष्ठावान् अनुयायियों के छोटे-से दल के आधार पर उन्होंने पूरे भारत को हिला दिया। उन्होंने अहिंसा के एक चमत्कारपूर्ण साधन के द्वारा ब्रिटिश साम्राज्यवाद की ताकत को चुनौती दी तथा अपने देश के लोगों के लिए आजादी हासिल की।

अहिंसा की यह पद्धति एक चमत्कार बनकर तत्काल अपना प्रभाव नहीं दिखायेगी। लोगों को अपनी बनी-बनायी मानसिक लीक पर से आसानी से नहीं हटाया जा सकता। उनके पूर्वाग्रहों और संकुचितपूर्ण भावनाओं को झटपट नहीं बदला जा सकता। जब अधिकार-विहीन लोग अपनी स्वतंत्रता के अधिकारों की माँग करते हैं, तब अधिकार-सम्पन्न वर्ग के लोग पहले-पहल कटुता और प्रतिकार की भावना के साथ बन्दरघुड़की दिखाते हैं। यहाँ तक कि जब ये माँगें अहिंसात्मक भाषा में उपस्थित की जाती हैं, तब भी प्रथम प्रतिक्रिया वैसी ही होती है। श्री जवाहरलाल नेहरू ने एक जगह कहा था कि अंग्रेज लोग इतने संतप्त कभी नहीं दिखायी दिये थे, जितने कि उस समय, जब भारतीयों ने अहिंसात्मक साधनों के साथ गुलामी के विरुद्ध आन्दोलन किया था। उन्होंने अंग्रेज सैनिकों की आँखों में इतनी घृणा कभी नहीं देखी, जितनी कि उस समय, जब कि वे एक जगह पर मजबूर खाकर दूसरा गाल आगे कर देने का सिद्धान्त पालन करनेवाले सत्याग्रही ( श्री नेहरू ) को लाठियों से पीट रहे थे। अहिंसात्मक प्रतिकार ने भारतीयों के दिलों और दिमागों को तो कम-से-कम बदल ही दिया, भले ही अंग्रेज लोग कितने भी कठोरता के साथ पेश क्यों न आये हों। "हम अपने भय को समाप्त कर रहे हैं।" —नेहरू ने कहा था। अन्त में अंग्रेजों ने भारत को न केवल आजादी दे दी, बल्कि भारतीयों के प्रति उनमें एक नया सम्मान भी जाग्रत हुआ। आज राष्ट्रमण्डल में समानता के आधार पर रहते हुए ग्रेट ब्रिटेन और भारत में आपसी मित्रता कायम है।

दक्षिण में भी नीग्रो लोगों के आन्दोलन के प्रति गोरे लोगों की प्रारम्भिक प्रतिक्रिया कटुतापूर्ण रही है। मैं यह नहीं कहता कि कुछ ही महीनों में मॉण्टगोमरी में भी इस प्रकार की सुखद समाप्ति हो जायगी। इस सम्बन्ध राजनीतिक स्वतन्त्रता से कहीं अधिक उलझा हुआ मामला है। लेकिन मैं जानता हूँ कि मॉण्टगोमरी के नीग्रो बस-आन्दोलन के कारण ही आज सिर ऊँचा करके सम्मान के साथ चल रहे हैं। मुझे यह

भी उम्मीद है कि पूरे संयुक्त राज्य अमेरिका में नीग्रो लोगों की अगली पीढ़ी के बच्चे अधिक मजबूत होंगे तथा बेहतर ढंग से अपना निर्माण करेंगे; क्योंकि लिटिल रॉक के उन नौ बालकों का इतिहास उनके पीछे रहेगा, जिन्होंने साहस, प्रतिष्ठा और कष्ट-सहिष्णुता का आदर्श उदाहरण प्रस्तुत किया है। इसी तरह से नाशविल, क्लिन्टन और स्टर्जेस जैसे नगरों के बालकों ने भी अपने साहस का इतिहास बनाया है। मुझे विश्वास है कि इस देश के श्वेतांग लोग भी प्रभावित हो रहे हैं। राष्ट्र की चेतना अन्दर ही अन्दर हिल उठी है।

अहिंसक पद्धति से दमनकारियों के दिलों को अविलम्ब नहीं बदला जा सकता। लेकिन इससे उन लोगों के दिलों पर कुछ प्रभाव अवश्य पड़ता है, जो अहिंसा के प्रति निष्ठावान् हैं। इन लोगों को एक नया स्वाभिमान प्राप्त होता है, नयी शक्ति का स्रोत खुलता है और एक ऐसा साहस मिलता है, जिसके बारे में उन्हें मालूम भी नहीं होता कि वह उनके पास पहले से ही था। अन्त में यह अहिंसाविरोधी पक्षवालों की चेतना को भी हिलाती है तथा आपसी मेल-मिलाप एक वास्तविकता बन जाता है।

मैं अहिंसा की पद्धति को अपनाने का सुझाव दे रहा हूँ; क्योंकि मैं समझता हूँ कि हमारी टूटी हुई सामुदायिकता को फिर से स्थापित करने का यही एकमात्र उपाय है। न्यायालय के आदेश एवं संघीय सरकार रंग-समन्वय की प्राप्ति में कल्पनातीत ढंग से मूल्यवान् होगी। लेकिन रंग-समन्वय जरूरी होते हुए भी उस महान् उद्देश्य की प्राप्ति का पहला कदम मात्र है, जिस तक हम पहुँचना चाहते हैं। रंग-समन्वय से कानूनी बाधाएँ टूट जायँगी और मनुष्य ऊपरी तौर पर इकट्ठे भी हो जायँगे, परन्तु हमें कुछ ऐसा करना चाहिए कि जिससे मनुष्यों के दिल और आत्मा को छुआ जा सके, ताकि वे सचमुच इकट्ठे हो जायँ। वे इसलिए इकट्ठे न हों कि यह कानून का आदेश है, बल्कि इसलिए इकट्ठे हों कि यही स्वाभाविक और सही है। दूसरे शब्दों में हम ऐसी एकता प्राप्त करना चाहते

है, जिसमें सभी वर्गों के लोग तथा सभी तरह के व्यक्ति आपसी रहन-सहन में सच्चा ऐक्य अनुभव कर सकें। यह उद्देश्य अहिंसा के द्वारा ही सिद्ध किया जा सकता है; क्योंकि अहिंसा का परिणाम आपसी सम्बन्ध और स्नेहपूर्ण समाज के निर्माण में ही प्रकट होता है।

यह तो स्पष्ट होता ही जा रहा है कि नीग्रो लोगों के सामने कड़कड़े दिन आ रहे हैं। उन्होंने संघीय न्यायालयों में नागरिक अधिकारों के शिखर पर चढ़ने में विजय पायी है, इसलिए उत्तेजना और पूर्वाग्रह से भरे हुए विरोधी और भी प्रतिक्रियावादी बनेंगे। रंगों के रंगभेद को कायम रखनेवाले कानून तथा स्थानीय नियमों के शिखर तो हमारी प्रगति के बीच बाधक बनकर खड़े ही हैं। नीग्रो नेता अभी भी गिरफ्तार किये जाकर नगर के कानूनों के अन्तर्गत परेशान किये जा रहे हैं। उनके घरों पर बम-विस्फोट जारी हैं। राज्य के कानून रंग-सम्बन्ध स्थापित करने में पूरी तरह निश्चित हैं। इस बात को मानते हुए कि कष्ट-सहिष्णुता जरूरी है, मैं प्रार्थना करता हूँ कि नीग्रो लोग इसे एक सद्गुण के रूप में अपना लें। न्याय के लिए कष्टों को सहना अपनी मानवता को परिपूर्ण स्तर तक विकसित करने जैसा है। अगर कोई नीग्रो कटुता से बचना चाहता है, तो उसे वर्तमान पीढ़ी की अग्नि-परीक्षा को देखकर, इससे प्रेरणा लेकर अपने-आपको और अमेरिकन समाज को बदल डालने की चेष्टा करनी चाहिए। अगर उसे आजादी के इस आदर्श को पाने के लिए जेल भी जाना पड़े, तो उसे उसी तरह जेल में चले जाना चाहिए, जैसे कि गांधी ने अपने देशवासियों से कहा था : "जैसे एक दूल्हा अपनी दुल्हिन के कमरे में चला जाता है।" अर्थात् कुछ संकोच, पर महान आशा के साथ।

अहिंसा का मार्ग प्रेम और स्वानुशासन का मार्ग है। हम नीग्रो लोग अपने अधिकारों के बारे में काफी चर्चा करते हैं और यह ठीक भी है। हम गर्व से दावा करते हैं कि समाज का ठोस-भलाई जिसमें रंगीन लोगों से भरा है। हमें इस बात का अवसर मिला है कि हम अपनी पीढ़ी को स्वतन्त्रता का महान् द्वार देख रहे हैं, जो अहिंसा और

अफ्रीका में आकार ले रहा है। यह सब काम ईश्वरीय विधान के अनुसार हो रहे हैं। पर हमें इन सब बातों को सतर्कता के साथ, सही मनोवृत्ति से ग्रहण करना चाहिए। अमेरिका, अफ्रीका तथा एशिया में आजादी हासिल करने के लिए हमें न्याय-व्यवस्था की परवाह किये बिना ही असुविधा से सुविधा की ओर छलाँग नहीं लगा देनी चाहिए। हमें जनतन्त्र को कायम रखना है, न कि एक अन्याय को हटाकर दूसरे अन्याय की स्थापना करनी है। हमारा उद्देश्य श्वेतांग लोगों को हराने का अथवा शर्मिन्दा करने का नहीं होना चाहिए। हमें काले रंग की उत्कृष्टता के गलत सिद्धान्त का शिकार नहीं हो जाना चाहिए। ईश्वर केवल ( काले, भूरे या पीले रंग ) के लोगों की आजादी में ही रुचि नहीं रखता है। उसकी दिलचस्पी तो सम्पूर्ण मानव-वंश की स्वतन्त्रता में है।

अहिंसात्मक पद्धति में उस बहुचर्चित सवाल का उत्तर भी निहित है, जिसमें प्रगति के लिए क्रमशः वाद बनाम अविलम्बता का तर्क उठाया जाता है। एक तरफ तो अहिंसा हमें उस तरह के धीरज से बचाती है, जो निष्क्रियतावाद तथा पलायनवाद को वहन करता है और अन्त में यथास्थितिवाद में ही फँसकर रह जाता है। दूसरी तरफ वह हमें उस तरह की उत्तरदायित्वहीनता से भी बचाती है, जो मेल-मिलाप के स्थान पर भेदभाव को पैदा करती है। वह हमें ऐसे गलत निर्णयों से भी बचाती है, जो सामाजिक उन्नति के नाम पर हम अन्धे होकर ले लेते हैं। अहिंसा इस बात की आवश्यकता को स्वीकार करती है कि हमें न्याय-प्राप्ति की मंजिल तक पहुँचने के लिए आत्मानुशासन और औचित्य के मार्ग से जाना चाहिए। लेकिन साथ ही वह यह भी मानती है कि न्याय की ओर बढ़ने में अगर हम शिथिल होते हैं, तो यह अनैतिक है और अगर हम अन्यायपूर्ण यथास्थिति के ठीकेदारों के सामने घुटने टेककर समर्पण कर देते हैं तो यह भी अनैतिक है। अहिंसा यह मानती है कि समाज-परिवर्तन रातोंरात नहीं हो सकता। परन्तु वह हमें इस तरह काम करने के लिए प्रेरणा देती है, मानो कल सुबह ही क्रान्ति होने की सम्भावना है।

भेद समाप्त होने तक यह सोचकर प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए कि आर्थिक दुर्दशा का कारण रंगभेद ही है; बल्कि तुरन्त ही क्रियाशील होकर आज की स्थिति से अपने-आपको ऊपर उठाना चाहिए।

हमारे भविष्य के रचनात्मक कार्यक्रम में नीग्रो लोगों को मताधिकार दिलाने के आन्दोलन को भी शामिल करना चाहिए। निश्चय ही इसके लिए बहुत-सी बाहरी बाधाओं का सामना करना होगा। दक्षिण में अभी भी सभी तरह के निन्दनीय तथा गुप्त तरीकों द्वारा नीग्रो लोगों को मताधिकार से वंचित करने का प्रयत्न किया जा रहा है। इन तरीकों की सफलता न केवल अन्यायपूर्ण है, बल्कि हमारे उस राष्ट्र के लिए एक गहरा आघात है, जिसे हम दिल से चाहते हैं और जिसकी रक्षा करना हमारा परम कर्तव्य है। अमेरिका के अधिकारियों तथा नेताओं द्वारा यूरोप में जाकर स्वतन्त्र चुनावों की वकालत करना एक पाखण्ड ही है, जब कि खुद अमेरिका के बड़े-बड़े क्षेत्रों में स्वतन्त्र चुनाव का सिद्धान्त नहीं अपनाया गया है।

लेकिन नीग्रो-मताधिकार के लिए यह बाहरी विरोध ही एकमात्र बाधा नहीं है। स्वयं नीग्रो-समाज में जो उदासीनता है, वह भी इस काम को आगे बढ़ाने के रास्ते में एक मुख्य रोड़ा है। जहाँ मतदान-केन्द्र सभी के लिए खुले हुए हैं, वहाँ भी नीग्रो लोगों ने अपने मताधिकार का उपयोग करने में बहुत उपेक्षा दिखायी है। अतः नीग्रो नेताओं की तरफ से इस बात के लिए सतत प्रयत्न चलना चाहिए कि वे लोग नागरिकता के इस उत्तरदायित्व के प्रति अपनी उदासीनता से मुक्त हों। भूतकाल में तो यह उदासीनता एक नैतिक असफलता मात्र थी, परन्तु आज के युग में तो यह आध्यात्मिक और राजनैतिक आत्महत्या के बराबर है।

हमारे भविष्य के रचनात्मक कार्यक्रम में नीग्रो लोगों के व्यक्तित्व का स्तर ऊँचा करने की योजना को भी शामिल करना चाहिए। यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि नीग्रो लोगों का स्तर, जो सामुदायिक रूप से पिछड़ा हुआ है, वह उनकी जन्मजात हीनता नहीं है, बल्कि रंगभेद का ही एक

परिणाम है। नीग्रो-समुदाय में जो अकुशल व्यवहार पाया जाता है, वह आर्थिक दुरवस्था, भावनात्मक असन्तोष या निराशा तथा सामाजिक अलगाव का ही परिणाम है। ये सभी कारण रंगों के आधार पर चलने-वाले भेदभाव में से ही पैदा होते हैं। जब एक रंगीन व्यक्ति यह तर्क देता है कि भेद-भाव चालू रहना चाहिए, क्योंकि नीग्रो लोगों का स्तर बहुत पिछड़ा हुआ है; तब वह यह समझने में असमर्थ रहता है कि यह भेदभाव ही तो उस पिछड़े हुए स्तर का मूल कारण है।

फिर भी नीग्रो लोगों को ईमानदारी के साथ यह स्वीकार करना ही चाहिए कि हमारा स्तर अक्सर पिछड़ा हुआ पाया जाता है। परिपक्व स्तर का एक निश्चित चिह्न तो यह है कि हममें आत्म-समालोचना के बिन्दु तक पहुँचने की क्षमता हो। जब भी हम रंगीन लोगों द्वारा ऐसी आलोचना के पात्र बनें, जो भले ही अर्धसत्य पर ही आधारित हो, हमें उसमें से सत्य अंश को ग्रहण करके उसे अपने समाज के रचनात्मक पुनर्निर्माण का आधार बना लेना चाहिए। हम अन्याय के शिकार हैं, यह तथ्य हमें अपने जीवन को सुधारने की जिम्मेदारी विरहित करके पंगु न बना दे, इस बात से हमें सावधान रहना है।

हमारे समाज में अपराधों की संख्या काफी बड़ी है। साफ-सुथरे रहने का हमारा स्तर बहुत अधिक गिरा हुआ है। हममें से जो लोग मध्यम श्रेणी के हैं, वे अपनी आमदनी से ज्यादा खर्च कर डालते हैं तथा यह खर्च भी अनावश्यक और निरर्थक कामों में कर दिया जाता है। ये लोग ऊँचे आदर्शों के लिए, संस्थाओं के लिए या शैक्षणिक संस्थानों के लिए आर्थिक सहयोग नहीं करते, जब कि इस तरह के कार्यों को धन की नितान्त आवश्यकता रहती है। शोर-गुल से बोलना तथा उत्तेजित हो जाना हमारा स्वभाव बन गया है। हम लोग मद्यपान पर भी बहुत अधिक खर्च करते हैं। हम लोगों में से जो अत्यन्त गरीब हैं, वे भी दस डॉलर वाली बोतल को खरीद लेते हैं तथा अत्यन्त शिक्षित लोग भी अभिमानी हो ही सकते हैं। सांस्कृतिक तथा धार्मिक

संगठनों द्वारा नीग्रो नेताओं को चाहिए कि वे एक ऐसा विधायक कार्यक्रम प्रस्तुत करें, जिससे नीग्रो युवक शहरी जीवन में आसानी से अपने-आपको खपा सकें तथा अपने व्यवहार के स्तर को उन्नत कर सकें। क्योंकि अपराधों का जन्म उपेक्षा और निराशा में से होता है, इसलिए नीग्रो माता-पिताओं को यह बताया जाना चाहिए कि वे अपने बच्चों की तरफ पूरा ध्यान दें, उनसे प्रेम करें और उन्हें यह महसूस करायें कि वे अपने अभिभावकों के वरदहस्त के नीचे हैं। आज हमारे बच्चों को भेद-भाव पर आधारित समाज ने इस सुरक्षा से वंचित कर रखा है। अपने स्तर को उन्नत करके हम प्रगति के एक लम्बे मार्ग को तय कर सकते हैं तथा भेदभाव में विश्वास करनेवालों के तर्कों को खण्डित कर सकते हैं।

हमारा वर्तमान कार्यक्रम यह हो सकता है कि हम सबसे पहले सभी प्रकार के जातीय अन्यायों का अहिंसक प्रतिकार करें। इस प्रतिकार में सभी तरह के ऐसे कानूनों एवं अभ्यासों का प्रतिकार शामिल है, जो राज्य के स्तर पर या स्थानीय स्तर पर जातीय भेदभावों को बढ़ावा देते हैं। इस प्रतिकार का अर्थ जेल जाना भी हो सकता है। हमें इस काम में कल्पनाशील, दृढ़ और रचनात्मक वृत्ति के साथ लगना होगा, ताकि भेद-भाव तथा दासता के कारण उत्पन्न हुई चरित्रहीनता समाप्त हो सके। हमारे घटिया ढंग के स्कूल, गन्दी बस्तियाँ तथा द्वितीय श्रेणी की नागरिकता मिटायी जा सके। अगर प्रतिष्ठा और साहस के साथ अहिंसक आन्दोलन चलाया जाय, जैसा कि मॉण्टगोमरी की जनता ने और लिटिल रॉक के बालकों ने प्रत्यक्ष रूप से करके दिखा दिया है, तो चरित्र-हीनता को समाप्त करने में सहज ही बहुत बड़ी मदद मिलेगी। अगर अमेरिका की चेतना द्वारा लम्बे समय से उपेक्षित जनता की गरीबी, बीमारी तथा अशिक्षा के मोर्चे पर हम डटकर हमला करें, तो हमारी विजय निश्चित ही है।

संक्षेप में कहूँ तो हमें दो मोर्चों पर काम करना चाहिए। एक तो हमें रंगभेद की व्यवस्था का प्रतिकार करना चाहिए, जो हमारे स्तर की

संगठनों द्वारा नीग्रो नेताओं को चाहिए कि वे एक ऐसा विधायक कार्यक्रम प्रस्तुत करें, जिससे नीग्रो युवक शहरी जीवन में आसानी से अपने-आपको खपा सकें तथा अपने व्यवहार के स्तर को उन्नत कर सकें। क्योंकि अपराधों का जन्म उपेक्षा और निराशा में से होता है, इसलिए नीग्रो माता-पिताओं को यह बताया जाना चाहिए कि वे अपने बच्चों की तरफ पूरा ध्यान दें, उनसे प्रेम करें और उन्हें यह महसूस करायें कि वे अपने अभिभावकों के वरदहस्त के नीचे हैं। आज हमारे बच्चों को भेद-भाव पर आधारित समाज ने इस सुरक्षा से वंचित कर रखा है। अपने स्तर को उन्नत करके हम प्रगति के एक लम्बे मार्ग को तय कर सकते हैं तथा भेदभाव में विश्वास करनेवालों के तर्कों को खण्डित कर सकते हैं।

हमारा वर्तमान कार्यक्रम यह हो सकता है कि हम सबसे पहले सभी प्रकार के जातीय अन्यायों का अहिंसक प्रतिकार करें। इस प्रतिकार में सभी तरह के ऐसे कानूनों एवं अभ्यासों का प्रतिकार शामिल है, जो राज्य के स्तर पर या स्थानीय स्तर पर जातीय भेदभावों को बढ़ावा देते हैं। इस प्रतिकार का अर्थ जेल जाना भी हो सकता है। हमें इस काम में कल्पनाशील, दृढ़ और रचनात्मक वृत्ति के साथ लगना होगा, ताकि भेद-भाव तथा दासता के कारण उत्पन्न हुई चरित्रहीनता समाप्त हो सके। हमारे घटिया ढंग के स्कूल, गन्दी बस्तियाँ तथा द्वितीय श्रेणी की नागरिकता मिटायी जा सके। अगर प्रतिष्ठा और साहस के साथ अहिंसक आन्दोलन चलाया जाय, जैसा कि मॉण्टगोमरी की जनता ने और लिटिल रॉक के बालकों ने प्रत्यक्ष रूप से करके दिखा दिया है, तो चरित्र-हीनता को समाप्त करने में सहज ही बहुत बड़ी मदद मिलेगी। अगर अमेरिका की चेतना द्वारा लम्बे समय से उपेक्षित जनता की गरीबी, बीमारी तथा अशिक्षा के मोर्चे पर हम डटकर हमला करें, तो हमारी विजय निश्चित ही है।

संक्षेप में कहूँ तो हमें दो मोर्चों पर काम करना चाहिए। एक तो हमें रंगभेद की व्यवस्था का प्रतिकार करना चाहिए, जो हमारे स्तर को

गिरावट का बुनियादी कारण है। दूसरी ओर, हमें अपने स्तर को ऊँचा उठाने के लिए रचनात्मक कार्यक्रमों का विस्तार करना चाहिए। हमें रंगभेद के मूल कारणों पर हमला करने तथा रंगभेदजनित परिणामों को उखाड़ फेंकने और रचनात्मक सुधारों के बीच तालमेल बैठाना चाहिए।

यह नीग्रो लोगों के लिए एक महान् समय है। इस युग में चुनौती भरी हुई है। किसी महान् आदर्श को चरितार्थ करने में शामिल बनने का सुअवसर इतिहास में किसी किसी पीढ़ी को ही और कदाचित् ही प्राप्त होता है। 'ए स्टडी ऑफ हिस्ट्री' नाम की पुस्तक में श्री अर्नाल्ड टॉयनबी कहते हैं: "हो सकता है कि नीग्रो लोग ही पश्चिम की संस्कृति को एक आध्यात्मिक तेज प्रदान करें; क्योंकि इस समय ऐसा तेज पश्चिमी संस्कृति के बचाव के लिए बेहद जरूरी है।" मुझे आशा है कि श्री टॉयनबी जो कुछ कह रहे हैं, वह सम्भव है। वह आध्यात्मिक शक्ति, जिसे नीग्रो लोग संसार को दे सकते हैं, प्रेम, ममता, सज्जनता और अहिंसा में से पैदा होती है। यहाँ तक कि अहिंसा पर दृढ़ रहने के कारण नीग्रो लोगों द्वारा दुनिया के राष्ट्रों को ऐसी चुनौती देना भी सम्भव हो सकता है, जिससे वे शस्त्र युद्ध तथा संहार के विकल्प की खोज करें। एक ऐसे युग में, जब कि सम्पूर्ण बाह्य अन्तरिक्ष में स्पुतनिक तथा एक्सप्लोरर घूम रहे हों, एक ऐसे युग में, जब कि 'बैलिस्टिक मिसाइल्स' चारों ओर मौत का रास्ता खुला रहे हों, तब कोई भी राष्ट्र युद्ध में विजय प्राप्त नहीं कर सकता। अब हमारे सामने हिंसा और अहिंसा के बीच चुनाव करने का कोई अवसर नहीं है। अब या तो अहिंसा को अपनाना होगा या सर्वनाश को। हो सकता है कि नीग्रो लोग इस देश में अपने विकास को और बढ़ाते हुए इस युग में ईश्वरीय सन्देश के वाहक बनें। फलस्वरूप वह पुकार इन शब्दों में हमें सावधान कर रही है: "वे सब, जो अपने हाथों में तलवार उठाएँगे, तलवार के द्वारा ही नष्ट हो जाएँगे।"